

# साध्वाचार के सूत्र



सं :- मुनि रजनीश कुमार

# साध्वाचार के सूत्र



जैन विश्व भारती प्रकाशन

# साध्वाचार के सूत्र

संकलन/संपादन  
मुनि रजनीश कुमार

**प्रकाशक :** जैन विश्व भारती

पोस्ट : लाडनूं-३४१३०६

जिला : नागौर (राज.)

फोन नं. : (०१५८१) २२२०८०/२२४६७१

ई-मेल : jainvishvabharati@yahoo.com

© जैन विश्व भारती, लाडनूं

सौजन्य : साधार्मिक बन्धु

द्वितीय संस्करण : २०११

मूल्य : ७०/- (सत्तर रूपया मात्र)

मुद्रक : पायोराईट प्रिन्ट मीडिया प्रा. लि., उदयपुर ०२६४-२४१८४८२

## आशीर्वचन

भगवान महावीर ने धर्म के दो प्रकार बतलाए—अगार धर्म और अनगार धर्म। प्रस्तुत पुस्तक में मुख्यतया अनगार धर्म की चर्चा की गई है। साधु और गृहस्थ का गहरा संबंध है इसलिए स्थानांग सूत्र में गृहस्थ को निश्रास्थान बतलाया गया है।

भंवरा थोड़ा-थोड़ा लेकर अपना काम चलाता है और पुष्प को भी कोई कष्ट नहीं देता। साधु की आहार चर्या भ्रमरवत बतलाई गई है। प्रस्तुत पुस्तक में उस विधि की जानकारी प्राप्त है।

मुनि रजनीश कुमारजी ने साधु-चर्या के विषयों का अध्ययन किया है। प्रस्तुत पुस्तक में उन्होंने साध्वाचार से संबद्ध अनेक विषयों की संयोजना की है। विश्वास है कि इस पुस्तक से पाठक को साधु-चर्या के विषय में अच्छी जानकारी मिलेगी।

अणुविभा केन्द्र, जयपुर  
१२ जुलाई २००८

आचार्य महाप्रज्ञ



## शुभाशंसा

आचार जीवन की अमूल्य सम्पदा होती है। हर आदमी को उससे सम्पन्न होना चाहिए। साधु को तो विशेष रूप से आचार के प्रति निष्ठावान होना चाहिए। साध्वाचार की जानकारी साधुओं और गृहस्थों दोनों को होनी चाहिए, यह महती अपेक्षा है।

मुनि रजनीशकुमारजी एक कर्मठ संत हैं। वे सेवा-धर्म की आराधना में भी संलग्न हैं। उसके साथ-साथ ज्ञानाराधना भी कर रहे हैं। उनके द्वारा प्रस्तुत की गई 'साध्वाचार के सूत्र' पुस्तक उपयोगी है, श्रावक समाज के लिए विशेषतया पठनीय है। इससे पाठकों का ज्ञान वृद्धिगत व पुष्ट हो सकेगा। मंगलकामना।

अणुविभा केन्द्र, जयपुर  
११ जुलाई २००८

आचार्य महाश्रमण





## प्रस्तावना

जैन धर्म का यथार्थ और व्यापक ज्ञान करने के लिए साध्वाचार और श्रावकाचार की आचार प्रणाली का ज्ञान करना जरूरी है। दोनों का गहरा संबंध है। साध्वाचार का ज्ञान करने से एक सीमा तक श्रावकाचार का ज्ञान हो सकता है। इसी प्रकार श्रावकाचार का ज्ञान करने से साध्वाचार की प्रारंभिक भूमिका का ज्ञान हो सकता है। इस पुस्तक में प्रश्नोत्तर की शैली में साध्वाचार का सुन्दर विवेचन किया गया है।

पांच महाव्रत की साधना साध्वाचार का प्राण तत्त्व है। पांच महाव्रतों की साधना के लिए आठ प्रवचन माता की आराधना जरूरी है। जिस प्रकार मां बच्चे की सार-संभाल रखती है तथा उसकी सुरक्षा के प्रति निरन्तर जागरूक रहती है। जैन साधु के लिए आठ प्रवचन माता की भी वही भूमिका है इसलिए इनको मां कहा गया है।

जब मुझे दीक्षा लिए लगभग डेढ़ वर्ष का समय हुआ तब तत्कालीन साध्वीप्रमुखाश्री लाडाजी ने मुझसे अचानक प्रश्न किया—साधु के मां कितनी होती है। यह सुनकर एक बार मैं अवाक् हो गया। थोड़ी ही देर में गुरुदेव श्री तुलसी द्वारा निर्मित निम्नलिखित पद्य मेरे स्मृति पटल पर उभर आया—

है आरूं ही प्रवचन माता,  
जो रहसी आरैं सुखसाता।  
तो नहिं होसी कोई दुखदाता ॥

इसके आधार पर मैंने उत्तर दिया—साधु के आठ मां होती हैं।

साधु अचित्त भोजी होता है। वह भिक्षा में अचित्त भोजन ही ग्रहण करता है। इसके लिए श्रावक को सचित्त-अचित्त का ज्ञान होना जरूरी है। आजकल बहुत से श्रावक सचित्त-अचित्त की परिभाषा से बिल्कुल

अनभिज्ञ हैं। एक परिवार में भिक्षा के लिए जाना हुआ। वहां भिक्षा लेते समय मैंने दो-तीन बार पूछा—सचित्त वस्तु का संघट्टा तो नहीं है? परिवार के सदस्यों ने कहा—आप क्या कहते हैं? हम समझे नहीं। तब मैंने उनको सचित्त-अचित्त की परिभाषा समझाई।

प्रस्तुत पुस्तक के प्रथम प्रकरण में महाव्रत, दूसरे प्रकरण में आठ प्रवचन माता, १६वें प्रकरण में सचित्त-अचित्त तथा १७वें प्रकरण में सूझते-असूझते का सुन्दर और सुगम वर्णन किया गया है। इसी प्रकार प्रतिक्रमण, प्रत्याख्यान, आलोचना, कल्प, शय्यातर, भण्ड-उपकरण तथा प्रातिहारिक आदि प्रकरणों में साध्वाचार से संबंधित विषयों का अच्छा विवेचन है।

इन वर्षों में इन विषयों पर बहुत कम लिखा गया है। मुनि रजनीश कुमारजी ने गहरा अध्ययन कर साध्वाचार से संबंधित सभी प्रमुख विषयों का संकलन किया है। इसके लिए वे बधाई के पात्र हैं। इस पुस्तक के द्वारा एक अभाव की पूर्ति होगी, ऐसा मेरा विश्वास है।

१२ जुलाई २००८  
अणुविभा केन्द्र (जयपुर)

मुनि राकेश कुमार

## निराकांक्ष-कांक्षा

श्री गुरुवर! वरदान दीजिए,  
विनयी खड़ा विनेय! ज्ञेय! अज्ञेय-ज्ञेय अवदान दीजिए,  
श्री गुरुवर! वरदान दीजिए॥

‘समणोऽहं’ ‘समणोऽहं’ की धुन मेरे कण-कण में रम जाए,  
चर्या भाव-क्रिया बने विक्रिया, विकल्प सहज थम जाए,  
संयम सुरभित शासन पावन नन्दन वन सावन सरसाए,  
आज्ञा, अनुशासन जीवन-धन, जन-जन कली-कली विकसाए,  
हम सब सौरभमय बन जाएं ऐसा मंत्र-विधान दीजिए,  
श्री गुरुवर! वरदान दीजिए॥

पांच महाव्रत पांच समिति में जागृत अविकल कुशल बनूं मैं,  
तीन गुप्ति आराधूं, साधूं वीतराग कल अकल बनूं मैं,  
लोच, गोचरी, वस्त्र-पात्र, उपकरण-याचना, प्रतिलेखन में,  
प्रतिक्रमण विधियुक्त प्रमार्जन, जल-गालन, रक्षण-सेवन में,  
स्थविर, ग्लान, रुग्ण-सेवा में व्यान-वायु मय प्राण दीजिए,  
श्री गुरुवर! वरदान दीजिए॥

क्या सचित्त? क्या है अचित्त? क्या कल्पाकल्प ज्ञान हो जाए,  
परम्परा, व्यवहार, धारणा, विधि-उत्सर्ग भान हो जाए,  
‘साध्वाचार-सूत्र-संग्रह’ यह श्री चरणों में भेंट चढ़ाऊं,  
चढ़ूं शिखर पर, पढ़ूं संघ को, बढ़ूं, गढ़ूं इतिहास सझाऊं,  
मांग रहा आशीष शिष्य ‘रजनीश’ सिद्ध संधान दीजिए,  
श्री गुरुवर! वरदान दीजिए॥

अणुविभा केन्द्र, जयपुर

मुनि रजनीश

१२ जुलाई २००८



## संपादकीय

अध्यात्म की दृष्टि में पूज्य वही है, जिसका आचरण श्रेष्ठ है। साधु के प्रति पूज्यता का भाव इसीलिए होता है कि वह चरित्र से उन्नत होता है। पूजा चरित्र की होती है, सदाचार की होती है। आचार और चरित्र शून्य व्यक्ति के प्रति कभी आस्था का जन्म नहीं होता।

साधु वही है, जिसमें साधुता है, आचरण की श्रेष्ठता है। जैन साधु की एक विशिष्ट पहचान है आचार के संदर्भ में। जैन साधु-चर्या का जैन आगमों में विशद विवरण उपलब्ध है। साध्वाचार से जनता भी परिचित बने, इस दृष्टि से उसको जन-भाषा हिन्दी में प्रस्तुत करने की अपेक्षा महसूस हुई। प्रस्तुत पुस्तक 'साध्वाचार के सूत्र' इस दिशा में एक विनम्र प्रयत्न है। प्रस्तुत सामग्री के संकलन में आगमों के अतिरिक्त चरित्रप्रकाश आदि ग्रंथों का विशेष उपयोग किया है।

पूज्यवर का अनुग्रह एवं आशीर्वाद मेरे जीवन की अनमोल निधि है। उनके आशीर्वाद से ही मैं जीवन में यत्किञ्चित् कर पाया हूँ। प्रस्तुत संकलन की इस रूप में प्रस्तुति में अनेक मुनिजनों का सहकार मिला है।

पुनरीक्षण आदि में मुनिश्री कुलदीपकुमारजी एवं मुनिश्री हिमांशुकुमारजी का पूरा योग रहा। मुनिश्री धनंजयकुमारजी ने प्रस्तुत कृति के परिष्कार में अपने बहुमूल्य क्षण लगाए हैं।

साध्वाचार से संबद्ध इस कृति से पाठक वर्ग को साधु-चर्या एवं आचार की व्यवस्थित जानकारी मिल सकेगी, ऐसा विश्वास है।

१२ अगस्त २००८

अणुविभा केन्द्र (जयपुर)

मुनि रजनीश कुमार



## अनुक्रम

१. महाव्रत प्रकरण	१
२. प्रवचन-माता प्रकरण	११
३. साधु प्रकरण	२१
४. लोच प्रकरण	६६
५. दीक्षार्थी प्रकरण	६७
६. प्रतिक्रमण प्रकरण	७१
७. प्रत्याख्यान प्रकरण	७६
८. आलोचना प्रकरण	७९
९. चातुर्मास प्रकरण	८४
१०. प्रवास प्रकरण	८७
११. विहार प्रकरण	८९
१२. आशातना प्रकरण	९४
१३. गण प्रकरण	९६
१४. कल्प प्रकरण	१०७
१५. गोचरी प्रकरण	११५
१६. सचित्त-अचित्त प्रकरण	१२९
१७. सूझता असूझता प्रकरण	१३५
१८. शय्यातर प्रकरण	१३८
१९. लब्धि, प्रतिमा प्रकरण	१३९



२०. व्यवहार प्रकरण	१४८
२१. चिकित्सा प्रकरण	१५१
२२. वस्त्र प्रकरण	१५३
२३. पात्र आदि भण्ड उपकरण प्रकरण	१५६
२४. प्रतिलेखन प्रकरण	१६१
२५. प्रातिहारिक प्रकरण	१६५

## १. महाव्रत प्रकरण

प्रश्न १. चारित्रधर्म के कितने प्रकार है ?

उत्तर—दो प्रकार हैं<sup>१</sup>—अगारचारित्रधर्म और अनगारचारित्रधर्म।

प्रश्न २. अगार चारित्र धर्म और अनगार चारित्र धर्म से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर—अगारचारित्रधर्म गृहस्थ के लिए होता है। इसमें गृहस्थ बारहव्रत (पांच अणुव्रत, तीन गुणव्रत एवं चार शिक्षाव्रत) धारण करते हुए यथाशक्ति सावद्य-योग का त्याग करता है। अनगारचारित्रधर्म महाव्रतधारी साधुओं के होता है। तीन करण-तीन योग से सर्वसावद्ययोग का त्याग करना—अनगार चारित्र धर्म है।

प्रश्न ३. महाव्रत का स्वरूप क्या है ?

उत्तर—अणुव्रत की अपेक्षा ये व्रत महान् (बड़े) हैं अतः इनको महाव्रत कहते हैं। महाव्रत पांच हैं<sup>२</sup>—१. सर्वथा प्राणाति-पातविरमण, २. सर्वथा मृषावाद-विरमण, ३. सर्वथा अदत्ता-दानविरमण, ४. सर्वथा अब्रह्मचर्यविरमण, ५. सर्वथा परिग्रहविरमण।

प्रश्न ४. साधु के महाव्रत कितने होते हैं ?

उत्तर—भरत, ऐरावत क्षेत्र में प्रथम और अन्तिम तीर्थकर के समय महाव्रत पांच होते हैं। महाविदेह-क्षेत्र में तथा शेष बाईस तीर्थकरों के समय महाव्रत चार ही होते हैं।<sup>३</sup> यथा—१. सर्व प्राणातिपात विरमण, २. सर्व मृषावाद विरमण, ३. सर्व अदत्तादान विरमण, ४. सर्व परिग्रह विरमण। जहां चार महाव्रत का विधान है वहां चौथे ब्रह्मचर्य महाव्रत का अपरिग्रह महाव्रत में समावेश होता है।

प्रश्न ५. महाव्रतों में चार एवं पांच का फर्क क्यों रखा गया ?

उत्तर—प्रथम तीर्थकर के साधु ऋजु-जड़ अर्थात् सरल होते हैं। यदि चार महाव्रत

१. स्थानांग २/१०६

३. स्थानांग ४/१३६-१३७

२. वही, ५/१

रखे जायें तो वे सरलतावश गलती कर लें, ऐसा संभव है। चौबीसवें तीर्थंकर के साधु वक्रजड़-वक्रतायुक्त जड़ता करने वाले—जान-बूझकर कुतर्क करने वाले होते हैं। उनके यदि चार महाव्रत हों तो संभव है—वे कुतर्क निकालकर स्खलना करने लगें। बाईस तीर्थंकरों एवं महाविदेह-क्षेत्र के साधु ऋजु-प्राज्ञ अर्थात् सरलतायुक्त विचक्षण होते हैं अतः वे प्रायः स्खलना नहीं करते। इन सभी तत्त्वों को सोचकर पांच एवं चार महाव्रत रखे गये हैं।<sup>१</sup>

**प्रश्न ६. क्या तीन महाव्रत का भी विधान है ?**

**उत्तर—**हां! आगम में भगवान महावीर ने तीन 'याम' कहे हैं<sup>२</sup>—अहिंसा, सत्य और अपरिग्रह। तीसरे-चौथे का पांचवें में समावेश किया गया है। याम शब्द का भावार्थ व्रत है। योगदर्शन में अहिंसा आदि को यम कहा है एवं ये ही जाति, देश, काल समय के अपवाद से रहित हों (इनमें किसी भी परिस्थितिवश छूट न ली जाए) तो ये ही पांचों महाव्रत हैं, ऐसा माना है।<sup>३</sup>

**प्रश्न ७. मुनि महाव्रतों को कितने करण और योग से स्वीकार करते हैं ?**

**उत्तर—**तीन करण और तीन योग से।

**प्रश्न ८. अहिंसा महाव्रत किसे कहते हैं ?**

**उत्तर—**सर्वथा प्राणातिपातविरमण (जीवहिंसा-निवृत्ति) महाव्रत में साधु प्रमादवश सूक्ष्म-बादर एवं त्रस-स्थावर सभी प्रकार के जीवों की हिंसा का प्रत्याख्यान करते हैं।

**प्रश्न ९. सत्य महाव्रत क्या है ?**

**उत्तर—**क्रोध-लोभ-भय-हास्य आदि किसी भी कारणवश मृषावाद (असत्य) का यावज्जीवन के लिए तीनकरण-तीनयोग से त्याग करना सत्य महाव्रत है।

**प्रश्न १०. अचौर्य महाव्रत से क्या तात्पर्य है ?**

**उत्तर—**सर्वथा-अदत्तादानविरमण महाव्रत में साधु गांव-नगर जंगल में कहीं भी कोई वस्तु (चाहे वह अल्पमूल्य हो, बहुमूल्य हो, छोटी हो, बड़ी हो तथा सचित्त हो या अचित्त हो) स्वामी की आज्ञा के बिना लेने का जीवन भर के लिए तीन करण-तीन योग से त्याग करते हैं। और तो क्या? दांत साफ करने के लिए तिनका भी बिना आज्ञा के नहीं ले सकते।<sup>४</sup> बिना आज्ञा तिनका लेने से अचौर्य महाव्रत की विराधना होती है।

१. उत्तरा. २३/३६

२. आचारांग ८/१

३. पातंजलयोगदर्शन २/३०-३१

४. दसवे. ६/१३-१४

**प्रश्न ११. अदत्त कितने प्रकार का होता है ?**

उत्तर—अदत्त चार प्रकार का माना जाता है—

१. स्वामि-अदत्त—स्वामी की आज्ञा के बिना वस्तु ग्रहण करना ।
२. जीव-अदत्त—स्वामी के देने पर भी वस्तु के अधिष्ठाता की अनुमति के बिना ग्रहण करना ।
३. तीर्थकर-अदत्त—तीर्थकर द्वारा निषिद्ध प्रवृत्ति करना ।
४. गुरु-अदत्त—निर्दोषविधि से प्राप्त आहार आदि में भी (आज्ञा लिए बिना भोगना) गुरु द्वारा निषिद्ध प्रवृत्ति करना ।

**प्रश्न १२. साधु जंगलादि में से तृण-धूल आदि किसकी आज्ञा से लेते हैं ?**

उत्तर—देवेन्द्र की आज्ञा से लेते हैं। शास्त्र में पांच प्रकार के अवग्रह कहे हैं—

१. देवेन्द्रावग्रह, २. राजावग्रह, ३. गृहपति अवग्रह, ४. गृहस्थ सागारी-अवग्रह ५. साधर्मिकावग्रह । (अवग्रह का अर्थ आज्ञा है) ।

**प्रश्न १३. क्या सभी साधुओं के लिए यही विधान है ?**

उत्तर—हां सभी के लिए यही विधान है—भरत क्षेत्र में साधु को वहां जंगलादि स्थानों में कोई व्यक्ति आज्ञा देने वाला न हो, बैठते समय, परिष्ठापन करते समय एवं तृण-धूलादि वस्तु लेते समय 'अणुजाणह! जस्स उग्गहं।' (जिसका अवग्रह है, वह मुझे आज्ञा दे) यह पाठ बोलकर शक्रेन्द्र की आज्ञा ली जाती है ।

**प्रश्न १४. ब्रह्मचर्य महाव्रत क्या है ?**

उत्तर—देव-मनुष्य एवं तिर्यच-संबंधी अब्रह्मचर्य का यावज्जीवन तीनकरण-तीनयोग से त्याग करना ब्रह्मचर्य महाव्रत है ।

**प्रश्न १५. ब्रह्मचर्यव्रत की रक्षा के लिए साधु को और क्या करना चाहिए ?**

उत्तर—निम्नोक्त दस नियमों का सजगतापूर्वक पालन करना चाहिए—

१. शुद्धस्थान-सेवन—स्त्री-पशु-नपुंसकों से रहित स्थान में रहना ।
२. स्त्रीकथा-वर्जन—कामरस को पैदा करने वाली स्त्रियों की कथा न करना ।
३. एकासन-त्याग—जहां स्त्री बैठी हो वहां अंतर्मुहूर्त तक न बैठना । (बैठना पड़े तो पूंजकर बैठने की विधि है)

४. दर्शन-निषेध—वासना की दृष्टि से स्त्री के अंग-प्रत्यंगों को नहीं देखना।
५. श्रवण-निषेध—स्त्री-पुरुष की काम क्रीड़ा के समय के विकारोत्पादक शब्द नहीं सुनना। भीत एवं पर्दा आदि के अंतर से भी जहां ऐसे शब्द सुनाई दें, वहां नहीं ठहरना।
६. स्मरण-वर्जन—पूर्व अवस्था में की हुई काम-क्रीड़ा का स्मरण नहीं करना।
७. सरसआहार-त्याग—विकार उत्पन्न करने वाले सरस-भोजन का त्याग करना।
८. अतिआहार-निषेध—साधारण आहार (भोजन) भी मात्रा से अधिक नहीं करना।
९. विभूषा-परित्याग—स्नान-विलेपन-तिलकादि द्वारा शरीर को विभूषित नहीं करना।
१०. शब्दादि-त्याग—विकारोत्पादक शब्द, रूप, गंध, रस एवं स्पर्श में आसक्त नहीं बनना।

इन दश नियमों की साधना ब्रह्मचर्य की रक्षा में सहायक होती है। इन्हें ब्रह्मचर्य के दस समाधिस्थान भी कहा गया है तथा ब्रह्मचर्य की नव गुप्ति (बाड़) एवं दसवां कोट भी माना गया है।

**प्रश्न १६. अपरिग्रह महाव्रत किसे कहते हैं ?**

उत्तर—अल्प मूल्य, बहुमूल्य, स्थूल-सूक्ष्म एवं सचित्त-अचित्त आदि समस्त परिग्रह का जीवनभर के लिए तीन करण-तीन योग से त्याग करना अपरिग्रह महाव्रत है।

किसी भी वस्तु में मूर्च्छा—आसक्ति का होना परिग्रह है। वस्तुएं दो प्रकार की होती हैं—बाह्य और आभ्यन्तर। दोनों प्रकार की वस्तुओं में जीव की आसक्ति होती है अतः परिग्रह के भी दो भेद हो गये—बाह्य-परिग्रह एवं आभ्यन्तर-परिग्रह।

**प्रश्न १७. बाह्य-परिग्रह कितने प्रकार का होता है ?**

उत्तर—नव प्रकार का होता है—१. क्षेत्र—खुली-जमीन। २. वास्तु—ढकी-जमीन (घर-हाट आदि)। ३. हिरण्य—चांदी। ४. सुवर्ण—सोना। ५. धन—जवाहरात या नकद धन। ६. धान्य—सभी प्रकार के धान्य एवं खाद्य

पदार्थ। ७. द्विपद—दो पैर वाले दास-दासी या तोता-मैना आदि पक्षी।  
 ८. चतुष्पद—चार पैरों वाले हाथी-घोड़ा-ऊंट-बैल आदि। ९. कुप्य—धातु  
 के बर्तन एवं सभी प्रकार के उपयोगी उपकरण। ये सब बाह्य परिग्रह माने  
 जाते हैं। बाह्य परिग्रह के दस प्रकार भी उपलब्ध होते हैं—१. क्षेत्र २.  
 वास्तु ३. धन ४. धान्य ५. ज्ञातिजनों का सहयोग ६. यान ७. शयन ८.  
 आसन ९. दास-दासी १०. कुप्य।

**प्रश्न १८. आभ्यन्तर-परिग्रह कितने प्रकार का होता है ?**

उत्तर—आभ्यन्तर-परिग्रह के चौदह प्रकार हैं—१. हास्य-विनोद, २. रति-  
 असंयम में अनुराग, ३. अरति—संयम में उदासीनता, ४. भय, ५. शोक,  
 ६. जुगुप्सा-घृणा, ७. क्रोध, ८. मान, ९. माया, १०. लोभ, ११. वेद  
 अर्थात् विकार, १२. राग, १३. द्वेष, १४. मिथ्यात्व।

**प्रश्न १९. साधु के वस्त्र-पात्र आदि उपकरण क्या परिग्रह नहीं हैं? साधु  
 इन्हें कैसे रख सकते हैं ?**

उत्तर—शास्त्र का मंतव्य है कि संयम-लज्जा की रक्षा के लिए साधु जो वस्त्र-  
 पात्रादि रखते हैं, वह परिग्रह नहीं है। यदि मूर्च्छा की भावना आ जाए तो  
 परिग्रह दोष लग जाता है। वास्तव में मूर्च्छा ही परिग्रह है।<sup>१</sup> मूर्च्छा का  
 निमित्त होने से शरीर को भी परिग्रह कहा गया है। अतः मुनि अपने शरीर  
 के प्रति भी ममत्व न रखे।<sup>२</sup>

**प्रश्न २०. रात्रिभोजनविरमण-व्रत से क्या अभिप्राय है ?**

उत्तर—सर्वथा रात्रिभोजनविरमण व्रत की साधना है—चारों प्रकार के आहार  
 (अशन-पान-खादिम-स्वादिम) का रात्री में उपभोग न करना, न करवाना  
 और न करते हुए का अनुमोदन करना।<sup>३</sup>

**प्रश्न २१. पांच महाव्रत की पच्चीस भावनाएं कौन-कौनसी हैं ?**

उत्तर—महाव्रतों को पुष्ट रखने के लिए मन, वचन और काया की विशेष शुद्ध  
 प्रवृत्ति का नाम भावना है। जैसे—भावनाओं के द्वारा औषधि विशेष  
 शक्तिशाली हो जाती है, उसी प्रकार भावना के प्रयोग से महाव्रतों का  
 पालन भी अधिकाधिक शुद्ध होने लगता है। प्रत्येक महाव्रत की पांच-  
 पांच भावनाएं निर्दिष्ट की गई हैं।<sup>४</sup>

१. बृहत्कल्पभाष्य उद्देशक १ सूत्र १ भाष्य  
 गाथा ८३१

२. दसवे. ६/१६-२०

३. दसवे. ६/२१

४. दसवे. ४/१६, ६/२५

५. समवायांग २५/१, आचा. चूला अ.  
 १५/४४ से ७६

### १. अहिंसा महाव्रत को पांच भावनाएं—

१. ईर्या समिति—गमन क्रिया में जागरूकता।
२. मनोगुप्ति—अकुशल मन का निरोध।
३. वचन गुप्ति—अकुशल वाणी का निरोध।
४. आलोक-भाजनभोजन—चौड़े मुंह वाले पात्र में भोजन करना।
५. आदानभांडामत्रनिक्षेपणासमिति—वस्त्र, पात्र आदि उपकरणों को लेने-रखने में विधि का ध्यान रखना।

### २. सत्य महाव्रत की पांच भावनाएं—

१. अनुवीचि भाषणता—चिन्तनपूर्वक विधिवत् बोलना।
२. क्रोधविवेक—क्रोध का परिहार।
३. लोभविवेक—लोभ का परिहार।
४. भयविवेक—भय का परिहार।
५. हास्यविवेक—हास्य का परिहार।

### ३. अचौर्य महाव्रत की पांच भावनाएं—

१. अवग्रह अनुज्ञापन—स्थान के लिए गृहस्वामी से आज्ञा लेना।
२. अवग्रह सीमाज्ञान—गृहस्वामी द्वारा अनुज्ञात स्थान की सीमा को जानना।
३. स्वयमेव अवग्रह अनुज्ञापन—अनुज्ञात स्थान में रहना।
४. साधर्मिक अवग्रह अनुज्ञाप्य परिभोग—साधर्मिकों द्वारा याचित स्थान में उनकी आज्ञा से रहना।
५. साधारण भक्तपान अनुज्ञाप्य परिभोग—समुच्चय के आहार-पानी आदि का आचार्य की आज्ञा से परिभोग करना।

### ४. ब्रह्मचर्य महाव्रत की पांच भावनाएं—

१. स्त्री, पशु और नपुंसक से आकीर्ण स्थान में नहीं रहना।
२. कामकथा का वर्जन करना।
३. वासना को उत्तेजित करने वाली इन्द्रियों के अवलोकन का वर्जन करना।
४. पूर्वभुक्त और पूर्वक्रीडित कामभोगों की स्मृति का वर्जन करना।
५. प्रणीत—गरिष्ठ भाजन का वर्जन करना।

**५. अपरिग्रह महाव्रत की पांच भावनाएं—**

१. श्रोत्रेन्द्रिय के राग से उपरत होना।
२. चक्षुःइन्द्रिय के राग से उपरत होना।
३. घ्राणेन्द्रिय के राग से उपरत होना।
४. रसनेन्द्रिय के राग से उपरत होना।
५. स्पर्शेन्द्रिय के राग से उपरत होना।<sup>१</sup>

**प्रश्न २२. मूलगुण-उत्तरगुण का अर्थ क्या है ?**

उत्तर—चारित्ररूपवृक्ष के जो मूल (जड़) के समान हों, वे मूलगुण कहलाते हैं। साधुओं के लिए पांच महाव्रत एवं श्रावकों के लिए पांच अणुव्रत मूल गुण हैं। चारित्ररूप वृक्ष की शाखा-प्रशाखावत् जो गुण हैं, वे उत्तर गुण कहलाते हैं। मूल गुण की सुरक्षा के लिए उत्तर गुण की आराधना की जाती है। साधुओं के लिए पिण्डविशुद्धि, समिति, भावना, तप, प्रतिमा, अभिग्रह आदि और श्रावकों के लिए दिशाव्रत आदि उत्तर गुण हैं।<sup>२</sup> महाव्रत-अणुव्रत को मूलगुण-प्रत्याख्यान एवं दशपच्चक्खाण, दिशाव्रत आदि को उत्तर गुण-प्रत्याख्यान कहा है।

**प्रश्न २३. अतिक्रम-व्यतिक्रम आदि से क्या तात्पर्य है ?**

उत्तर—स्वीकृत महाव्रतों एवं व्रतों को दूषित करने के चार हेतु हैं—१. अतिक्रम—व्रतों को भंग करने का संकल्प या व्रतभंग करने वाले कार्य का अनुमोदन। २. व्यतिक्रम—व्रतभंग करने के लिए उद्यत होना। ३. अतिचार—व्रतभंग करने के लिए सामग्री जुटाना ४. अनाचार<sup>३</sup>—व्रत का सर्वथा भंग कर देना।

**प्रश्न २४. अनाचार कितने हैं ?**

उत्तर—अनाचार बावन हैं।<sup>४</sup>

**प्रश्न २५. बावन अनाचार कौन-कौन-से हैं ?**

उत्तर— १. औद्देशिक—साधु के उद्देश्य से बनाया हुआ आहारादि लेना।  
 २. क्रीतकृत—साधु के लिए खरीद कर तैयार की हुई वस्तु लेना।  
 ३. नित्याग्र—आदरपूर्वक निमंत्रित कर प्रतिदिन दिया जाने वाला आहारादि लेना।  
 ४. अभ्याहृत—सामने लाया हुआ (तीन घर उपरान्त) आहारादि लेना।

१. समवाओ २५/१

२. भगवती ७/२

३. आवश्यक ४/११ सज्जायादि अइयार-पडिक्कण सुत्तं

४. दसवे. ३/२ से ६ तक



५. रात्रिभक्त—रात को आहार लेना एवं खाना ।
६. स्नान—देश स्नान या सर्व स्नान करना ।
७. गंध—सुगंधित इत्र आदि का विलेपन करना ।
८. माल्य—फूलों की माला धारण करना ।
९. बीजन—पंखे आदि से हवा लेना ।
१०. सन्निधि—खाने-पीने की चीजों का संग्रह करना अर्थात् रातवासी रखना ।
११. गृहि-अमत्र—गृहस्थ के पात्र (थाली आदि) में भोजन करना ।
१२. राजपिण्ड—मूर्धाभिषिक्त राजा का (राज्याभिषेक के समय)आहारादि लेना ।
१३. किमिच्छक—कौन क्या चाहता है? ऐसे पूछ कर दिया जाने वाला (दानशाला का) आहारादि लेना ।
१५. संबाधन—विशेष कारण के बिना तेलादि का मर्दन करना ।
१६. संप्रच्छन—गृहस्थ को कुशल (साता) पूछना ।
१७. देहप्रलोकन—तेल, पानी या दर्पण में शरीर देखना ।
१८. अष्टापद—शतरंज खेलना ।
१९. नालिका—जूआ खेलना ।
२०. छत्र—वर्षा एवं आतप से बचने के लिए छत्र धारण करना । (स्थविर साधु को विशेष आज्ञा है ।)
२१. चैकित्स्य—अपनी सावद्य-चिकित्सा करना एवं किसी दूसरे से करवाना अनाचार है । (जिनकल्पिक साधु चिकित्सा मात्र नहीं कर सकते)।
२२. उपानत्—जूता पहनना । स्थविर या रोगी साधु पादरक्षा के लिए चर्मखण्ड आदि रख सकते हैं ।
२३. ज्योतिःसमारम्भ—किसी भी प्रकार का अग्नि का आरम्भ करना ।
२४. शय्यातरपिण्ड—शय्यातर का आहारादि लेना ।
२५. आसन्दी-पल्यंभ—आसन्दी (बेंत आदि के आसन), पलंग-खाट आदि पर (जिनकी पडिलेहणा अच्छी तरह न हो सके) बैठना-सोना ।
२६. गृहान्तरनिषद्या—भिक्षा करते समय गृहस्थ के अंतर घर (रसोई आदि) में बैठना । (रोगी, वृद्ध एवं तपस्वी साधु बैठ सकते हैं) ।

२७. गात्र-उद्धर्तन—शरीर पर पीठी (उबटन) आदि मलना ।
२८. गृहिवैयावृत्य—गृहस्थों की वैयावृत्य—सेवा करना ।
२९. आजीववृत्तिता—अपने—जाति—कुल आदि का परिचय देकर आजीविका चलाना (भिक्षा प्राप्त करना) ।
३०. तप्तानिवृत्तभोजित्व—गर्म होने पर भी जो पूरा अचित्त न हुआ हो, ऐसा मिश्र आहार—पानी लेना ।
३१. आतुरस्मरण—क्षुधा आदि से पीड़ित होकर पूर्व भुक्त वस्तुओं को याद करना अथवा रोग उत्पन्न होने पर माता—पिता आदि स्वजनों की एवं चिकित्सालय की शरण लेना ।
३२. अनिर्वृत्तमूलक—सचित्त मूला लेना एवं भोगना ।
३३. अनिर्वृत्तशृंगबेर—सचित्त अदरख लेना—भोगना ।
३४. सचित्त इक्षुखण्ड लेना—भोगना ।
३५. सचित्त कन्द (शकरकन्द) आदि लेना—भोगना ।
३६. सचित्तमूल (वृक्ष की जड़) लेना—भोगना ।
३७. सचित्त फल (दाड़िम आदि) लेना—भोगना ।
३८. सचित्त बीज (गेहूँ—तिल आदि या ककड़ी आदि के बीज) लेना—भोगना ।
३९. सचित्त सौवर्चल—संचल (उत्तरापथ के एक पर्वत की खान का अथवा कृत्रिम) लवण लेना—भोगना ।
४०. सचित्त सैन्धव (सिन्धुप्रदेश की खान का) लवण लेना—भोगना ।
४१. सचित्त रोमा (सामान्य खान का) लवण लेना—भोगना ।
४२. सचित्त सामुद्रिक (समुद्र जल से बनाया हुआ) लवण लेना—भोगना । (सांभर का नमक भी इसी के अंतर्गत है) ।
४३. पांशुक्षार—खारी मिट्टी से निकाला हुआ लवण लेना—भोगना ।
४४. सचित्त काला लवण लेना—भोगना ।
४५. सिर—रोग से बचने के लिए धूम्रपान करना या धूम्रपान की नलिका रखना । अथवा शरीर या वस्त्र को धूप खेना ।
४६. बिना कारण वमन करना ।
४७. बिना कारण वस्तिकर्म (अपान मार्ग से नली के द्वारा स्नेह आदि) पदार्थ चढ़ाना ।

४८. बिना कारण विरेचन (जुलाब) लेना।
४९. बिना कारण आंखों में कज्जल-सुरमा आदि डालना।
५०. विभूषा के लिए दतौन व दन्तमञ्जनादि से दांतों को साफ करना।
५१. गात्राभ्यंग—बिना कारण शरीर के तेल आदि की मालिश करना।
५२. शरीर की विभूषा करना। (सुन्दर परिधान-अलंकार शरीर की साज-सज्जा आदि विभूषा है)।

## २. प्रवचन-माता प्रकरण

प्रश्न १. प्रवचन माता से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर—जो पांच महाव्रतों के पालन में मां की तरह सहयोग करती है, माता के समान साधक की रक्षा करती है, उसे प्रवचन-माता कहा जाता है ?

प्रश्न २. प्रवचन माता कितनी है ?

उत्तर—प्रवचन माता आठ हैं—पांच समिति और तीन गुप्ति ।<sup>१</sup>

प्रश्न ३. समिति किसे कहते हैं ?

उत्तर—प्रशस्त-एकाग्रपरिणामपूर्वक की जाने वाली सम्यक्-आगमोक्त प्रवृत्ति का नाम समिति है। संयमी की सम्यक् प्रवृत्ति को भी समिति कहते हैं।

प्रश्न ४. समिति के कितने प्रकार हैं ?

उत्तर—समिति के पांच प्रकार हैं<sup>२</sup>—१. ईर्या-समिति, २. भाषा-समिति, ३. एषणा-समिति, ४. आदान-निक्षेप-समिति, ५. उच्चार-प्रसवण-खेल-सिंघाण-जल्ल-परिष्ठापन-समिति (उत्सर्ग समिति)।

प्रश्न ५. ईर्या समिति से आप क्या समझते हैं ?

उत्तर—ज्ञान-दर्शन-चारित्र के निमित्त युगपरिमाण अर्थात् चार हाथ प्रमाण (९६ अंगुल) अथवा शरीर प्रमाण आगे की भूमि को एकाग्रचित्त से देखते हुए राजमार्गादिक में यतनापूर्वक गमन करना 'ईर्यासमिति' है।<sup>३</sup>

प्रश्न ६. ईर्या-समिति के चार कारण कौन-कौन है ?

उत्तर—१. आलंबन—ज्ञान-दर्शन-चारित्र का आलम्बन लेकर गमन करना।  
२. काल—दिन में देखकर चलना। ३. मार्ग—राजमार्ग आदि से गमन करना। ४. यतना—सावधानीपूर्वक दिन में शरीर प्रमाणभूमी को देखकर चलना।<sup>४</sup>

१. उत्तरा. ४/२७, आवश्यक ४/७ ३. उत्तरा. २४/७

पडिक्रमणं सुतं

४. उत्तरा. २४/४ से ८

२. समवाओ ५/७, स्था. ५/३/२०३

### प्रश्न ७. भाषा समिति का क्या अर्थ है ?

उत्तर—यतनापूर्वक निरवद्य भाषा बोलना अर्थात् आवश्यकता होने पर भाषा समिति के दोषों का वर्जन करते हुए सत्य, हित, मित एवं स्पष्ट (असंदिग्ध) भाषा बोलना भाषा समिति है। इसका पालन चार प्रकार से किया जाता है।

द्रव्य से—क्रोध-मान-माया-लोभ-हास्य-भय-वाचालता एवं निन्दा-विकथा-रहित भाषा बोलना।<sup>१</sup>

क्षेत्र से—चलते समय न बोलना।

काल से—प्रहर रात्रि के बाद धीमे स्वर से बोलना, ऊंचे स्वर से व्याख्यान आदि न करना।

भाव से—विवेक पूर्वक निरवद्य वचन बोलना।

### प्रश्न ८. भाषा के कितने प्रकार हैं ?

उत्तर—जो भाष्यमाण है, कही जा रही है, वह भाषा है। उसके चार प्रकार हैं<sup>२</sup>—

१. सत्य-भाषा—जीवादि नव पदार्थों का यथार्थ स्वरूप कहना अथवा तत्त्व आदि का यथार्थ निरूपण करना।
२. असत्य-भाषा—जो पदार्थ जिस रूप में नहीं हैं उन्हें उस रूप में कहना।
३. सत्यामृषा-भाषा—जो भाषा कुछ सत्य है एवं कुछ असत्य है वह सत्यामृषा (मिश्र) भाषा कहलाती है।
४. असत्यामृषा-भाषा (आदेश-उपदेशात्मक भाषा)—जो भाषा न सत्य है एवं न असत्य, केवल आदेश या उपदेशात्मक है, वह असत्यामृषा (व्यवहार) भाषा कहलाती है।

### प्रश्न ९. सत्यभाषा के दस भेद कौन-कौन से हैं ?

- उत्तर—
१. जनपद-सत्य—देश विशेष की अपेक्षा शब्दों का व्यवहार करना।
  २. सम्मत-सत्य—प्राचीन विद्वानों द्वारा मान्य अर्थ में शब्दों का प्रयोग करना।
  ३. स्थापना-सत्य—सदृश या विसदृश आकार वाली वस्तु में किसी व्यक्ति विशेष की स्थापना करके उसे उस नाम से पुकारना।
  ४. नामसत्य—गुण न होने पर भी व्यक्ति-विशेष या वस्तु-विशेष का वैसा नाम रखकर उसे उस नाम से उच्चारित करना।

५. रूप-सत्य—वास्तविकता न होने पर भी धारण किये हुए रूप के अनुसार किसी व्यक्ति को उस नाम से बतलाना।
६. प्रतीत्य-सत्य—अपेक्षाविशेष से वस्तु को छोटी-बड़ी कहना।
७. व्यवहार-सत्य—लोक व्यवहार के अनुसार भाषा का प्रयोग करना।
८. भाव-सत्य—निश्चय-नय की दृष्टि से वस्तु में अनेक भाव होने पर भी उसे किसी एक भाव को मुख्यता देकर पुकारना।
९. योग-सत्य—क्रियाविशेष के संबंध से व्यक्ति को संबोधित करना।
१०. उपमा-सत्य—किसी एक अंश की समानता के आधार पर एक वस्तु की दूसरी वस्तु से तुलना करना।<sup>१</sup>

**प्रश्न १०. असत्य भाषा कितने प्रकार से बोली जाता है ?**

**उत्तर—सामान्यतया इन दस कारणों से असत्य बोली जाता है<sup>२</sup>—**

१. क्रोध-निःसृत—यथा अपना पुत्र होने पर भी असत्य बोलना। क्रोधवश पिता कह देता है कि “दुष्ट! तू मेरा जाया है ही नहीं।”।
२. मान-निःसृत—धन एवं बुद्धि न होने पर भी अभिमानवश मनुष्य अपनी धनिकता और बुद्धिमत्ता की झूठी प्रशंसा करने लगता है।
३. माया-निःसृत—धोखा देकर दूसरों को ठगा जाता है एवं बच्चों को बहलाने के लिए झूठ बोला जाता है।
४. लोभ-निःसृत—व्यापार में लोभवश ग्राहक को थोड़ी कीमत में खरीदी हुई चीज अधिक कीमत में खरीदी हुई बतलाई जाती है।
५. प्रेय-निःसृत—दास न होते हुए भी मनुष्य प्रेम-मोह में अंधा होकर कह देता है कि ‘मैं आपका दास हूँ’।
६. द्वेष-निःसृत—द्वेषवश मनुष्य गुणी को निर्गुण, विद्वान् को मूर्ख एवं धनी को दरिद्र कह देता है।
७. हास्य-निःसृत—हंसी-मजाक, विनोद, मनोरंजन एवं मसखरी करते समय मनुष्य जान-बूझकर झूठ बोलता है।
८. भय-निःसृत—चोर आदि के भय से या दंड एवं अपमान के भय से व्यक्ति झूठ बोलता है।
९. आख्यायिका-निःसृत—कथा आदि कहते समय मनुष्य मनगढ़ंत बात कह देता है।

१. स्था. १०/८६, प्रज्ञापना पद ११/८६०

२. प्रज्ञापना पद ११/८६३, स्था. १०/९०

१०. उपघात-निःसृत-किसी का नाश करने के लिए झूठा आरोप लगाया जाता है।

**प्रश्न ११. सत्यामृषा भाषा क दस भेद कौन-कौन से हैं ?**

उत्तर—१. उत्पन्न-मिश्रिता—उत्पत्ति की अपेक्षा मिश्रभाषा बोलना। जैसे—‘आज सौ बालक पैदा हुए हैं’ ऐसा कहना। यदि न्यूनाधिक पिचानवें या एक सौ पांच उत्पन्न हुए हों तो मिश्रभाषा हो जाती है।

२. विगत-मिश्रिता—मृतकों की अपेक्षा कहना कि आज सौ आदमी मर गये।

३. उत्पन्न-विगत-मिश्रिता—जन्म और मरण दोनों के विषय में कहना कि आज इतने जन्मे और इतने मर गये।

४. जीव-मिश्रिता—अधिकांश जीवित शंख आदि का ढेर देखकर यह कहना कि यह जीवों का ढेर है। वहां कई मरे हुए भी हो सकते हैं।

५. अजीव-मिश्रिता—अधिकांश मृतक व कुछ जीवित जीवों का ढेर देखकर यह कहना कि यह मृत जीवों का पिण्ड है।

६. जीवाजीव-मिश्रिता—जीवित एवं मृत जीवों का मिश्रित ढेर देखकर कहना कि इसमें इतने जीवित एवं इतने मृत हैं।

७. अनन्त-मिश्रिता—अनन्तकाय व प्रत्येक वनस्पति-काय मिश्रित ढेर के लिए यह कहना कि यह अनन्तकाय का ढेर है।

८. प्रत्येक-मिश्रिता—प्रत्येक वनस्पतिकाय का ढेर, जिसमें अनन्तकाय भी मिली हुई हो, प्रत्येक वनस्पति-काय का ढेर कहना।

९. अद्धामिश्रिता—दिन-रात आदि काल के विषय में मिश्रित भाषा बोलना। दिन निकलने से पहले ही यह कहना—उठो-उठो! सूरज चढ़ गया।

१०. अद्धामिश्रिता—दिन-रात के एक भाग को अद्धाद्धा कहते हैं। अद्धाद्धा के विषय में मिश्रभाषा बोलना। जैसे—जल्दी के कारण दिन-रात के प्रथम प्रहर में ही कह देना कि दोपहर हो गया एवं आधी रात बीत गई।<sup>१</sup>

**प्रश्न १२. व्यवहार-भाषा के बारह भेद कौन-कौन से हैं ?<sup>२</sup>**

उत्तर— १. आमंत्रणी—संबोधन करना, जैसे—हे प्रभो!

२. आज्ञापनी—आज्ञा देना, जैसे—अमुक काम करो।

१. स्था. १०/६९, प्रज्ञापना पद ११/८६५

२. प्रज्ञापना पद ११/८६६

३. याचनी—याचना करना, जैसे—अमुक चीज चाहिए।
४. प्रच्छनी—पूछना, जैसे—यह मार्ग कहां जाता है?
५. प्रज्ञापनी—प्ररूपणा करना, जैसे—जीव है, अजीव है इत्यादि।
६. प्रत्याख्यान—पचक्खाण करना, जैसे—अमुक कार्य करने का प्रत्याख्यान करूंगा।
७. इच्छानुलोमा—पूछने वाले की इच्छा का अनुमोदन करना, जैसे—किसी ने पूछा—मैं अमुक कार्य करूँ या नहीं। उसे उत्तर में हां कर या नहीं कर—इस प्रकार कहना।
८. अनभिगृहीता—उस शब्द का प्रयोग, जिसका कोई अर्थ न निकले।
९. अभिगृहीता—अर्थ का अभिग्रहण कर घट-पट आदि शब्दों का उच्चारण करना।
१०. संशयकारिणी—जिसके अनेक अर्थ हों, ऐसे शब्दों का प्रयोग करना। जैसे कहना कि सैन्धव लाओ। सैन्धव शब्द से दो अर्थ निकलते हैं घोड़ा तथा नमक। अतः सुनने वाला सन्देह में पड़ सकता है।
११. व्याकृत—विस्तार सहित बोलना, जिससे साफ-साफ समझ में आ जाए।
१२. अव्याकृत—अतिगम्भीरतायुक्त कथन, जो समझ में कठिनता से आए।

**प्रश्न १३. भाषासमिति की आराधना करने वाले साधु को किस भाषा का प्रयोग करना चाहिए?**

उत्तर—असत्य एवं मिश्रभाषा का प्रयोग साधु के लिए पूर्णतः निषिद्ध है।<sup>१</sup> सत्य एवं व्यवहार—ये दो भाषाएं निरवद्य—पापरहित हों तो बोल सकता है।

**प्रश्न १४. क्या साधु निश्चयकारी भाषा बोल सकता है?**

उत्तर—नहीं, साधु निश्चयकारी भाषा नहीं बोल सकता।<sup>२</sup> संभावनात्मक भाषा का प्रयोग कर सकता है।

**प्रश्न १५. क्या सत्यभाषा भी सावद्य—पापसहित होती है?**

उत्तर—हां, यदि सत्य भाषा भी कर्कश, निष्ठुर, रूखी, आस्रव-उत्पादक, छेदकारिणी, भेदकारिणी, परितापकारिणी, उपद्रवकारिणी एवं जीवों का उपघात करने वाली हो तो वह सावद्य होती है।<sup>३</sup> इसीलिए भगवान् ने

१. दसवे. ७/१

३. आचारचूला अ. ४/२/२१

२. दसवे. ७/६ से १० तक



कहा—साधु काने को काना, नपुंसक को नपुंसक, रोगी को रोगी एवं चोर को चोर न कहे क्योंकि इससे श्रोता को दुःख होता है।<sup>१</sup>

**प्रश्न १६. एषणा समिति का क्या तात्पर्य है ?**

**उत्तर—**आहार, उपधि (वस्त्र-पात्र आदि) एवं शय्या (स्थान-पाट-बाजोट आदि) इन तीनों प्रकार की वस्तुओं का अन्वेषण, ग्रहण तथा उपभोग में संयमपूर्वक प्रवृत्त होना एषणासमिति है।<sup>२</sup>

**प्रश्न १७. एषणा समिति के कितने प्रकार हैं ?**

**उत्तर—**तीन प्रकार हैं<sup>३</sup>—

१. गवेषणा—सोलह उद्गम और सोलह उत्पादन—इन बत्तीस दोषों को टालकर शुद्ध आहार आदि की खोज करना।
२. ग्रहणैषणा—शंक्ति आदि एषणा के दस दोषों को टालकर शुद्ध आहार आदि लेना।
३. परिभोगैषणा—गृहीत भिक्षा का निर्दोष रूप से अर्थात् पांच मांडलिक दोषों को टालते हुए उपभोग करना।

**प्रश्न—१८. आहार-पानी ग्रहण प्रक्रिया में कितने प्रकार के दोष शास्त्रों में बतलाए गये हैं ? उनके कितने विभाग हैं ?**

**उत्तर—**आहार-पानी आदि की ग्रहण प्रक्रिया में बयांलीस प्रकार के संभावित दोष निर्दिष्ट हैं। उनके तीन मुख्य विभाग हैं—१. उद्गम के दोष २. उत्पादन के दोष ३. एषणा के दोष।<sup>४</sup>

**प्रश्न १९. उद्गम क्या है ? उनके कितने दोष हैं ?**

**उत्तर—**उद्गम दोष का अर्थ होता है उत्पादन-काल में लगने वाले दोष। गृहस्थ खाने-पीने की वस्तुएं बनाते समय सोलह प्रकार से दोष लगा सकता है। वे दोष इस प्रकार हैं<sup>५</sup>—

१. आधाकर्म—साधु के निमित्त सचित्त-वस्तु को अचित्त करना एवं अचित्त को पकाना आधाकर्मदोष है। यह साधु के लिए कल्पनीय नहीं है।
२. औद्देशिक—सामान्यरूप से भिक्षुओं के लिए बनाया हुआ आहारादि लेना।
३. पूर्तिकर्म—आधाकर्म आहारादि का अंश मिला हुआ द्रव्य लेना।

१. दसवे. ७/१२

४. उत्तरा. २४/१२

२. उत्तरा. २४/११

५. प्रवचनसारोद्धार ६७ गाथा ५६४-५६५,

३. उत्तरा. २४/११-१२

निशीथ १३/६१ से ७५

४. मिश्रजात—अपने लिए और साधु के लिए एक साथ पकाया हुआ आहारादि लेना।
५. स्थापना—कुछ समय के लिए केवल साधु के निमित्त अलग रखा हुआ आहारादि लेना।
६. प्राभृतिका—साधु को विशिष्ट आहार बहराने की भावना से मेहमानों को आगे-पीछे करके बनाया हुआ आहारादि लेना।
७. प्रादुष्करण—अंधेरे में दीप आदि जलाकर दिया हुआ आहार आदि लेना।
८. क्रीत—साधु के लिए खरीदकर लाया आहार आदि लेना।
९. प्रामित्यक—साधु के लिए उधार लिया हुआ आहार आदि लेना।
१०. परिवर्तित—साधु के लिए अदला-बदली करके लाया हुआ आहार आदि लेना।
११. अभ्याहृत—साधु के लिए सामने से लाया हुआ आहार आदि लेना।
१२. उद्भिन्न—हिंसा की संभावना हो, ऐसी कुप्पी या जल-कुंभ, चक्की, पीठ, लोढा, मिट्टी के लेप, लाख आदि द्रव्यों से छांए हुए पदार्थों को उघाड़कर दिया जाने वाला आहार आदि लेना। प्रतिदिन न खुलने वाला दरवाजा खोल कर देना।
१३. मालापहत—ऊपर, नीचे या तिरछे स्थान में (जहां आसानी से हाथ नहीं पहुंच सके) पंजों पर खड़े होकर या निःसरणी आदि के सहारे से उतारकर दिया आहार (अजयणा की संभावना हो तो) आदि लेना।
१४. आच्छेद्य—निर्बल व्यक्ति से छीनकर दिया हुआ आहार आदि लेना।
१५. अनिसृष्ट—उस वस्तु को, जिसके एक से अधिक मालिक हों, सबकी अनुमति के बिना लेना।
१६. अध्यवपूरक—अपने लिए बन रहे भोजन को साधुओं के आगमन का संवाद सुनकर, गृहस्थ द्वारा अधिक बनाए, उस आहार आदि को लेना।

**प्रश्न २०. उत्पादन का अर्थ बताते हुए उनके सोलह दोष कौन से है ?**

**उत्तर—**आहार की प्राप्ति में जो दोष होते हैं उन्हें उत्पादन दोष कहा जाता है। ये दोष साधु से संबंधित हैं।

१. धात्रीपिण्ड—धाय की तरह बच्चों को खिलाकर गृहस्थ से आहार आदि लेना।

२. दूतीपिण्ड—दूत की तरह गुप्त या प्रकट सन्देश पहुंचाकर आहार आदि लेना।
३. निमित्तपिण्ड—भविष्य के शुभाशुभ निमित्त बतलाकर आहार आदि लेना।
४. आजीविकापिण्ड—स्पष्ट या अस्पष्ट रूप से अपनी जाति-कुल आदि का गौरव प्रकट कर आहार आदि लेना।
५. वनीपकपिण्ड—भिखारी की तरह दीनता दिखाकर आहार आदि लेना।
६. चिकित्सापिण्ड—वैद्य की तरह औषधि बताकर आहार आदि लेना।
७. क्रोधपिण्ड—क्रोध कर या श्राप आदि का भय दिखाकर भिक्षा लेना।
८. मानपिण्ड—अपने को तेजस्वी, प्रतापी एवं बहुश्रुत बताते हुए 'सेवइयामुनिवत्' अपना प्रभाव जमाकर भिक्षा लेना।
९. मायापिण्ड—वंचना-छलना करके भिक्षा लेना।
१०. लोभपिण्ड—आहार के विषय में लोभ करना यथा गोचरी जाते समय लोलुपतावश यह निश्चय करके निकलना कि आज अमुक वस्तु खाऊंगा। अपनी धारी हुई वस्तु सहज में न मिलने पर उसके लिए घर-घर भटकना।
११. पूर्वपश्चात् संस्तवपिण्ड—भिक्षा लेने से पहले या पीछे दाता की प्रशंसा करना।
१२. विद्याप्रयोग—विद्या का प्रयोग करके भिक्षा लेना।
१३. मंत्रप्रयोग—वशीकरण, सम्मोहन आदि मंत्र का प्रयोग करके भिक्षा लेना।
१४. चूर्णप्रयोग—चूर्ण का प्रयोग करके भिक्षा लेना। अदृश्य करने वाले अंजन आदि को चूर्ण कहते हैं।
१५. योगप्रयोग—पादलेप जल पर अधर चलने का औषधीय प्रयोग आदि सिद्धियां बताकर भिक्षा लेना।
१६. मूलकर्मप्रयोग—मूलकर्म करके आहारादि लेना। गर्भ स्तंभ, गर्भाधान या गर्भपात आदि सावद्य कार्यों को मूल कर्म कहते हैं।<sup>१</sup>

१. प्रवचनसारोद्धार गा. ५६६ से ५६७, द्वार ६७

**प्रश्न २१. एषणा को पभाषित करते हुए उनके दस दोष कौन से हैं?**

**उत्तर—एषणा के दस दोष निम्नोक्त हैं<sup>१</sup>—**

१. शंक्ति—आहारादि में आधाकर्म आदि की शंका होने पर भी उसे लेना। आहार ग्रहण करते समय एषणा के संबंध में होने वाले दोषों को एषणा या ग्रहणैषणा के दोष कहा जाता है इसका संबंध साधु और गृहस्थ दोनों से हैं।
२. म्रक्षित (असूझता)—दान देते समय आहार, चम्मच या देने वाले का हाथ आदि पृथ्वी-पानी-वनस्पति रूप किसी सचित्त वस्तु से छू जाने पर भी भिक्षा ले लेना।
३. निक्षिप्त—सचित्त द्रव्य पर रखी हुई भिक्षा लेना।
४. पिहित—सचित्त वस्तु से ढंकी हुई भिक्षा लेना।
५. संहत—सचित्त वस्तु के ऊपर पर से उठाकर दी हुई भिक्षा लेना।
६. दायक—दान देने के अयोग्य व्यक्तियों से आहार आदि अविधि से लेना। अन्ध, पंगु, पागल, अतिवृद्ध, गर्भवती, बच्चे को दूध पिलाती हुई, दही बिलौती हुई, चने आदि भुनती हुई, आटा आदि पीसती हुई, रूई पींजती हुई तथा चरखा चलाती हुई स्त्री आदि-आदि ४० प्रकार के व्यक्ति दान देने के अयोग्य माने गये हैं।
७. उन्मिश्र—सचित्त-अचित्त मिला हुआ आहारादि लेना।
८. अपरिणत—पाकादि क्रिया द्वारा पूर्ण अचित्त न हुआ आहार आदि लेना।
९. लिप्त—तत्काल का लीपे हुए अथवा कच्चे पानी से धोए हुए गीले आंगन पर चलकर दिया जाने वाला आहारादि लेना।
१०. छर्दित—दान देते समय जिसके छंटी नीचे गिर रहे हों ऐसा आहारादि लेना।

**प्रश्न २२. पिण्डैषणा पानैषणा से क्या तात्पर्य है?**

**उत्तर—विधिपूर्वक पिंड (आहार) लेना पिंडैषणा एवं पानी लेना पानैषणा है।<sup>२</sup>**

**प्रश्न २३. आदान निक्षेप समिति से आप क्या समझते हैं?**

**उत्तर—वस्त्र, अमत्त, पाट, बाजोट आदि उपकरणों को संयमपूर्वक लेना या रखना।<sup>३</sup>**

१. प्रवचनसारोद्धार गा. ५६८, द्वार ६७

३. उत्तर. २४/१३-१४

२. प्रवचनसारोद्धार द्वार ६६

**प्रश्न २४. उत्सर्ग समिति किसे कहते हैं ?**

**उत्तर—**उच्चार प्रस्रवण आदि का संयमपूर्वक परिष्ठापन करना।<sup>१</sup>

**प्रश्न २५. गुप्ति किसे कहते है ?**

**उत्तर—**आत्मरक्षा के लिए अशुभ-योगों को रोकना, सम्यक् रूप से मन, वचन और काय योग का निग्रह करना गुप्ति है।<sup>२</sup>

**प्रश्न २६. समिति-गुप्ति में क्या संबंध हैं ?**

**उत्तर—**जैसे—देख-देखकर यतनापूर्वक चलना ईर्यासमिति है। असंयम पूर्वक न चलना या निश्चल होकर ध्यान कर लेना कायगुप्ति है। निरवद्यभाषा विचारपूर्वक बोलना भाषा समिति है। भाषा का निरोध करना या मौन रखना वचनगुप्ति है। तत्त्व यही है कि समिति प्रवृत्तिरूप और गुप्ति निवृत्तिरूप। समिति में गुप्ति अनिवार्य है। गुप्ति में समिति वैकल्पिक है।<sup>३</sup>

**प्रश्न २७. तीन गुप्तियों का स्वरूप किस प्रकार है ?**

**उत्तर—**गुप्तियां तीन है—मनोगुप्ति, वचनगुप्ति, कायगुप्ति।

१. मनोगुप्ति—आर्त-रौद्र ध्यान तथा संरम्भ (जीव हिंसा का विचार करना), समारम्भ (जीवों को दुःख देना), आरम्भ (जीवों को मार डालना)<sup>४</sup> संबंधी संकल्प-विकल्पों को रोकना एवं शुभयोगों का निरोध करके योगनिरोध अवस्था को प्राप्त करना मनोगुप्ति है।

मनोगुप्ति के चार भेद हैं<sup>५</sup>—१. सत्यमनोगुप्ति २. असत्यमनोगुप्ति ३. मिश्रमनोगुप्ति ४. व्यवहारमनोगुप्ति।

२. वचनगुप्ति—वचन के अशुभ व्यापार का अर्थात् संरम्भ, समारम्भ और आरम्भ संबंधी वचनों का त्याग करना, विकथा से बचना तथा सर्वथा मौनव्रत स्वीकार करना वचनगुप्ति है। इसके भी मनोगुप्तिवत् चार भेद हैं।<sup>६</sup>

३. कायगुप्ति—खड़ा होना, बैठना, उठना, सोना, लांघना, सीधा चलना, इंद्रियों को अपने-अपने विषयों में लगाना, संरम्भ, समारम्भ, आरम्भ में प्रवृत्ति करना इत्यादि कायिक व्यापारों से निवृत्त होना या निरोध करना।<sup>७</sup>

१. उत्तरा. २४/१५

२. उत्तरा. २४/२६

३. उत्तरा. २४/२५

४. स्था. ३/१/१६

५. उत्तरा. २४/२०-२१

६. उत्तरा. २४/२२-२३

७. उत्तरा. २४/२४-२५, स्था. ३/१/२१

### ३. साधु प्रकरण

प्रश्न १. साधु किसे कहते हैं ?

उत्तर—पांच महाव्रतों की साधना करने वाला व्यक्ति साधु कहलाता है।

प्रश्न २. साधु कितने प्रकार के होते हैं ?

उत्तर—आगमों में पांच प्रकार के साधुओं का उल्लेख है—

१. जैनमुनि—'निर्ग्रथ' २. बुद्ध के भिक्षु—'शाक्य' ३. जंगलों में तपस्या करने वालों जटाधारी साधु—संन्यासी 'तापस' ४. गेरुंग के वस्त्र पहनने वाले त्रिदंडी साधु 'गैरुक' ५. गोशालक के मतानुयायी साधु 'आजीवक' कहलाते हैं।'

प्रश्न ३. निर्ग्रथ की व्याख्या एवं प्रकार बताइये ?

उत्तर—ग्रंथ का अर्थ है परिग्रह। वह दो प्रकार का है—आभ्यन्तर और बाह्य। मिथ्यात्व आदि आभ्यन्तर ग्रंथ है और धर्मोपकरण के अतिरिक्त धन-धान्यादि बाह्य ग्रंथ है। दोनों प्रकार के ग्रंथों से जो मुक्त है, उसका नाम निर्ग्रथ है।

प्रश्न ४. निर्ग्रथ कितने प्रकार के माने गये हैं ?

उत्तर—निर्ग्रथ पांच प्रकार के माने गये हैं—१. पुलाक २. बकुश ३. कुशील ४. निर्ग्रथ ५. स्नातक।

प्रश्न ५. पुलाकनिर्ग्रथ का क्या स्वरूप है ?

उत्तर—साररहित धान्य को पुलाक कहते हैं। तप और ज्ञान से प्राप्त लब्धि के प्रयोग द्वारा बल-वाहनसहित चक्रवर्ती आदि का मान-मर्दन करने से तथा ज्ञानादि के अतिचारों का सेवन करने से जिनका संयम पुलाकवत् साररहित हो जाता है, वे पुलाकनिर्ग्रथ कहलाते हैं। इनके दो भेद हैं—लब्धिपुलाक और प्रतिसेवनापुलाक।

संघ आदि की रक्षा के निमित्त पुलाकलब्धि से जो चक्रवर्ती की सेना को मृतप्राय कर डालते हैं, वे मुनि लब्धिपुलाक कहलाते हैं।

प्रतिसेवनापुलाक' के पांच भेद हैं—

१. ज्ञानपुलाक—ये स्वलित-मिश्रित आदि ज्ञान के अतिचारों द्वारा ज्ञान की विराधना करते हैं।

२. दर्शनपुलाक—ये अन्यतीर्थी एवं तीर्थ परिचय आदि द्वारा दर्शन-सम्यक्त्व में दोष लगा लेते हैं।

३. चारित्रपुलाक—ये मूलगुण-उत्तरगुण में दोष लगा लेते हैं।

४. लिंगपुलाक—ये शास्त्रोक्त उपकरणों से अधिक उपकरण रखने वाला या बिना कारण अन्य लिंग धारण करने वाला।

५. यथासूक्ष्मपुलाक—ये प्रमादवश मन में अकल्पनीय वस्तु लेने का विचार करने वाले होते हैं।

प्रश्न ६. पुलाक निर्ग्रन्थ में ज्ञान कितने पाये जाते हैं?

उत्तर—प्रथम तीन—मतिज्ञान, श्रुतज्ञान और अवधिज्ञान।<sup>१</sup>

प्रश्न ७. पुलाक निर्ग्रन्थ में चारित्र कितने पाये जाते हैं?

उत्तर—प्रथम दो—सामायिक चारित्र और छेदोपस्थापनीय चारित्र।<sup>२</sup>

प्रश्न ८. पुलाक निर्ग्रन्थ में शरीर कितने पाये जाते हैं?

उत्तर—तीन—औदारिक, तैजस और कार्मण।<sup>३</sup>

प्रश्न ९. पुलाक निर्ग्रन्थ में समुद्घात कितने पाये जाते हैं?

उत्तर—तीन—वेदनीय, कषाय और मारणांतिक समुद्घात।<sup>४</sup>

प्रश्न १०. पुलाक निर्ग्रन्थ आराधक अवस्था में काल धर्म प्राप्त करके कौन से देवलोक तक जा सकते हैं?

उत्तर—आठवें देवलोक तक।<sup>५</sup>

प्रश्न ११. पुलाक निर्ग्रन्थ विराधक होने पर कौन सी गति में जाते हैं?

उत्तर—(अण्णयरेसु) अन्य स्थानों में चारों गति में।<sup>६</sup>

प्रश्न १२. पुलाक निर्ग्रन्थ उत्कृष्ट कितने भवों में होता है?

उत्तर—तीन भवों में।<sup>७</sup>

१. (क) स्थानां, ५/३/२७८

(ख) भगवती २५/६/२७९

२. भगवती २५/६/३१२

३. भगवती २५/६/३०४

४. भगवती २५/६/३२३

५. भगवती २५/६/४३५

६. भगवती २५/६/३३७

७. भगवती २५/६/३३९

८. भगवती २५/६/४१३

प्रश्न १३. पुलाक लब्धि का प्रयोग एक जन्म की अपेक्षा कितनी बार करते हैं?

उत्तर—जघन्य एक बार, उत्कृष्ट तीन बार।

प्रश्न १४. पुलाक लब्धि का प्रयोग तीन जन्मों की अपेक्षा कितनी बार करते हैं?

उत्तर—जघन्य दो, उत्कृष्ट सात बार।

प्रश्न १५. एक साथ पुलाक लब्धि का प्रयोग उत्कृष्ट कितने साधु कर सकते हैं?

उत्तर—उत्कृष्ट पृथक् शत (दो सौ से नौ सौ तक) साधु।

प्रश्न १६. एक साथ पुलाक लब्धि का प्रयोग पूर्व काल की अपेक्षा कितने साधु कर सकते हैं?

उत्तर—पृथक् सहस्र (दो हजार से नौ हजार तक) साधु।

प्रश्न १७. पुलाक लब्धि की स्थिति कितने समय की है?

उत्तर—अंतर्मुहूर्त्त।

प्रश्न १८. पुलाक लब्धि वाले किस क्षेत्र में शाश्वत रहते हैं?

उत्तर—महाविदेह क्षेत्र में।

प्रश्न १९. पलाक लब्धि वाले भरत-ऐरावत में कब-कब होते हैं?

उत्तर—अवसर्पिणी काल में तीसरे-चौथे-पांचवें आरे में होते हैं। (पांचवें आरे में जन्मते नहीं) उत्सर्पिणी काल में दूसरे-तीसरे-चौथे आरे में होते हैं। (दूसरे में जन्म लेते हैं, दीक्षा नहीं)

प्रश्न २०. पुलाक लब्धि में कौनसा कल्प पाया जाता है?

उत्तर—केवल स्थविरकल्प।<sup>१</sup>

प्रश्न २१. बकुश-निर्ग्रथ का क्या स्वरूप है?

उत्तर—बकुश शब्द का अर्थ है—चित्र (चीते जैसा) वर्ण। शरीर एवं उपकरणों की शोभा-विभूषा करके उत्तरगुणों में दोष लगाने से जिनका चारित्र चित्रवर्ण—दोषों के दाग वाला हो गया है, वे बकुश-निर्ग्रथ कहलाते हैं। इनके दो भेद हैं?—

१. शरीर-बकुश—जो साधु शरीर की विभूषा के लिए हाथ-पैर-मुंह आदि धोते हैं, आंख-कान-नाक दांत आदि से मैल दूर करते हैं एवं केश आदि को संवारते हैं वे शरीर-बकुश होते हैं।



२. उपकरण-बकुश—जो साधु विभूषा के लिए अपने वस्त्रों को धोते हैं एवं धूप आदि से सुगंधित करते हैं तथा पात्र-दण्ड आदि को विशेष शोभायुक्त अथवा दर्शनीय बनाने का प्रयत्न करते हैं, वे उपकरण-बकुश होते हैं।

**प्रश्न २२. बकुश-निर्ग्रन्थ कितने प्रकार के होते हैं ?**

**उत्तर—बकुश-निर्ग्रन्थ पांच प्रकार के होते हैं<sup>१</sup>—**

१. आभोग-बकुश—जानते हुए विभूषा का दोष लगाने वाले।
२. अनाभोग-बकुश—अज्ञानवश या सहसा दोष लगाने वाले।
३. संवृत-बकुश—छिप कर दोष लगाने वाले।
४. असंवृत-बकुश—प्रकटरूप से दोष लगाने वाले।
५. यथासूक्ष्म-बकुश—सूक्ष्म दोष लगाने वाले।

**प्रश्न २३. बकुश निर्ग्रन्थ में ज्ञान कितने पाये जाते हैं ?**

**उत्तर—प्रथम तीन—मतिज्ञान, श्रुतज्ञान और अवधिज्ञान।<sup>२</sup>**

**प्रश्न २४. बकुश निर्ग्रन्थ में चारित्र कितने पाये जाते हैं ?**

**उत्तर—प्रथम दो—सामायिक चारित्र और छेदोपस्थापनीय चारित्र।<sup>३</sup>**

**प्रश्न २५. बकुश निर्ग्रन्थ में शरीर कितने पाये जाते हैं ?**

**उत्तर—चार—औदारिक, वैक्रिय, तैजस और कार्मण।<sup>४</sup>**

**प्रश्न २६. बकुश निर्ग्रन्थ में समुद्घात कितने पाये जाते हैं ?**

**उत्तर—पांच—वेदनीय, कषाय, मारणांतिक, वैक्रिय और तैजस समुद्घात।<sup>५</sup>**

**प्रश्न २७. बकुश निर्ग्रन्थ आराधक अवस्था में काल धर्म प्राप्त करके कौन से देवलोक तक जा सकते हैं ?**

**उत्तर—बारहवें देवलोक तक।<sup>६</sup>**

**प्रश्न २८. बकुश निर्ग्रन्थ उत्कृष्ट कितने भवों में होता है ?**

**उत्तर—आठ भवों में।<sup>७</sup>**

**प्रश्न २९. बकुशता निर्ग्रन्थ का प्रयोग एक जन्म की अपेक्षा कितनी बार करते हैं ?**

**उत्तर—उत्कृष्ट नौ सौ बार।**

१. स्थानांग ५/३/१८६

२. भगवती २५/६/३१२

३. भगवती २५/६/३०४

४. भगवती २५/६/३२४

५. भगवती २५/६/४३६

६. भगवती २५/६/३३७

७. भगवती २५/६/४१४

प्रश्न ३०. बकुशता निर्ग्रन्थ का प्रयोग आठ जन्मों की अपेक्षा कितनी बार करते हैं ?

उत्तर—बहतर सौ बार।

प्रश्न ३१. बकुश निर्ग्रन्थ एक समय में नए कितने बकुश बना सकते हैं ?

उत्तर—उत्कृष्ट नौ सौ तक।

प्रश्न ३२. बकुश निर्ग्रन्थ की पूर्व पर्याय की अपेक्षा संख्या कितनी है ?

उत्तर—पृथक् शत करोड़। (दो सौ से नौ सौ करोड़)

प्रश्न ३३. बकुश निर्ग्रन्थ किस क्षेत्र में शाश्वत रहते हैं ?

उत्तर—महाविदेह क्षेत्र में।

प्रश्न ३४. बकुश निर्ग्रन्थ भरत-ऐरावत में कब-कब होते हैं ?

उत्तर—अवसर्पिणी काल में तीसरे-चौथे-पांचवें आरे में होते हैं। उत्सर्पिणी काल में दूसरे-तीसरे-चौथे आरे में होते हैं।

प्रश्न ३५. बकुश निर्ग्रन्थ में कौनसा कल्प पाया जाता है ?

उत्तर—स्थविरकल्पिक और जिनकल्पिक।<sup>१</sup>

प्रश्न ३६. बकुश कितने पूर्व के धारक हो सकते हैं ?

उत्तर—दस पूर्व।

प्रश्न ३७. कुशील-निर्ग्रन्थ क्या स्वरूप है ?

उत्तर—मूल व उत्तर गुणों में दोष लगाने से तथा संज्वलन कषाय के उदय से जिनका शील-चारित्र कुत्सित व दूषित हो गया है, वे साधु कुशील-निर्ग्रन्थ कहलाते हैं। इनके दो भेद हैं<sup>२</sup>—

१. प्रतिसेवना-कुशील-चारित्र के प्रति अभिमुख होते हुए भी अजितेन्द्रियतावश महाव्रत आदि मूलगुणों तथा दस प्रत्याख्यान, पिण्डविशुद्धि समिति-भावना-तप-प्रतिमा आदि उत्तरगुणों की विराधना करने वाले मुनि प्रतिसेवनाकुशील कहलाते हैं।

२. कषाय-कुशील-संज्वलनकषाय के उदय से जिनका चारित्र दूषित हो वे कषाय-कुशील कहलाते हैं।

प्रश्न ३८. कुशील निर्ग्रन्थ कितने प्रकार के होते हैं ?

उत्तर—पांच प्रकार के होते हैं—

१. ज्ञानकुशील—काल, विनय आदि ज्ञानाचार की प्रतिपालना नहीं करन वाला।

१. भगवती २५/६/३०१

२. भगवती २५/६/२८१

२. दर्शन कुशील—निष्कांक्षित आदि दर्शनाचार की प्रतिपालना नहीं करने वाला।
३. चारित्र कुशील—कौतुक, भूतिकर्म, प्रश्नाप्रश्न, निमित्त, आजीविका, कल्फकरुका, लक्षण, विद्या तथा मंत्र का प्रयोग करने वाला।
४. लिंग कुशील—वेष से आजीविका करने वाला।
५. यथा सूक्ष्म कुशील—अपने को तपस्वी आदि कहने से हर्षित होने वाला।<sup>१</sup>

प्रश्न ३९. कषाय कुशील निर्ग्रन्थ में ज्ञान कितने पाये जाते हैं?

उत्तर—चार—केवलज्ञान को छोड़कर।<sup>२</sup>

प्रश्न ४०. कषाय कुशील निर्ग्रन्थ में चारित्र कितने पाये जाते हैं?

उत्तर—चार—यथाख्यात चारित्र को छोड़कर।<sup>३</sup>

प्रश्न ४१. कषाय कुशील निर्ग्रन्थ में शरीर कितने पाये जाते हैं?

उत्तर—शरीर पांच—औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तैजस और कार्मण।<sup>४</sup>

प्रश्न ४२. कषाय कुशील निर्ग्रन्थ में समुद्घात कितने पाये जाते हैं?

उत्तर—छह—केवली समुद्घात को छोड़कर।<sup>५</sup>

प्रश्न ४३. कषाय कुशील निर्ग्रन्थ आराधक अवस्था में काल धर्म प्राप्त कर कौन से देवलोक तक जा सकते हैं?

उत्तर—छब्बीसवें देवलोक तक।<sup>६</sup>

प्रश्न ४४. कषाय कुशील निर्ग्रन्थ उत्कृष्ट कितने भवों में होता है?

उत्तर—आठ भवों में।<sup>७</sup>

प्रश्न ४५. कषाय कुशील निर्ग्रन्थ की दशा एक जन्म की अपेक्षा कितनी बार प्राप्त हो सकती है?

उत्तर—उत्कृष्ट नौ सौ बार।

प्रश्न ४६. कषाय कुशील निर्ग्रन्थ की दशा आठ जन्मों की अपेक्षा कितनी बार प्राप्त हो सकती है?

१. ठाणं ५/१८७

२. भगवती २५/६/३१३

३. भगवती २५/६/३०५

४. भगवती २५/६/३२५

५. भगवती २५/६/४३७

६. भगवती २५/६/४३७

७. भगवती २५/६/४१४

उत्तर—बहत्तर सौ बार।

प्रश्न ४७. कषाय कुशील निर्ग्रन्थ एक साथ एक समय में उत्कृष्ट कितने साधु हो सकते हैं ?

उत्तर—पृथक् सहस्र (दो हजार से नौ हजार तक)

प्रश्न ४८. कषाय कुशील निर्ग्रन्थ पूर्व पर्याय की अपेक्षा कितने साधु हो सकते हैं ?

उत्तर—पृथक् सहस्र करोड़। (दो हजार करोड़ से नौ हजार करोड़)

प्रश्न ४९. कषाय कुशील निर्ग्रन्थ जन्म एवं चारित्र ग्रहण की अपेक्षा कितने क्षेत्रों में होते हैं ?

उत्तर—पन्द्रह कर्मभूमि के क्षेत्रों में होते हैं, किन्तु देवादि द्वारा संहरण होने पर अकर्मभूमि में भी।

प्रश्न ५०. कषाय कुशील निर्ग्रन्थ भरत-ऐरावत में कब-कब होते हैं ?

उत्तर—अवसर्पिणी काल में तीसरे-चौथे-पांचवें आरे में होते हैं। उत्सर्पिणी काल में दूसरे-तीसरे-चौथे आरे में होते हैं। किन्तु महाविदेह क्षेत्र में संहरण होने पर सभी आरों में मिल सकते हैं।

प्रश्न ५१. कषाय कुशील निर्ग्रन्थ में कौनसा कल्प पाया जाता है ?

उत्तर—स्थविरकल्पिक, जिनकल्पिक और कल्पातीत।<sup>१</sup>

प्रश्न ५२. कषाय कुशील निर्ग्रन्थ कितने पूर्व के धारक हो सकते हैं ?

उत्तर—चौदह पूर्व।

प्रश्न ५३. निर्ग्रन्थ का क्या स्वरूप है ?

उत्तर—ग्रन्थ का अर्थ यहां मोह है। जो साधु मोह से रहित हैं उन्हें निर्ग्रन्थ कहते हैं। ये दो प्रकार के होते हैं—उपशांतमोह वाले एवं क्षीण मोह वाले। दोनों क्रमशः ग्यारहवें-बारहवें गुणस्थान के अधिकारी होते हैं।

प्रश्न ५४. निर्ग्रन्थ-निर्ग्रन्थ कितने प्रकार के होते हैं ?

उत्तर—पांच प्रकार के होते हैं<sup>२</sup>—

१. प्रथम समय निर्ग्रन्थ-निर्ग्रन्थ की कालस्थिति अन्तर्मुहूर्त प्रमाण होती है। उस काल में प्रथम समय में वर्तमान निर्ग्रन्थ।

२. अप्रथम समय निर्ग्रन्थ-प्रथम समय के अतिरिक्त शेष काल में वर्तमान निर्ग्रन्थ।

३. चरम समय निर्ग्रन्थ—अंतिम समय में वर्तमान निर्ग्रन्थ।

४. अचरम समय निर्ग्रन्थ—अंतिम समय के अतिरिक्त शेष समय में वर्तमान निर्ग्रन्थ।

५. यथासूक्ष्मनिर्ग्रन्थ—प्रथम या अंतिम समय की अपेक्षा किए बिना सामान्य रूप से सभी समयों में वर्तमान निर्ग्रन्थ।

प्रश्न ५५. निर्ग्रन्थ-निर्ग्रन्थ में ज्ञान कितने पाये जाते हैं?

उत्तर—चार—केवलज्ञान को छोड़कर।<sup>१</sup>

प्रश्न ५६. निर्ग्रन्थ-निर्ग्रन्थ में चारित्र कितने पाये जाते हैं?

उत्तर—यथाख्यात चारित्र।<sup>२</sup>

प्रश्न ५७. निर्ग्रन्थ-निर्ग्रन्थ में शरीर कितने पाये जाते हैं?

उत्तर—शरीर तीन—औदारिक, तैजस और कार्मण।<sup>३</sup>

प्रश्न ५८. निर्ग्रन्थ-निर्ग्रन्थ में समुद्घात कितने पाये जाते हैं?

उत्तर—एक भी नहीं।<sup>४</sup>

प्रश्न ५९. निर्ग्रन्थ-निर्ग्रन्थ आराधक अवस्था में काल धर्म प्राप्त करके कौन से देवलोक तक जा सकते हैं?

उत्तर—पांच अनुत्तरविमान में।<sup>५</sup>

प्रश्न ६०. निर्ग्रन्थ-निर्ग्रन्थ उत्कृष्ट कितने भवों में होता है?

उत्तर—तीन भवों में।<sup>६</sup>

प्रश्न ६१. निर्ग्रन्थ-निर्ग्रन्थ निर्ग्रन्थता का प्रयोग एक जन्म की अपेक्षा कितनी बार करते हैं?

उत्तर—दो बार।

प्रश्न ६२. निर्ग्रन्थ-निर्ग्रन्थ निर्ग्रन्थता का प्रयोग तीन जन्मों की अपेक्षा कितनी बार करते हैं?

उत्तर—पांच बार।

प्रश्न ६३. निर्ग्रन्थ-निर्ग्रन्थ एक समय में कितने नए हो सकते हैं?

उत्तर—उत्कृष्ट एक सौ बासठ (चौपन उपशम श्रेणी वाले एवं एक सौ आठ क्षपक श्रेणी वाले)

१. भगवती २५/६/३१३

२. भगवती २५/६/३०६

३. भगवती २५/६/३२५

४. भगवती २५/६/४३८

५. भगवती २५/६/३३७

६. भगवती २५/६/४१४

प्रश्न ६४. निर्ग्रन्थ-निर्ग्रन्थ पूर्व पर्याय की अपेक्षा कितने साधु हो सकते हैं ?  
उत्तर—पृथक् शत (दो सौ से नौ सौ) मिल सकते हैं।

प्रश्न ६५. निर्ग्रन्थ-निर्ग्रन्थ किस क्षेत्र में शाश्वत रहते हैं ?

उत्तर—महाविदेह क्षेत्र में।

प्रश्न ६६. निर्ग्रन्थ-निर्ग्रन्थ भरत-ऐरावत में कब-कब होते हैं ?

उत्तर—अवसर्पिणी काल में तीसरे-चौथे-पांचवें आरे में होते हैं। (पांचवें आरे में जन्मते नहीं) उत्सर्पिणी काल में दूसरे-तीसरे-चौथे आरे में होते हैं। (दूसरे में जन्म लेते हैं, दीक्षा नहीं)

प्रश्न ६७. निर्ग्रन्थ-निर्ग्रन्थ में कौनसा कल्प पाया जाता है ?

उत्तर—कल्पातीत।<sup>१</sup>

प्रश्न ६८. निर्ग्रन्थ-निर्ग्रन्थ कितने पूर्व के धारक हो सकते हैं ?

उत्तर—चौदह पूर्व।

प्रश्न ६९. स्नातक निर्ग्रन्थ किसे कहते हैं ? उनके कितने प्रकार हैं ?

उत्तर—शुक्लध्यान द्वारा समस्त घाति-कर्मों को क्षय कर जो शुद्ध हो गए हैं वे मुनि स्नातक निर्ग्रन्थ कहलाते हैं। इनके दो भेद हैं—सयोगी केवली और अयोगी केवली।

प्रश्न ७०. स्नातक-निर्ग्रन्थ कितने प्रकार के होते हैं ?

उत्तर—पांच प्रकार के होते हैं—

१. अच्छवी—काययोग का निरोध करने वाला।
२. अशबल—निरतिचार साधुत्व का पालन करने वाला।
३. अकर्मांश—घात्यकर्मों का पूर्णतः क्षय करने वाला।
४. संशुद्धज्ञानदर्शनधारी—अर्हत्, जिन, केवली।
५. अपरिश्रावी—सम्पूर्ण काय योग का निरोध करने वाला।<sup>२</sup>

प्रश्न ७१. स्नातक निर्ग्रन्थ में ज्ञान कितने पाये जाते हैं ?

उत्तर—एक—केवलज्ञान।<sup>३</sup>

प्रश्न ७२. स्नातक निर्ग्रन्थ में चारित्र कितने पाये जाते हैं ?

उत्तर—एक—यथाख्यात चारित्र।<sup>४</sup>

१. भगवती २५/६/३०३

३. भगवती २५/६/३१४

२. ठाणं ५/१८६

४. भगवती २५/६/३०६

प्रश्न ७३. स्नातक निर्ग्रन्थ में शरीर कितने पाये जाते हैं?

उत्तर—शरीर तीन—औदारिक, तैजस और कार्मण।<sup>१</sup>

प्रश्न ७४. स्नातक निर्ग्रन्थ में समुद्घात कितने पाये जाते हैं?

उत्तर—एक—केवली समुद्घात।<sup>२</sup>

प्रश्न ७५. स्नातक निर्ग्रन्थ आराधक अवस्था में काल धर्म प्राप्त कर कौन सी गति में जाते हैं?

उत्तर—मोक्ष गति में।<sup>३</sup>

प्रश्न ७६. स्नातक निर्ग्रन्थ उत्कृष्ट कितने भवों में होता है?

उत्तर—एक भव।<sup>४</sup>

प्रश्न ७७. स्नातक निर्ग्रन्थ एक समय में कितने नए हो सकते हैं?

उत्तर—उत्कृष्ट एक सौ आठ।

प्रश्न ७८. स्नातक निर्ग्रन्थ पूर्व पर्याय की अपेक्षा कितने हो सकते हैं?

उत्तर—पृथक् करोड़ (दो करोड़ से नौ करोड़)।

प्रश्न ७९. स्नातक निर्ग्रन्थ किस क्षेत्र में शाश्वत रहते हैं?

उत्तर—महाविदेह क्षेत्र में।

प्रश्न ८०. स्नातक निर्ग्रन्थ भरत-ऐरावत में कब-कब होते हैं?

उत्तर—अवसर्पिणी के तीसरे-चौथे-पांचवें आरे में उत्सर्पिणी के तीसरे-चौथे आरे में।

प्रश्न ८१. स्नातक निर्ग्रन्थ में कौनसा कल्प पाया जाता है?

उत्तर—कल्पातीत होते हैं,<sup>५</sup> उनमें कोई कल्प नहीं होता।

प्रश्न ८२. स्नातक निर्ग्रन्थ कितने पूर्व के धारक होते हैं?

उत्तर—वे पूर्व के धारक नहीं होते, केवलज्ञानी होते हैं।

प्रश्न ८३. पांचों प्रकार के निर्ग्रन्थ जघन्य-उत्कृष्ट कितने होते हैं?

उत्तर—जघन्य दो हजार करोड़ से कुछ अधिक (२६०२ करोड़) एवं उत्कृष्ट नव हजार करोड़।

जघन्य यथा—पुलाक दो हजार, बकुश २०० करोड़, प्रतिसेवना कुशील ४०० करोड़, कषाय कुशील २००० करोड़, निर्ग्रन्थ कभी होते हैं और

१. भगवती २५/६/३२५

४. भगवती २५/६/४१५

२. भगवती २५/६/४३६

५. भगवती २५/६/३०३

३. भगवती २५/६/३३८

१. स्थानांग २/१०६

कभी नहीं होते। (यदि होते हैं तो १-२-३ यावत् १६२) स्नातक दो करोड़।

उत्कृष्ट यथा—पुलाक नव हजार, बकुश ४५० करोड़, प्रतिसेवना-कुशील ९०० करोड़, कषाय-कुशील सात हजार ६४० करोड़ ९९ लाख ९० हजार १००, निर्ग्रन्थ ९०० एवं स्नातक नव करोड़।

**प्रश्न ८४. इन निर्ग्रथों में संयम की उज्ज्वलता की दृष्टि से कौन किससे न्यूनाधिक हैं ?**

**उत्तर—**पुलाक एवं कषायकुशील के संयम की जघन्य उज्ज्वलता परस्पर तुल्य एवं सबसे कम है। पुलाक के संयम की उत्कृष्ट उज्ज्वलता उससे अनन्तगुण अधिक है।

बकुश एवं प्रतिसेवनाकुशील के संयम की जघन्य-उज्ज्वलता पुलाक की उत्कृष्ट-उज्ज्वलता से अनन्तगुण अधिक एवं परस्पर तुल्य है। बकुश, प्रतिसेवनाकुशील एवं कषायकुशील के संयम की उत्कृष्ट-उज्ज्वलता क्रमशः अनन्तगुण अधिक है। निर्ग्रन्थ-स्नातक की जघन्य-उत्कृष्ट उज्ज्वलता परस्पर तुल्य एवं कषायकुशील से अनन्त-गुण अधिक है।

**प्रश्न ८५. चारित्र किसे कहते हैं ?**

**उत्तर—**चारित्र मोहनीयकर्म के क्षय, उपशम या क्षयोपशम से होने वाले विरति-परिमाण को चारित्र कहते हैं।

**प्रश्न ८६. चारित्र कितने प्रकार के हैं ?**

**उत्तर—**चारित्र के पांच प्रकार हैं<sup>१</sup>—(१) सामायिकचारित्र (२) छेदोपस्थापनीय-चारित्र (३) परिहारविशुद्धिचारित्र (४) सूक्ष्म-संपरायचारित्र (५) यथाख्यातचारित्र।

**प्रश्न ८७. सामायिक चारित्र का तात्पर्य समझायें ?**

**उत्तर—**सम अर्थात् राग-द्वेष रहित चैतन्य-परिणामों से प्रतिक्षण अपूर्व निर्जरा से होनेवाली आत्म-विशुद्धि की प्राप्ति सामायिक-चारित्र है अथवा सम्यग्ज्ञान-दर्शन-चारित्र की पर्यायों— अवस्थाओं को प्राप्त कराने वाले राग-द्वेष रहित आत्मा के क्रियानुष्ठान सामायिक-चारित्र है। इसमें सावद्यव्यापार का सर्वथा त्याग किया जाता है।

**प्रश्न ८८. सामायिकचारित्र कितने प्रकार का होता है ?**

**उत्तर—**दो प्रकार का कहा गया है—इत्वरिक एवं यावत्कथिक।<sup>२</sup>

१. (क) भगवती २५/७/४५३

२. (क) उत्तरा. २८/टि. २६

(ख) उत्तरा. २८/३२-३३

(ख) भगवती २५/७/४५४

(ग) स्थानां. ५/२/१३६



**प्रश्न ८९. इत्वरिक और यावत्कथिक में क्या अंतर है ?**

**उत्तर**—जिनका सामायिक चारित्र इत्वरिक अर्थात् अल्पकाल की अवधि वाला हो, जिनको कुछ समय के बाद छेदोपस्थानीय चारित्र दिया जाने वाला हो, वे इत्वरिक-सामायिकसंयत कहलाते हैं। यह भरत-ऐरावत क्षेत्रों में प्रथम व अंतिम तीर्थकरों के समय होता है।

सामान्यतया सात दिन के बाद छेदोपस्थानीयचारित्र दिया जाता है किन्तु नौ तत्त्व की जानकारी के अभाव में प्रतिक्रमण कंठस्थ न हो अथवा माता-पिता आदि निकट पारिवारिकजन निकट-भविष्य में दीक्षित होना चाहते हों—इन कारणों से नवदीक्षित साधुओं को उत्कृष्ट छह मास तक सामायिक चारित्र (छोटी दीक्षा) में रखा जा सकता है। जिनको छेदोपस्थापनीय चारित्र पहले आता है, वे संयम पर्याय में बड़े होते हैं।

जिनका सामायिक चारित्र यावत्कथिक अर्थात् जीवन पर्यन्त रहता है, वे साधु यावत्कथिक-सामायिकसंयत कहलाते हैं। यह भरत एवं ऐरावत क्षेत्रों में प्रथम व अंतिम तीर्थकरों के समय को छोड़कर शेष बाईस तीर्थकरों के समय तथा महाविदेह क्षेत्र में होता है।<sup>१</sup>

**प्रश्न ९०. वर्तमान काल में साधु के सामायिक चारित्र कितने समय का होता है ?**

**उत्तर**—जघन्य सात दिन, मध्यम चार मास और उत्कृष्ट साढ़े छह मास।

**प्रश्न ९१. सामायिक चारित्र में कितने ज्ञान पाए जाते हैं ?**

**उत्तर**—प्रथम चार ज्ञान—१. मतिज्ञान २. श्रुतज्ञान ३. अवधिज्ञान ४. मनःपर्यव-ज्ञान।<sup>२</sup>

**प्रश्न ९२. सामायिक चारित्र में कितनी लेश्याएं पाई जाती है ?**

**उत्तर**—छह लेश्याएं—१. कृष्ण लेश्या २. नील लेश्या ३. कापोत लेश्या ४. तैजस लेश्या ५. पद्म लेश्या ६. शुक्ल लेश्या।<sup>३</sup>

**प्रश्न ९३. सामायिक चारित्र में कितने समुद्घात होते हैं ?**

**उत्तर**—छह समुद्घात—१. वेदना २. कषाय ३. मारणान्तिक ४. वैक्रिय ५. आहारक ६. तैजस।<sup>४</sup>

**प्रश्न ९४. सामायिक चारित्र में उत्कृष्ट कितने पूर्वधर होते हैं ?**

**उत्तर**—उत्कृष्ट—१४ पूर्वधर।

१. उत्तरा. २८/टि. २६

२. भगवती २५/७/४६६

३. भगवती २५/७/५०२

४. भगवती २५/७/५४२

प्रश्न ६५. सामायिक चारित्र में लीन साधक आराधक होने पर कौन से देवलोक तक जा सकते हैं।

उत्तर—छब्बीसवें देवलोक।<sup>१</sup>

प्रश्न ६६. सामायिक चारित्र एक भव की अपेक्षा उत्कृष्टतः कितनी बार प्राप्त हो सकता है ?

उत्तर—१०० (नौ सौ) बार।

प्रश्न ६७. सामायिक चारित्र अनेक भव की अपेक्षा उत्कृष्टतः कितनी बार प्राप्त हो सकता है ?

उत्तर—७२०० सौ बार।

प्रश्न ६८. सामायिक चारित्र की एक जीव की अपेक्षा जघन्य व उत्कृष्ट स्थिति कितनी होती है ?

उत्तर—जघन्य—अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट (कुछ कम) करोड़ पूर्व।

प्रश्न ६९. सामायिक चारित्र की अनेक जीवों की अपेक्षा स्थिति कितनी है ?

उत्तर—शाश्वत, क्योंकि महाविदेह क्षेत्र में सामायिक संयत सदा रहते हैं।

प्रश्न १००. सामायिक चारित्र में गुणस्थान कितने पाते है ?

उत्तर—चार—प्रमत्त संयत गुणस्थान, अप्रमत्त संयत गुणस्थान, निवृत्ति बादर गुणस्थान, अनिवृत्ति बादर गुणस्थान।<sup>२</sup>

प्रश्न १०१. सामायिक चारित्र में जीव के भेद कितने पाये जाते हैं ?

उत्तर—एक—चौदहवां (संज्ञी पञ्चेन्द्रिय का पर्याप्त)।<sup>३</sup>

प्रश्न १०२. सामायिक चारित्र में योग कितने पाये जाते हैं ?

उत्तर—चौदह—कार्मण योग को छोड़कर।<sup>४</sup>

प्रश्न १०३. सामायिक चारित्र में उपयोग कितने पाये जाते हैं ?

उत्तर—सात—प्रथम चार ज्ञान, तीन दर्शन।<sup>५</sup>

प्रश्न १०४. सामायिक चारित्र में भाव कितने पाये जाते हैं ?

उत्तर—पांच—औदयिक, औपशमिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक, पारिणामिक भाव।<sup>६</sup>

१. भगवती २५/७/४८१

४. २१ द्वार

२. २१ द्वार

५. वही

३. वही

६. वही

प्रश्न १०५. सामायिक चारित्र में शरीर कितने पाये जाते हैं ?

उत्तर—पांच—औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तैजस और कार्मण।

प्रश्न १०६. सामायिक चारित्र में आत्मा ?

उत्तर—आठ—द्रव्य आत्मा, कषाय आत्मा, योग आत्मा, उपयोग आत्मा, ज्ञान आत्मा, दर्शन आत्मा, चारित्र आत्मा और वीर्य आत्मा।<sup>१</sup>

प्रश्न १०७. सामायिक चारित्र में दण्डक कौनसा ?

उत्तर—एक—इकीसवां (मनुष्य पञ्चेन्द्रिय)।<sup>२</sup>

प्रश्न १०८. सामायिक चारित्र में वीर्य कौनसा ?

उत्तर—एक—पंडित वीर्य।<sup>३</sup>

प्रश्न १०९. सामायिक चारित्र में लब्धि कितनी पाई जाती है।

उत्तर—पांच—दान, लाभ, भोग, उपभोग, वीर्य।<sup>४</sup>

प्रश्न ११०. सामायिक चारित्र में पक्ष कितने पाये जाते हैं ?

उत्तर—एक—शुक्ल पक्ष।<sup>५</sup>

प्रश्न १११. सामायिक चारित्र में दृष्टि कितनी पायी जाती है ?

उत्तर—एक—सम्यक् दृष्टि।<sup>६</sup>

प्रश्न ११२. सामायिक चारित्र भवी या अभवी ?

उत्तर—भवी।<sup>७</sup>

प्रश्न ११३. छेदोपस्थापनीयचारित्र का क्या अर्थ है ?

उत्तर—जिसमें सामायिकचारित्र की पर्याय को छेदकर पांच महाव्रत रूप चारित्र की उपस्थापना की जाए वह छेदोपस्थापनीय-चारित्र होता है। उक्त चारित्र में पांच महाव्रतों के प्रत्याख्यान कराए जाते हैं। इस चारित्र वाले मुनि का चारित्र छेदोपस्थापनीयचारित्र कहलाता है।

प्रश्न ११४. छेदोपस्थापनीय चारित्र कितने प्रकार का होता है ?

उत्तर—दो प्रकार का होता है—

सातिचार—साधु किसी बड़े अतिचार—दोष का सेवन कर संयम से पतित हो जाता है, वह पुनः दीक्षित होता है। कोई मुनि साधु जीवन त्याग कर गृहस्थ बन जाता है, कालान्तर में पुनः दीक्षित होता है। इन दोनों

१. २१ द्वार

२. वही

३. वही

४. वही

५. २१ द्वार

६. वही

७. वही

८. भगवती २५/७/४५५

स्थितियों में छेदोपस्थापनीय चारित्र है एवं पुनः दीक्षा लेते हैं, वे सातिचार-छेदोपस्थापनीयसंयत कहलाता हैं।

निरतिचार-निर्दोष मुनि को आगमविधि के अनुसार छेदोपस्थापनीय चारित्र दिया जाता है, वे साधु निरतिचार छेदोपस्थापनीय-संयत कहलाते हैं। ये दो प्रकार के होते हैं—१. नवदीक्षित मुनि, जिन्हें सात दिन से चार मास से या छः (साढ़ा छः) मास से छेदोप-स्थापनीय चारित्र दिया जाता है।<sup>१</sup> २. केशीस्वामिवत् वे साधु जो तेईसवें तीर्थंकर के संघ से चौईसवें तीर्थंकर के संघ में प्रवेश करते हैं।

### प्रश्न ११५. छेदोपस्थापनीय-संयतों की विशेष जानकारी दीजिए?

उत्तर—ये साधु प्रथम एवं अंतिम तीर्थंकरों के शासन में ही होते हैं। इनको यह चारित्र एकभव की अपेक्षा जघन्य एक-बार और उत्कृष्ट १२० बार तथा अनेक भवों की अपेक्षा जघन्य दो बार व उत्कृष्ट ९६० बार प्राप्त हो सकता है। ये नए बनने की अपेक्षा एक साथ उत्कृष्ट पृथक्शत एवं पूर्वपर्याय की अपेक्षा पृथक्शत (२०० से ९०० तक) करोड़ की संख्या में पहुंच जाते हैं। इनका शेष वर्णन सामायिकसंयतों के तुल्य ही है।

### प्रश्न ११६. छेदोपस्थापनीय चारित्र में कितने ज्ञान पाये जाते हैं?

उत्तर—प्रथम चार ज्ञान—१. मतिज्ञान २. श्रुतज्ञान ३. अवधिज्ञान ४. मनःपर्यव-ज्ञान।<sup>२</sup>

### प्रश्न ११७. छेदोपस्थापनीय चारित्र में कितनी लेश्याएं पाई जाती हैं?

उत्तर—छह लेश्याएं—१. कृष्ण लेश्या २. नील लेश्या ३. कापोत लेश्या ४. तैजस लेश्या ५. पद्म लेश्या ६. शुक्ल लेश्या।<sup>३</sup>

### प्रश्न ११८. छेदोपस्थापनीय चारित्र में कितने समुद्घात होते हैं?

उत्तर—छह केवली का छोड़कर।<sup>४</sup>

### प्रश्न ११९. छेदोपस्थापनीय चारित्र का साधक उत्कृष्ट कितने पूर्व का ज्ञाता होता है?

उत्तर—उत्कृष्ट—१४ पूर्व का।

### प्रश्न १२०. छेदोपस्थापनीय चारित्र का साधक आराधक होने पर कौन से देवलोक तक जा सकता है।

१. उत्तरा. २८/टि. २६

२. भगवती २५/७/४६६

३. भगवती २५/७/५०२

४. भगवती २५/७/५४२

उत्तर—छब्बीसवें देवलोक तक ।<sup>१</sup>

प्रश्न १२१. छेदोपस्थापनीय चारित्र एक भव की अपेक्षा उत्कृष्ट कितनी बार प्राप्त हो सकता है ?

उत्तर—१२० (एक सौ बीस) बार ।

प्रश्न १२२. छेदोपस्थापनीय चारित्र अनेक भव की अपेक्षा उत्कृष्ट कितनी बार प्राप्त हो सकता है ?

उत्तर—९६० (नौ सौ साठ) बार ।

प्रश्न १२३. छेदोपस्थापनीय चारित्र की एक जीव की अपेक्षा जघन्य व उत्कृष्ट स्थिति कितनी होती है ।

उत्तर—जघन्य अंतर्मुहूर्त । उत्कृष्ट (कुछ कम) करोड़ पूर्व ।

प्रश्न १२४. छेदोपस्थापनीय चारित्र की अनेक जीवों की अपेक्षा स्थिति कितनी है ?

उत्तर—भगवान् ऋषभ तथा महावीर का शासन काल जितना है उतनी स्थिति ।

प्रश्न १२५. छेदोपस्थापनीय चारित्र में गुणस्थान कितने पाते हैं ?

उत्तर—चार—प्रमत्त संयत गुणस्थान, अप्रमत्त संयत गुणस्थान, निवृत्ति बादर, अनिवृत्ति बादर ।

प्रश्न १२६. छेदोपस्थापनीय चारित्र में जीव के भेद कितने पाये जाते हैं ?

उत्तर—एक—चौदहवां (संज्ञी पञ्चेन्द्रिय का पर्याप्त) ।<sup>२</sup>

प्रश्न १२७. छेदोपस्थापनीय चारित्र में योग कितने पाये जाते हैं ?

उत्तर—चौदह—(१४)—कर्मण योग को छोड़कर ।<sup>३</sup>

प्रश्न १२८. छेदोपस्थापनीय चारित्र में उपयोग कितने पाये जाते हैं ?

उत्तर—सात—प्रथम चार ज्ञान, तीन दर्शन ।<sup>४</sup>

प्रश्न १२९. छेदोपस्थापनीय चारित्र में भाव कितने पाये जाते हैं ?

उत्तर—पांच ।<sup>५</sup>

प्रश्न १३०. छेदोपस्थापनीय में शरीर कितने पाये जाते हैं ?

उत्तर—पांच—औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तैजस, कर्मण ।

प्रश्न १३१. छेदोपस्थापनीय चारित्र में आत्मा कितनी पायी जाती है ?

१. भगवती ५/७/४८१

५. २१ द्वार

२. २१ द्वार

६. २१ द्वार

४. २१ द्वार

उत्तर—आठ।<sup>१</sup>

प्रश्न १३२. छेदोपस्थापनीय चारित्र में दण्डक कौन सा ?

उत्तर—एक—इक्कीसवां (मनुष्य पञ्चेन्द्रिय)।<sup>२</sup>

प्रश्न १३३. छेदोपस्थापनीय चारित्र में वीर्य कौन सा ?

उत्तर—एक—मंडित वीर्य।<sup>३</sup>

प्रश्न १३४. छेदोपस्थापनीय चारित्र में लब्धि कितनी पाई जाती है।

उत्तर—पांच—दान, लाभ, भोग, उपभोग, वीर्य।<sup>४</sup>

प्रश्न १३५. छेदोपस्थापनीय चारित्र में पक्ष कितने पाये जाते हैं ?

उत्तर—एक—शुक्ल पक्ष।<sup>५</sup>

प्रश्न १३६. छेदोपस्थापनीय चारित्र में दृष्टि कितनी पायी जाती है ?

उत्तर—एक—सम्यक् दृष्टि।<sup>६</sup>

प्रश्न १३७. छेदोपस्थापनीय चारित्र भवी या अभवी ?

उत्तर—भवी।<sup>७</sup>

प्रश्न १३८. वर्तमान समय के साधु-साध्वियों में कितने चारित्र हो सकते हैं ?

उत्तर—भरतक्षेत्र में वर्तमान में दो चारित्र हैं—सामायिक व छेदोपस्थापनीय एवं महाविदेह में तीन छेदोपस्थापनीय व परिहारविशुद्धि को छोड़कर।

प्रश्न १३९. परिहारविशुद्धि चारित्र की परिभाषा एवं विधि क्या है ?

उत्तर—परिहार का अर्थ तप है। जिसमें विशेष तपस्या द्वारा आत्मा की विशुद्धि की जाती है, उसे परिहारविशुद्धि-चारित्र कहते हैं। इस चारित्र के धनी परिहारविशुद्धि-संयत कहलाते हैं। वे गण से अलग होकर अठारह मास तक कठोर साधना करते हैं।<sup>८</sup>

यह साधना तीर्थकरों से ग्रहण की जाती है या जिन्होंने ग्रहण की हो, उनके पास ग्रहण की जाती है (तीसरी पीढ़ी नहीं चलती)। ग्रहण करनेवाले नव साधु होते हैं, कम से कम बीस वर्ष के दीक्षित होते हैं तथा जघन्य नवमपूर्व की तीसरी आचार वस्तु एवं उत्कृष्ट देश ऊन दशपूर्व के ज्ञानी होते हैं।

साधना करने वाले नव साधुओं में पहले चार साधु तपस्या करते हैं, चार

१. २१ द्वार

२. २१ द्वार

३. २१ द्वार

४. २१ द्वार

५. २१ द्वार

६. २१ द्वार

७. २१ द्वार

८. भगवती २५/७

उनकी सेवा करते हैं और एक आचार्य के रूप में रहते हैं। उनके पास आठों मुनि आलोचना-प्रत्याख्यान आदि करते हैं एवं उपदेश सुनते हैं। तपस्वी मुनि पारिहारिक, सेवारत मुनि अनुपारिहारिक एवं आचार्य कल्पस्थित कहलाते हैं अथवा तपस्या करने वाले निर्विशयमान तथा तपस्या से निवृत्त होकर सेवा करने वाले निर्विष्टकायिक कहे जाते हैं।

उनकी तपस्या का क्रम इस प्रकार है—ग्रीष्मकाल में जघन्य एकान्तर, मध्यम बेले-बेले एवं उत्कृष्ट तेले-तेले तप। शीतकाल में जघन्य बेले-बेले, मध्यम तेले-तेले और उत्कृष्ट चोले-चोले तप। चातुर्मास में जघन्य तेले-तेले, मध्यम चोले-चोले तथा उत्कृष्ट पंचोले-पंचोले तप। पारणे में सदा आयंबिल करते हैं। तीसरे प्रहर में भिक्षार्थ जाते हैं, संसृष्ट-असंसृष्ट पिण्डैषणाओं को छोड़कर आहार-पानी ग्रहण करते हैं। सेवा करने वाले साधु एवं आचार्य प्रतिदिन आयंबिल करते हैं। अधिक तपस्या नहीं करते।

इस प्रकार छह मास व्यतीत होने पर सेवारत साधु तपस्या करते हैं, तपस्वी सेवा करते हैं और आचार्य-आचार्य के रूप में ही रहते हैं। यह क्रम भी छह मास तक चलता है। बारह मास पूर्ण होने के बाद फिर छह मास तक आचार्य तपस्या करते हैं, सात साधु उनकी सेवा करते हैं एवं एक को आचार्यपद पर स्थापित किया जाता है।<sup>१</sup>

इस प्रकार अठारह मास में परिहार तप का कल्प पूरा होता है। कल्प पूरा होने पर कई साधु तो इसी कल्प का पुनः-पुनः आरंभ करते हैं। कई जिनकल्प स्वीकार कर लेते हैं एवं कई पुनः संघ में आ जाते हैं। गण में आने वाले इत्वरिक एवं जिनकल्प व पुनः इसी कल्प को ग्रहण करने वाले यावत्कथिक कहलाते हैं। इत्वरिकों को देवादि द्वारा उपसर्ग तथा असह्य रोगादि नहीं होते, यावत्कथिकों को हो सकते हैं।<sup>२</sup>

**प्रश्न १४०. परिहारविशुद्धि चारित्र में कितने ज्ञान पाये जाते हैं?**

उत्तर—प्रथम चार ज्ञान—१. मतिज्ञान २. श्रुतज्ञान ३. अवधिज्ञान ४. मनःपर्यव-ज्ञान।<sup>३</sup>

**प्रश्न १४१. परिहारविशुद्धि चारित्र में लेश्याएं कितनी?**

उत्तर—तीन शुभ—१. तेजोलेश्या २. पद्म लेश्या ३. शुक्ल लेश्या।<sup>४</sup>

१. उत्तरा. २८/टि. २६

(ख) प्रवचनसारोद्धार ६६

२. (क) बृहत्कल्प ६।१८ सूत्र ६४६३ से  
६४८०

३. भगवती २५/७/४६६

३. भगवती २५/७/५०२

प्रश्न १४२. परिहारविशुद्धि चारित्र में कितने समुद्घात होते हैं ?

उत्तर—तीन समुद्घात—१. वेदना २. कषाय ३. मारणान्तिक।<sup>१</sup>

प्रश्न १४३. परिहारविशुद्धि चारित्र के साधक कितने पूर्व के ज्ञाता होते हैं ?

उत्तर—जघन्य—नवम पूर्व तीसरी आचार वस्तु तथा उत्कृष्ट कुछ कम दस पूर्व के ज्ञाता।

प्रश्न १४४. परिहारविशुद्धि चारित्र का साधक आराधक होने पर कौन से देवलोक तक जा सकता है।

उत्तर—जघन्य—प्रथम देवलोक। उत्कृष्ट—आठवां देवलोक।<sup>२</sup>

प्रश्न १४५. परिहारविशुद्धि चारित्र एक भव की अपेक्षा कितनी बार प्राप्त हो सकता है ?

उत्तर—जघन्य एक बार और उत्कृष्ट तीन बार।

प्रश्न १४६. परिहारविशुद्धि चारित्र तीन भव की अपेक्षा कितनी बार प्राप्त हो सकता है ?

उत्तर—जघन्य दो बार, उत्कृष्ट सात बार।

प्रश्न १४७. परिहारविशुद्धि चारित्र की एक जीव की अपेक्षा जघन्य व उत्कृष्ट स्थिति कितनी होती है ?

उत्तर—जघन्य एक समय, उत्कृष्ट देश ऊन (२९ वर्ष कम) करोड़ पूर्व।

प्रश्न १४८. परिहारविशुद्धि चारित्र में गुणस्थान ?

उत्तर—दो—प्रमत्त संयत गुणस्थान, अप्रमत्त संयत गुणस्थान।<sup>३</sup>

प्रश्न १४९. परिहारविशुद्धि चारित्र में जीव के भेद कितने पाये जाते हैं ?

उत्तर—एक—चौदहवां (संज्ञी पञ्चेन्द्रिय का पर्याप्त)।<sup>४</sup>

प्रश्न १५०. परिहारविशुद्धि चारित्र में योग कितने पाये जाते हैं ?

उत्तर—नौ—चार मनो योग, चार वचन योग और औदारिक काय योग।<sup>५</sup>

प्रश्न १५१. परिहारविशुद्धि चारित्र में उपयोग कितने पाये जाते हैं ?

उत्तर—सात—प्रथम चार ज्ञान, तीन दर्शन।<sup>६</sup>

प्रश्न १५२. परिहारविशुद्धि चारित्र में भाव कितने पाये जाते हैं ?

उत्तर—पांच—उदय, उपशम, क्षायिक, क्षयोपशमिक, पारिणामिक भाव।<sup>७</sup>

१. भगवती २५/७/५४२

५. २१ द्वार

२. भगवती २५/७/५८१

६. २१ द्वार

३. २१ द्वार

७. २१ द्वार

४. २१ द्वार



प्रश्न १५३. परिहारविशुद्धि में शरीर कितने पाये जाते हैं ?

उत्तर—तीन—आदारिक, तैजस, कर्मण ।<sup>१</sup>

प्रश्न १५४. परिहारविशुद्धि चारित्र में आत्मा कितनी ?

उत्तर—आठ—द्रव्य आत्मा, कषाय आत्मा, योग आत्मा, उपयोग आत्मा, ज्ञान आत्मा, दर्शन आत्मा, चारित्र आत्मा और वीर्य आत्मा ।<sup>२</sup>

प्रश्न १५५. परिहारविशुद्धि चारित्र में दण्डक कितने पाये जाते हैं ?

उत्तर—एक—इक्कीसवां (मनुष्य पञ्चेन्द्रिय) ।<sup>३</sup>

प्रश्न १५६. परिहारविशुद्धि चारित्र में वीर्य कितने पाये जाते हैं ?

उत्तर—एक—पंडित वीर्य ।<sup>४</sup>

प्रश्न १५७. परिहारविशुद्धि चारित्र में लब्धि कितनी पाई जाती है।

उत्तर—पांच—दान, लाभ, भोग, उपभोग, वीर्य ।<sup>५</sup>

प्रश्न १५८. परिहारविशुद्धि चारित्र में पक्ष कितने ?

उत्तर—एक—शुक्ल पक्ष ।<sup>६</sup>

प्रश्न १५९. परिहारविशुद्धि चारित्र में दृष्टि कितनी पायी जाती हैं ?

उत्तर—एक—सम्यक् दृष्टि ।<sup>७</sup>

प्रश्न १६०. परिहारविशुद्धि चारित्र का साधक भवी या अभवी ?

उत्तर—भवी ।<sup>८</sup>

प्रश्न १६१. सूक्ष्मसंपराय चारित्र का अर्थ क्या है ?

उत्तर—सम्पराय का अर्थ कषाय है। जिस चारित्र में सूक्ष्मसंपराय अर्थात् संज्वलनकषाय (लोभ) का सूक्ष्म-अंश रहता है उसको सूक्ष्मसंपराय चारित्र कहते हैं।

प्रश्न १६१. सूक्ष्मसंपराय चारित्र में कितने ज्ञान पाये जाते हैं ?

उत्तर—प्रथम चार ज्ञान—१. मतिज्ञान २. श्रुतज्ञान ३. अवधिज्ञान ४. मनःपर्यव-ज्ञान ।<sup>९</sup>

प्रश्न १६२. सूक्ष्मसंपराय चारित्र में शरीर कितने पाये जाते हैं ?

उत्तर—तीन शरीर—औदारिक, तैजस, कर्मण ।<sup>१०</sup>

१. भगवती २५/७/४७६

६. २१ द्वार

२. २१ द्वार

७. २१ द्वार

३. २१ द्वार

८. २१ द्वार

४. २१ द्वार

९. भगवती २७/७/४६९

५. २१ द्वार

१०. भगवती २५/७/४७६

प्रश्न १६३. सूक्ष्मसंपराय चारित्र में कौन सी लेश्या पाई जाती है ?

उत्तर—एक—शुक्ल लेश्या ।<sup>१</sup>

प्रश्न १६४. सूक्ष्मसंपराय चारित्र में कितने समुद्घात होते हैं ?

उत्तर—एक भी नहीं ।<sup>२</sup>

प्रश्न १६५. सूक्ष्मसंपराय चारित्र का साधक उत्कृष्ट कितने पूर्व का ज्ञाता होता है ?

उत्तर—१४ पूर्व का ।

प्रश्न १६६. सूक्ष्मसंपराय चारित्र का साधक आराधक होने पर कौन से देवलोक तक जा सकता है ।

उत्तर—पांच अनुत्तर विमान ।<sup>३</sup>

प्रश्न १६७. सूक्ष्मसंपराय चारित्र कितने भवों में प्राप्त हो सकता है ?

उत्तर—जघन्य एक भव, उत्कृष्ट तीन भव ।

प्रश्न १६८. सूक्ष्मसंपराय चारित्र एक भव की अपेक्षा कितनी बार प्राप्त हो सकता है ?

उत्तर—जघन्य एक बार, उत्कृष्ट चार बार ।

प्रश्न १६९. सूक्ष्मसंपराय चारित्र तीन भव की अपेक्षा कितनी बार प्राप्त हो सकता है ?

उत्तर—नौ बार ।

प्रश्न १७०. सूक्ष्मसंपराय चारित्र की एक जीव की अपेक्षा स्थिति कितनी होती है ?

उत्तर—जघन्य एक समय, उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त ।

प्रश्न १७१. सूक्ष्मसंपराय चारित्र में कौन सा गुणस्थान होता है ?

उत्तर—एक—सूक्ष्मसंपराय गुणस्थान (दसवां) ।<sup>४</sup>

प्रश्न १७२. सूक्ष्मसंपराय चारित्र में जीव का भेद कौन सा पाया जाता है ?

उत्तर—एक—चौदहवां (संज्ञी पञ्चेन्द्रिय का पर्याप्त) ।<sup>५</sup>

प्रश्न १७३. सूक्ष्मसंपराय चारित्र में योग कितने पाये जाते हैं ?

उत्तर—पांच—सत्य मन, व्यवहार मन, सत्य भाषा, व्यवहार भाषा, औदारिक काय योग ।<sup>६</sup>

१. भगवती २५/७/५०२

४. २१ द्वार

२. भगवती २५/७/५४२

५. २१ द्वार

३. भगवती २५/७/४८१

६. २१ द्वार

प्रश्न १७४. सूक्ष्मसंपराय चारित्र में उपयोग कितने पाये जाते हैं ?

उत्तर—चार—प्रथम चार ज्ञान ।<sup>१</sup>

प्रश्न १७५. सूक्ष्मसंपराय चारित्र में भाव कितने पाये जाते हैं ?

उत्तर—पांच—औदयिक, औपशमिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक, पारिणामिक भाव ।<sup>२</sup>

प्रश्न १७६. सूक्ष्मसंपराय चारित्र में आत्मा कितनी पायी जाती है ?

उत्तर—आठ ।<sup>३</sup>

प्रश्न १७७. सूक्ष्मसंपराय चारित्र में दण्डक कितने पाये जाते हैं ?

उत्तर—एक—इक्कीसवां (मनुष्य पञ्चेन्द्रिय) ।<sup>४</sup>

प्रश्न १७८. सूक्ष्मसंपराय चारित्र में वीर्य कौनसा पाया जाता है ?

उत्तर—एक—पंडित वीर्य ।<sup>५</sup>

प्रश्न १७९. सूक्ष्मसंपराय चारित्र में लब्धि कितनी पाई जाती है ।

उत्तर—पांच—दान, लाभ, भोग, उपभोग, वीर्य ।<sup>६</sup>

प्रश्न १८०. सूक्ष्मसंपराय चारित्र में पक्ष कौन सा होता है ?

उत्तर—एक—शुक्ल पक्ष ।<sup>७</sup>

प्रश्न १८१. सूक्ष्मसंपराय चारित्र में दृष्टि कितनी पायी जाती है ?

उत्तर—एक—सम्यक् दृष्टि ।<sup>८</sup>

प्रश्न १८२. सूक्ष्मसंपराय चारित्र का साधक भवी या अभवी ?

उत्तर—भवी ।<sup>९</sup>

प्रश्न १८३. यथाख्यातचारित्र किसे कहते हैं तथा उसके कितने प्रकार है ?

उत्तर—सर्वथा कषाय का उदय न रहने से जो चारित्र बिल्कुल निरतिचार-दोष-रहित होता है, उसे यथाख्यातचारित्र कहते हैं। इसमें कथन के अनुसार पूर्णतया चारित्र का पालन किया जाता है अर्थात् कथनी-करनी समान होती है। ये साधु दो प्रकार के होते हैं। छद्मस्थ और केवली ।<sup>१०</sup> छद्मस्थ के दो भेद—उपशांत मोह और क्षीण मोह। केवली के दो भेद—सयोगी केवली और अयोगी केवली।

१. भ. २५/७/४६८

२. २१ द्वार

३. २१ द्वार

४. २१ द्वार

५. २१ द्वार

६. २१ द्वार

७. २१ द्वार

८. २१ द्वार

९. २१ द्वार

१०. भ. २५/७/४५८

प्रश्न १८४. यथाख्यात चारित्र में कितने ज्ञान पाये जाते हैं?

उत्तर—पांच ज्ञान—१. मतिज्ञान २. श्रुतज्ञान ३. अवधिज्ञान ४. मनःपर्यवज्ञान ५. केवलज्ञान।<sup>१</sup>

प्रश्न १८५. यथाख्यात चारित्र में शरीर कितनी पाये जाते हैं?

उत्तर—तीन शरीर—औदारिक, तैजस, कार्मण।<sup>२</sup>

प्रश्न १८६. यथाख्यात चारित्र में कितनी लेश्याएं पाई जाती हैं?

उत्तर—एक—परम शुक्ल लेश्या, चौदहवें गुणस्थान में लेश्या नहीं।<sup>३</sup>

प्रश्न १८७. यथाख्यात चारित्र में कितने समुद्घात होते हैं?

उत्तर—एक—केवली समुद्घात।<sup>४</sup>

प्रश्न १८८. यथाख्यात चारित्र का साधक उत्कृष्ट कितने पूर्व का ज्ञाता होता है?

उत्तर—उत्कृष्ट १४ पूर्व का (ग्यारहवें, बारहवें गुणस्थान की अपेक्षा)।

प्रश्न १८९. यथाख्यात चारित्र कितने भवों में प्राप्त हो सकता है?

उत्तर—जघन्य एक भव, उत्कृष्ट तीन भव।

प्रश्न १९०. यथाख्यात चारित्र एक भव की अपेक्षा कितनी बार प्राप्त हो सकता है?

उत्तर—जघन्य एक बार, उत्कृष्ट दो बार।

प्रश्न १९१. यथाख्यात चारित्र तीन भव की अपेक्षा?

उत्तर—जघन्य एक बार, उत्कृष्ट पांच बार।

प्रश्न १९२. यथाख्यात चारित्र आराधक होने पर उसकी कौनसी गति है?

उत्तर—अनुत्तरविमान अथवा मोक्ष गति।<sup>५</sup>

प्रश्न १९३. एक जीव की अपेक्षा यथाख्यात चारित्र की जघन्य व उत्कृष्ट स्थिति कितनी होती है?

उत्तर—जघन्य अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट कुछ कम करोड़ पूर्व।

प्रश्न १९४. यथाख्यात चारित्र अनेक जीवों की अपेक्षा?

उत्तर—शाश्वत क्योंकि महाविदेह क्षेत्र में यथाख्यात चारित्र सदा है।

प्रश्न १९५. यथाख्यात चारित्र में गुणस्थान कितने पाते हैं?

१. भगवती २५/७/४६६

४. भगवती २५/७/५४२

२. भगवती २५/७/४७६

५. भगवती २५/७/४८२

३. भगवती २५/७/५०२

उत्तर—अंतिम चार—उपशांतमोह गुणस्थान, क्षीणमोह गुणस्थान, सयोगी केवली गुणस्थान, अयोगी केवली गुणस्थान।<sup>१</sup>

प्रश्न १९६. यथाख्यात चारित्र में जीव के भेद कितने पाये जाते हैं?

उत्तर—एक—चौदहवां (संज्ञी पञ्चेन्द्रिय का पर्याप्त)।<sup>२</sup>

प्रश्न १९७. यथाख्यात चारित्र में योग कितने पाये जाते हैं?

उत्तर—सात—(७)—सत्य मन, व्यवहार मन, सत्य भाषा, व्यवहार भाषा, औदारिक काय योग, औदारिक मिश्र काय योग, कर्मण काय योग।<sup>३</sup>

प्रश्न १९८. यथाख्यात चारित्र में उपयोग कितने पाये जाते हैं?

उत्तर—नौ—पांच ज्ञान, चार दर्शन।<sup>४</sup>

प्रश्न १९९. यथाख्यात चारित्र में भाव कितने पाये जाते हैं?

उत्तर—पांच—औदयिक, औपशमिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक, पारिणामिक भाव।<sup>५</sup>

प्रश्न २००. यथाख्यात चारित्र में आत्मा कितनी होती है?

उत्तर—सात—द्रव्य आत्मा, योग आत्मा, उपयोग आत्मा, ज्ञान आत्मा, दर्शन आत्मा, चारित्र आत्मा और वीर्य आत्मा।<sup>६</sup>

प्रश्न २०१. यथाख्यात चारित्र में दण्डक कितने पाये जाते हैं?

उत्तर—एक—इक्कीसवां (मनुष्य पञ्चेन्द्रिय)।<sup>७</sup>

प्रश्न २०२. यथाख्यात चारित्र में वीर्य कौनसा होता है?

उत्तर—एक—पंडित वीर्य।<sup>८</sup>

प्रश्न २०३. यथाख्यात चारित्र में लब्धि कितनी पाई जाती है।

उत्तर—पांच—दान, लाभ, भोग, उपभोग, वीर्य।<sup>९</sup>

प्रश्न २०४. यथाख्यात चारित्र में पक्ष कितने पाये जाते हैं?

उत्तर—एक—शुक्ल पक्ष।<sup>१०</sup>

प्रश्न २०५. यथाख्यात चारित्र में दृष्टि कितनी पायी जाती है?

उत्तर—एक—सम्यक् दृष्टि।<sup>११</sup>

प्रश्न २०६. यथाख्यात चारित्र का आराधक भवी या अभवी?

१. २१ द्वार

७. वही

२. वही

८. वही

३. वही

९. वही

४. वही

१०. वही

५. वही

११. वही

६. वही

उत्तर—भवी।<sup>१</sup>

**प्रश्न २०७. क्या उपर्युक्त संयतों का संहरण हो सकता है ?**

उत्तर—हां! पूर्व जन्म की शत्रुता से या अन्य किसी कारणवश देव आदि साधुओं को उठाकर ले जाते हैं किन्तु ये सात संहरण के अयोग्य माने गए हैं—१. श्रमणी (शुद्धसाध्वी) २. अवेदअवस्था में विद्यमान साधु ३. परिहार-विशुद्धसंयत ४. पुलाक निर्ग्रन्थ ५. अप्रमत्त साधु ६. चौदह पूर्वधर ७. आहारक लब्धिसंपन्न साधु।

**प्रश्न २०८. आराधक-विराधक साधु कौन होते हैं ?**

उत्तर—जो अपने ज्ञान-दर्शन-चारित्र की सम्यग् आराधना करते हैं, उनमें अतिचार-दोष नहीं लगाते अथवा दोष लग जाने पर सरल हृदय से उन दोषों की आलोचना कर समाधिमरण को प्राप्त होते हैं, वे आराधक कहलाते हैं। आराधना न करनेवाले विराधक कहलाते हैं।<sup>२</sup>

**प्रश्न २०९. श्रमण धर्म किसे कहते हैं ?**

उत्तर—श्रमण का अर्थ साधु है एवं साधुओं के लिये आचरण-योग्य धर्म श्रमणधर्म कहलाता है।

**प्रश्न २१०. दस श्रमणधर्म कौन-कौन से हैं ?**

उत्तर—श्रमण धर्म दस है<sup>३</sup>—१. क्षान्ति २. मुक्ति ३. आर्जव ४. मार्दव ५. लाघव ६. सत्य ७. संयम ८. तप ९. त्याग १०. ब्रह्मचर्य।

**प्रश्न २११. साधु के तीन मनोरथ कौन-कौन-से हैं ? उनका चिन्तन करने से क्या लाभ होता है।**

उत्तर—आगम में साधुओं के तीन मनोरथ वर्णित हैं।<sup>४</sup>

पहला मनोरथ है—साधु चिंतन करे कि वह शुभ समय कब आयेगा, जब मैं अल्प या बहुत श्रुत का अध्ययन करूंगा।

दूसरा मनोरथ है—साधु यह चिंतन करे कि वह शुभ दिन कब आयेगा, जब मैं एकलविहार भिक्षु-प्रतिमा अंगीकार करके विचरूंगा।

तीसरा मनोरथ है—साधु यह चिंतन करे कि वह शुभ समय कब आयेगा, जब मैं अंतिम संलेखना के द्वारा आहार-पानी का त्याग कर पादोपगमन-मरण स्वीकार कर जीवन-मरण की इच्छा न करता हुआ विचरूंगा।

इन तीन मनोरथों का चिंतन करता हुआ साधु महानिर्जरा एवं महापर्यवसान (प्रशस्त-अंत) वाला होता है।

१. २१ द्वा

२. भगवती ८/१०/४५१-४६६

३. स्थानांग १०/१६

४. स्थानांग ३/४९६-४९७

**प्रश्न २१२. साधुओं को किन-किन बातों का विशेष प्रयत्न करना चाहिये ?**

उत्तर—आगमानुसार साधुओं को में इन आठ बातों के विषय में अधिक से अधिक उद्यम एवं प्रयत्न करना चाहिए है—१. न सुने हुए धर्म को सुनने का प्रयत्न २. सुने हुए धर्म को ग्रहण करने एवं याद रखने का प्रयत्न ३. संयम द्वारा नए कर्मों को रोकने का प्रयत्न ४. तपस्या द्वारा पूर्वकृत कर्मों की निर्जरा का प्रयत्न ५. नये शिष्यों का संग्रह का प्रयत्न ६. नये शिष्यों को साधु का आचार एवं गोचर (गोचरी के भेद) सिखाने का प्रयत्न ७. ग्लान साधुओं की अग्लान-भाव से सेवा करने का प्रयत्न ८. साधर्मिक साधुओं में परस्पर कलह होने पर निष्पक्ष रहकर उसे शान्त करने का प्रयत्न।<sup>१</sup>

**प्रश्न २१३. साधुओं के सत्ताईस गुण कौन-कौन से हैं ?**

उत्तर—सत्ताईस गुण इस प्रकार हैं<sup>२</sup>—१-५. पांच महाव्रत ६-१०. पांच इन्द्रिय ११-१४. चार कषाय विजय १५. भावसत्य १६. करणसत्य १७. योगसत्य १८. क्षमा १९. वैराग्य २०. मनःसमाधारणता—मन को शुभ (निरवद्य) विचारों में स्थापित करना २१. वचनसमाधारणता—शुभ वचन बोलना २२. कायसमाधारणता—शरीर को शुभ कार्यों में स्थापित करना २३. ज्ञानसम्पन्नता २४. दर्शनसम्पन्नता २५. चारित्रसम्पन्नता २६. वेदना (कष्ट) को समभाव से सहन करना २७. मृत्यु को समभाव से सहन करना।

**प्रश्न २१४. साधु को पंचेन्द्रिय-निग्रह क्यों कहा है ?**

उत्तर—साधु श्रोत्रेन्द्रिय आदि ५ इन्द्रियों के २३ विषय और २४० विकार के प्रति राग-द्वेष न आए इसके लिए सतत प्रयत्नशील रहता है। अतः साधु पंचेन्द्रिय-निग्रह कहलाता है।

**प्रश्न २१५. भाव सत्य का क्या अर्थ है ?**

उत्तर—अंतरात्मा को शुद्ध रखना।

**प्रश्न २१६. करण सत्य से क्या तात्पर्य है ?**

उत्तर—कार्य की प्रामाणिकता।

**प्रश्न २१७. योग सत्य क्या है ?**

उत्तर—योग—मन, वचन, काया की विशुद्धि।

**प्रश्न २१८. साधुओं की इक्कीस उपमाएं कौन-कौन सी हैं ?**

उत्तर—साधुओं की इक्कीस उपमाएं इस प्रकार हैं—१. साधु कांसी के पात्रवत्

स्नेह (कामरागादि की स्निग्धता) से मुक्त है। २. शंखवत् उज्ज्वल हैं। उन पर सांसारिक मोहमाया का रंग नहीं चढ़ता। ३. परभव जानेवाले जीव की गतिवत् बिना रोकटोक विचरने वाले हैं। ४. अन्य धातुओं के मिश्रण से रहित अप्रतिबद्ध जातरूप अर्थात् गृहीत चारित्र को निरतिचार पालनेवाले हैं एवं दर्पणपट्ट के समान प्राकृत-प्रतिबिम्ब वाले हैं। ५. कछुए के समान निग्रही-पांच इन्द्रियों का गोपन करने वाले हैं। (कछुआ चार पैर, एक गर्दन-इन पांचों को ढाल द्वारा सुरक्षित रखता है)। ६. कमलपत्रवत् निर्लेप हैं। ७. आकाशवत् निरालम्ब रूप से विचरने वाले हैं। ८. वायु के समान निरालय-अप्रतिबन्धविहारी हैं। ९. चन्द्रमा के समान- सौम्य कान्ति वाले हैं। १०. सूर्य के समान दीप्त तेज वाले हैं। ११. समुद्र के समान गंभीर हैं (हर्ष-शोक में उनका चित्त विकृत नहीं होता)। १२. पक्षी के समान विप्रयुक्त (नियतवास व स्वजनादि के बंधनों से रहित) हैं। १३. मेरुपर्वत के समान अडोल (अनुकूल-प्रतिकूल उपसर्गों में अविचलित) हैं। १४. शरदऋतु के जल की तरह निर्मल हृदय वाले हैं। १५. भारण्डपक्षीवत् अप्रमत्त हैं। १६. गैंडे के (एक ही सींग होता है) शृंगवत् रागद्वेष-रहित एकाकी रूप में विचरने वाले हैं। १७. हाथी के समान शूर हैं-कषायादि भावशत्रुओं को जीतने में समर्थ हैं। १८. वृषभवत् जातस्थाम अर्थात् ग्रहण किये हुए संयमभार को जीवनपर्यन्त निभानेवाले हैं। १९. सिंह के समान दुर्धर्ष अर्थात् परीषहादि मृगों से नहीं हारने वाले हैं। २०. पृथ्वी के समान सहिष्णु हैं-सभी स्पर्शों को समभाव से सहने वाले हैं। २१. घृत आदि से अच्छी तरह हवन की हुई अग्निवत् ज्ञान और तप रूप तेज से जाज्वल्यमान हैं।<sup>१</sup>

**प्रश्न २१६. संयम धर्म का पालन करने में साधुओं को किसका सहारा अपेक्षित रहता है ? और क्यों रहता है ?**

**उत्तर-**हां! साधु इन पांचों के सहारे से संयम का पालन करते हैं अर्थात् श्रुतचारित्रधर्म का पालन करने में ये पांच आधार भूत हैं।<sup>२</sup>

(१) छह काय-पृथ्वी आधार रूप है। वह सोने-बैठने उपकरण रखने-परठने आदि क्रियाओं में उपकारक है। जल पीने या वस्त्र-पात्रादि धोने के काम आता है। आहार-गर्म पानी आदि में अग्निकाय का उपयोग है। वायु की जीवन के लिए अनिवार्य आवश्यकता है। संथारा-पात्र दण्ड वस्त्र-पीठ-पट्ट आदि उपकरण तथा आहार-औषधि आदि द्वारा वनस्पति

१. औपपातिक सूत्र के समवसरणाकारि

२. स्थाना. ५/३/१६२



धर्म पालन में उपकारक होती है। इसी प्रकार भेड़ आदि त्रस जीव भी (जिनको ऊन से कम्बल आदि बनते हैं) अनेक प्रकार से संयम पालन में सहायक होते हैं।

(२) गण—गुरु के परिवार को गण या गच्छ कहते हैं। गण में रहने वाले साधु को अन्य साधुओं के विनय से विपुल-निर्जरा होती है। सारणा-वारणा आदि से दोषों की प्राप्ति नहीं होती तथा गण के साधु धर्मपालन में एक-दूसरों की सहायता करते हैं।

(३) राजा—राजा दुष्टपुरुषों से साधुओं की रक्षा करता है अतः वह धर्म-पालन में सहायक है।

(४) गृहपति—(शय्यादाता) रहने के लिए स्थान देने से संयम का उपकारी है।

(५) शरीर—धार्मिक क्रिया-अनुष्ठानों का पालन शरीर द्वारा ही होता है अतः यह भी धर्म का सहायक है।

**प्रश्न २२०. समाधिपूर्वक संयम की आराधना कैसे हो सकती है ?**

**उत्तर—**आगम में साधुओं के लिए चार सुखशय्याएं अर्थात् संयम में सुख से शयन (रमण) करने के चार कार्य कहे हैं।'

१. वीतराग वाणी पर दृढ़ श्रद्धा एवं प्रतीति रखना पहली सुखशय्या है।

२. दूसरे साधुओं से लाभ की आशा-वांछा न करना यानि अपने लाभ में सदा संतुष्ट रहना दूसरी सुखशय्या है।

३. देवों एवं मनुष्यों संबंधी काम-भोगों की अभिलाषा न करना तीसरी सुखशय्या है।

४. आभ्युपगमिकी एवं औपक्रमिकी वेदना उत्पन्न होने पर तीर्थकरों की घोर तपस्याओं के कष्टों को याद करते हुए तीव्र वेदना को समभाव से सहन करना चौथी सुखशय्या है।

**प्रश्न २२१. उपघात किसे कहते हैं ?**

**उत्तर—**संयम की रक्षा के लिए साधु द्वारा ग्रहण की जाने वाली अशन-पान-वस्त्र-पात्र आदि वस्तुओं में किसी प्रकार का दोष होना उपघात कहलाता है।

**प्रश्न २२२. दस उपघात का संक्षिप्त परिचय क्या है ?**

**उत्तर—**१. उद्गमोपघात—उद्गम के आधाकर्मादि सोलह दोष लगाते हुए आहार-

१. स्थानांग ४।३।४५

वस्त्र-पात्र एवं शय्या को ग्रहण करना।

२. उत्पादनोपघात—उत्पादना के धात्री आदि सोलह दोषयुक्त आहारादि लेना।

३. एषणोपघात—एषणा के शंकितादि दस दोषों से युक्त आहारादि लेना।

४. परिकर्मोपघात—वस्त्र आदि को आगमविधि के अनुसार साधुओं के योग्य बनाना परिकर्म है एवं विधि का उल्लंघन करना।

५. परिहरणोपघात—परिहरण का अर्थ सेवन करना है। अकल्पनीय उपकरण, वसति एवं आहार का सेवन करना।

६. ज्ञानोपघात—ज्ञान पढ़ने में प्रमाद करना।

७. दर्शनोपघात—दर्शन-सम्यक्त्व में शङ्का-काङ्क्षा-विचिकित्सा आदि करना।

८. चारित्र्योपघात—पांच समिति, तीन गुप्ति एवं पांच महाव्रतों में दोष लगाना।

९. अप्रीतिकोपघात—गुरु आदि में पूज्यभाव न रखना तथा उनकी विनय-भक्ति न करना।

१०. संरक्षणोपघात—वस्त्र-पात्र एवं शरीरादि में ममत्व रखना।<sup>१</sup>

प्रश्न २२३. साधु जीवन में क्लेश उत्पन्न करने के कौन-कौन से कारण हैं?

उत्तर—क्लेश के दस कारण माने गए हैं<sup>२</sup>—१. उपधि—वस्त्र पात्रादि उपकरण २. उपाश्रय—रहने का स्थान ३. कषाय—क्रोधादि, ४. भक्त-पान (आहार-पानी), ५. मन, ६. वचन, ७. काया, ८. ज्ञान, ९. दर्शन, १०. चारित्र्य।

प्रश्न २२४. संयम जीवन में असमाधि के कारण कौन-कौन से हैं?

उत्तर—१. ईर्यासमिति का ध्यान न रखते हुए जल्दी-जल्दी चलना।

२. रात के समय या अंधेरे में (दिन के समय भी) बिना पूंजे चलना, बैठना, सोना एवं उपकरणादि लेना-रखना वाला।

३. अयोग्य रीति से पूंजना अर्थात् एक जगह पूंज कर दूसरी जगह पैर आदि धरना।

४. प्रमाण से अधिक मकान एवं पाट-बाजोटादि आसन रखना (अधिक रखने से पडिलेहणा आदि अच्छी तरह नहीं होती)।

५. गुरु आदि वृद्धों के सामने असभ्यता से बोलना।

६. स्थविर-आचार्य-गुरु आदि पूज्यजनों के महत्त्व का (आचार तथा शील में असद्वेषारोपण करके) उपहनन करना।

७. निष्प्रयोजन अथवा ऋद्धि, रस एवं साता-गौरव के वश, विभूषा के निमित्त तथा आधाकर्मादि आहार ग्रहण कर अथवा हिंसात्मक भाषण कर जीवों की हिंसा करना।

८. प्रतिक्षण अर्थात् बात-बात में क्रोध करना।

९. किसी के साथ कलह हो जाने पर उसे उपशांत न करना।

१०. पीठ पीछे निन्दा-चुगली करना।

११. शंकायुक्त पदार्थों के विषय में बार-बार निश्चयकारी वचन बोलना।

१२. नए-नए झगड़ों को उत्पन्न करना।

१३. क्षमापना द्वारा उपशांत किए हुए पुराने झगड़ों को पुनः उठाना।

१४. अकाल में आगमों का स्वाध्याय करना।

१५. भिक्षादाता गृहस्थ के हाथ-पैर सचित्त रजकणों से युक्त होने पर भी उससे भिक्षा लेना अथवा स्थंडिलभूमि से आकर पैरों का प्रमार्जन किए बिना आसन पर बैठना।

१६. प्रहर रात्रि के बाद (लोगों के सोने का समय होने पर) ऊंचे स्वर से व्याख्यान-स्वाध्याय आदि करना तथा दिन में भी किसी रोगी को कष्ट हो इस प्रकार जोर से बोलना।

१७. गण में भेद डालने वाले वचन बोलना एवं कार्य करना।

१८. कलह पैदा करना।

१९. सूर्योदय से सूर्यास्त तक भोजन करते रहना। (दिन भर मुंह चलाना)।

२०. एषणासमिति का ध्यान न रखना अर्थात् अनेषणीय-आहारादि लेना।<sup>१</sup>

**प्रश्न २२५. समाधि स्थान क्या है ?**

**उत्तर—**आत्मा का सम्यग्ज्ञान-दर्शन-चारित्र रूप मोक्ष मार्ग में रमण करना समाधि स्थान है।

**प्रश्न २२६. असमाधिस्थान से क्या तात्पर्य है ?**

**उत्तर—**अज्ञान-मिथ्यात्व-दुश्चारित्र में प्रवृत्त होना असमाधिस्थान है।

**प्रश्न २२७. संयम को पुष्ट करने वाले अठारह स्थान कौन-कौन से हैं ?**

**उत्तर—**१-६, व्रतषट्क—पांच महाव्रत तथा छठा रात्रिभोजन व्रत ७-१२. कायषट्क—छह काय की हिंसा के त्याग १३. अकल्पनीय आहारादि का त्याग १४. गृहस्थ के बर्तन में भोजन करने का त्याग १५. पल्ल्यङ्गादि-आसन पर बैठने-सोने का त्याग १६. गृहस्थ के घर (रसोई आदि में) बैठने का त्याग १७. स्नान करने का त्याग १८. शोभा-विभूषा करने का त्याग—संयम की रक्षा के लिए इन अठारह स्थानों (नियमों) का पालन करना परम आवश्यक है। जो इनमें से किसी एक नियम का भी भंग करता है, वह मुनि संयम से भ्रष्ट हो जाता है।<sup>१</sup>

**प्रश्न २२८. साधुओं का रहन-सहन कैसा होता है ?**

**उत्तर—**साधु निर्मम, निरहंकार, निःसंग और गौरवरहित होते हैं। वे त्रस-स्थावर सभी प्रकार के जीवों पर समभाव रखते हैं। वे लाभ-अलाभ, सुख-दुःख, जीवन-मरण, निन्दा-प्रशंसा तथा मान-अपमान में समान वृत्ति रखते हैं। वे कषाय, दण्ड, शल्य, भय, हास्य और शोक से निवृत्त होते हैं तथा निदान एवं बन्धन से मुक्त होते हैं। वे इहलोक-परलोक के सुखों की इच्छा नहीं रखते। उन्हें चाहे बसोले से काटा जाए या चन्दन से चर्चा जाए तथा आहार मिले या न मिले, वे समभाव में रहते हैं।<sup>२</sup>

**प्रश्न २२९. क्या साधुओं के सुख की तुलना देवता के सुखों से की जाती है ?**

**उत्तर—**संयम में रमण करने वाले साधुओं के सुख देवलोक के सुखों के समान हैं।<sup>३</sup> एक मास का दीक्षित साधु व्यन्तर देवों के सुखों का व्यतिक्रमण करता है<sup>४</sup> अर्थात् उनसे अधिक सुखी होता है। दो मास का दीक्षित असुरेन्द्रवर्णित-भवनपतिदेवों के सुखों का, तीन मास का दीक्षित असुरकुमार देवों के सुखों का, चार मास का दीक्षित ग्रह-नक्षत्र-ताराओं के सुखों का, पांच मास का दीक्षित चन्द्र-सूर्य के सुखों का, छह मास का दीक्षित प्रथम-द्वितीय स्वर्ग के सुखों का, सात मास का दीक्षित तीसरे-चौथे स्वर्ग के सुखों का, आठ मास का दीक्षित पांचवें छठे स्वर्ग के सुखों का, नव मास का दीक्षित सातवें-आठवें स्वर्ग के सुखों का, दस मास का दीक्षित ग्यारहवें-बारहवें स्वर्ग के सुखों का, ग्यारह मास का दीक्षित

१. (क) समवाओ १८/३

(ख) दसवे. ६/७

२. उत्तरा. १६/६०-६४

३. दसवें चूलिका प्रथम गाथा १०

४. भगवती १४/६

ग्रैवेयक (१३ से २१वें स्वर्ग तक) देवों के सुखों और बारह मास का दीक्षित साधु अनुत्तरविमान (२२ से २६ वें स्वर्ग तक) देवों के सुखों का व्यतिक्रमण करता है।

**प्रश्न २३०. साधुओं को धर्मोपदेश क्या सोचकर करना चाहिए ?**

**उत्तर**—दयाभाव से प्रेरित होकर चतुर्गतिरूप संसार में रहने वाले प्राणियों को तारने के लिए साधुओं को धर्मोपदेश करना चाहिए। लेकिन वह उपदेश श्रोताओं को १. अहिंसा, २. विरति, ३. उपशम, ४. निर्वाण, ५. शौच, ६. आर्जव, ७. मार्दव, ८. लाघव—इन आठ गुणों की तरफ खींचनेवाला होना चाहिए तथा उस उपदेश से खुद को एवं सुननेवालों को किसी भी प्रकार की पीड़ा नहीं होनी चाहिए।<sup>१</sup>

**प्रश्न २३१. संभोग किसे कहते हैं ?**

**उत्तर**—समान समाचारी वाले साधुओं के सम्मिलित आहार आदि व्यवहार को संभोग कहते हैं।

**प्रश्न २३२. संभोग के कितने प्रकार हैं ?**

**उत्तर**—संभोग के बारह प्रकार हैं।<sup>२</sup>

१. उद्गम, उत्पादना एवं एषणा के दोषों से रहित वस्त्र-पात्रादि उपधि को सांभोगिक साधुओं के साथ प्राप्त करना उपधिसंभोग है।

२. पास में आये हुए सांभोगिक अथवा अन्य सांभोगिक साधु को विधिपूर्वक शास्त्र पढ़ाना तथा दूसरे के पास जाकर स्वयं पढ़ना 'श्रुतसंभोग' है।

३. शुद्ध आहार-पानी का सेवन करना एवं परस्पर लेना-देना भक्त-पान संभोग है।

४. सांभोगिक अथवा अन्य सांभोगिक साधुओं के साथ वन्दना-आलोचना आदि करना अंजलि-प्रग्रहसंभोग है।

५. सांभोगिक साधुओं द्वारा सांभोगिक अथवा कारणवश अन्य सांभोगिक का शिष्यादि देना दानसंभोग है।

६. शय्या, उपधि, आहार, शिष्यप्रदान अथवा स्वाध्याय आदि के लिये सांभोगिक साधु को निमंत्रण देना निमंत्रण संभोग है।

७. ज्येष्ठ साधु को आता देखकर आसन से उठना अभ्युत्थानसंभोग है।

८. विधियुक्त वन्दना करना कृतिकर्मसंभोग है।

९. आहार-उपधि आदि देना, मलमूत्रादि परठना एवं वृद्ध आदि साधुओं की सेवा करना वैयावृत्यसंभोग है।

१०. शेषकाल चातुर्मास या स्थिरवास आदि में इकट्ठे होकर रहना समवसरणसंभोग है।

११. आसन आदि का देना संनिषद्यासंभोग है।

१२. पांच प्रकार की कथा के लिये एक जगह बैठकर व्यवहार करना कथाप्रबन्धसंभोग है।

**प्रश्न २३३. पांच प्रकार की कथा कौन-कौन सी है तथा उनसे क्या तात्पर्य है?**

**उत्तर—**१. वादकथा—पांच अथवा तीन अवयव वाले अनुमानवाक्य द्वारा छल और जाति आदि को छोड़कर किसी मत का समर्थन करना वाद कथा है।

२. जल्पकथा—दूसरे को पराजित करने के लिये, जिसमें छल, जाति एवं निग्रहस्थान का प्रयोग हो, उसे जल्पकथा कहते हैं।

३. वितण्डाकथा—एक का पक्ष लेकर दूसरे का दोष बताते हुए खण्डन करना वितण्डाकथा है।

४. प्रकीर्णकथा—साधारण बातों की चर्चा करना प्रकीर्ण-कथा है।

५. निश्चयकथा—अपवाद विषयक बातों की चर्चा करना निश्चयकथा है।<sup>१</sup>

**प्रश्न २३४. अन्य सांभोगिक कौन होते हैं ?**

**उत्तर—**उपरोक्त विवेचन के अनुसार जिसके साथ बारह संभोगों में कतिपय संभोगों का संबंध रखा जाता है, वे अन्य सांभोगिक कह जाते हैं।<sup>२</sup> कतिपय संभोगों का व्यवहार उन्हीं के साथ होता है जो एक दूसरे को साधु मान अपने-अपने विधानानुसार केशी स्वामी ने गोतम स्वामी को बैठने के लिए तृण, दर्भ, आदि दिये किन्तु आहार-पानी का लेन-देन नहीं किया इसलिए उनके साथ कतिपय संभोग थे।

**प्रश्न २३५. क्या साधु-साध्वियों के आपस में बारह संभोग होते हैं ?**

**उत्तर—**हां! साधु-साध्वियों को परस्पर सांभोगिक कहा है। वे एक-दूसरों के साथ यथाविधि सभी संभोग कर सकते हैं यानी आपस में उपधि-आहार आदि ले-दे सकते हैं, पढ़ सकते हैं, साथ बैठकर स्वाध्याय-व्याख्यान कर सकते

हैं, दीक्षा दे सकते हैं एवं विसंयोगी कर सकते हैं तथा विशेष परिस्थितिवश (अपवादमार्ग में) एक साथ भी रह सकते हैं एवं एक-दूसरे का स्पर्श भी कर सकते हैं।<sup>१</sup>

**प्रश्न २३६. साधु को विसांभोगिक (गण से बाहर) क्यों किया जाता है ?**

**उत्तर**—विसांभोगिक करने के पांच कारण निर्दिष्ट हैं—१. अकृत्य कार्य करने पर। २. अकृत्य कार्य करके उसकी आलोचना न करने पर। ३. आलोचना करके भी गुरु द्वारा दिये गये प्रायश्चित्त का पालन न करने पर। ४. गुरु द्वारा दिये गये प्रायश्चित्त का पालन शुरू करके भी उसे न निभाने पर। ५. स्थविरकल्पिक साधुओं के आचार में जो विशुद्ध आहार शय्यादि कल्पनीय है एवं जो मासकल्प की मर्यादा है, उसका अतिक्रमण करके समझाने पर भी 'मैं तो ऐसे ही करूंगा गुरुजी मेरा क्या कर सकते हैं' यों उच्छृंखलता दिखलाने पर।

आगम में कहा गया है कि आचार्य, उपाध्याय, स्थविर, कुल, गुण, संघ, ज्ञान, दर्शन एवं चारित्र्य इन नौ के प्रत्यनीक (विशुद्ध-आचरण करने वाले) व्यक्तियों को विसांभोगिक किया जा सकता है।<sup>२</sup>

**प्रश्न २३७. साधु-साध्वियों को प्रत्यक्ष रूप में विसांभोगिक किया जाता है या परोक्ष ?**

**उत्तर**—साधु साधु को एवं साध्वी साध्वी को विसांभोगिक करना चाहें तो उन्हें प्रत्यक्ष उनके दोषों का दिग्दर्शन करा कर सम्बन्ध-विच्छेद करना चाहिए किन्तु परोक्ष रूप में नहीं।<sup>३</sup> यदि साधु साध्वी का सम्बन्ध-विच्छेद करे तो प्रत्यक्ष रूप में उक्त कार्य नहीं कल्पता, साध्वी के द्वारा करवाना चाहिए। इसी प्रकार यदि साध्वी साधु का सम्बन्ध-विच्छेद करे तो उसे भी प्रत्यक्ष न करके किसी साधु द्वारा करवाना चाहिए। सम्बन्ध-विच्छेद करते समय यदि दोषी साधु-साध्वी प्रायश्चित्त लेना स्वीकार करें एवं भविष्य में शुद्ध संयम पालने का आश्वासन दें तो उन्हें गण से बाहर करना नहीं कल्पता।

**प्रश्न २३८. साधु-साध्वियां एक साथ किस परिस्थिति में रह सकते हैं ?**

**उत्तर**—आगम में कहा है कि बीहड़-जंगल में, सूने मन्दिर में, चोर डाकू अथवा व्यभिचारियों का भय उपस्थित होने पर साध्वियों की रक्षा के लिये साधु उनके साथ रह सकते हैं।<sup>४</sup>

१. व्यवहार ७/११

३. व्यवहार ७/४-५

२. स्थानांग ६/६६१

४. स्थानांग ५/२/१०७

**प्रश्न २३६. साधु साध्वियों का स्पर्श किस परिस्थिति में कर सकते हैं ?**

उत्तर—पांच कारणों से साधु साध्वियों का स्पर्श कर सकते हैं—१. सांड आदि पशु एवं गीध आदि पक्षी साध्वी को मार रहे हों। २. दुर्ग या किसी विषमस्थान से साध्वी गिर रही हो। ३. साध्वी कीचड़ या दलदल में फंसी हुई हो अथवा नदी आदि के जल में बह रही हो। ४. साध्वी नाव पर चढ़ रही हो या उससे उतर रही हो। ५. साध्वी राग, भय या अपमान से शून्यचित्तवाली हो, सम्मान से हर्षोन्मत्त हो, यक्षाधिष्ठित हो, (भूत आदि लगा हुआ हो) उसके ऊपर उपसर्ग आये हों, यानि चोरों या दुष्टपुरुषों द्वारा संयम से डिगाई जा रही हो, कलह करके खमाने के लिए आई हो, प्रायश्चित्त आने से घबराई हुई हो अथवा अनशन-संधारा कर रहा हो।'

**प्रश्न २४०. गृहस्थों द्वारा साधु-साध्वियों की सेवा से क्या तात्पर्य है ?**

उत्तर—यहां सेवा शब्द का अर्थ पैर दबाना आदि नहीं है। सेवा का अर्थ है उपासना करना। उपासना का शाब्दिक अर्थ है पास में बैठकर धार्मिक चर्चा करना, ज्ञान सीखना आदि।

**प्रश्न २४१. उपासना से लाभ क्या है ?**

उत्तर—आचार्यश्री या साधु-साध्वियों के पास बैठने से तत्त्वचर्चा करने और सुनने का अवसर मिलता है, उससे ज्ञान बढ़ता है। ज्ञान का जीवन में आचरण होता है। ज्ञान और क्रिया से मुक्ति मिलती है। इस प्रकार उपासना का फल मिल जाता है।

**प्रश्न २४२. शबल दोष का क्या अर्थ है ?**

उत्तर—शबल का अर्थ है, ग्रहण किए हुए मूल-उत्तर-गुणों में दोष रूप धब्बा लग जाना अर्थात् चारित्र का दूषित हो जाना।

उत्तरगुणा में अतिक्रम-व्यतिक्रम-अतिचार-अनाचार चारों दोषों का लगना शबल दोष है एवं मूलगुणों में अनाचार के अतिरिक्त तीनों दोषों का लगना शबल दोष है।

**प्रश्न २४३. शबल दोष के कितने प्रकार हैं ?**

उत्तर—शबल दोष इक्कीस कहे गए हैं<sup>१</sup>—जिनका सेवन करने वाले साधुओं का संयम शबल अर्थात् दोष के धब्बों वाला बन जाता है—

१. स्थानांग ५/२/१६५

(ख) समवाओ २१/१

२. (क) दसाओ २/३



१. हस्तकर्म करना। वेद का प्रबल उदय होने पर हस्तमर्दन या अन्य किसी भी प्रकार से वीर्य का नाश करना हस्तकर्म कहलाता है। इसे स्वयं करनेवाला एवं दूसरे से करवाने वाला साधु शबल (दागी) हो जाता है।

२. मैथुन सेवन करना। इसमें अतिक्रम व्यतिक्रम एवं अतिचार तक की मैथुन-संबंधी क्रियाएं ग्रहण की गई हैं। अनाचार अर्थात् स्त्री-पुरुषादि से शरीर द्वारा मैथुन सेवन करने पर तो ब्रह्मचर्य का महाव्रत ही नष्ट हो जाता है।

३. रात्री भोजन करना।

४. आधाकर्म आहारादि का सेवन करना।

५. राजपिण्ड का सेवन करना।

६. क्रीत (साधुओं के लिए खरीदा हुआ) प्रामित्य (साधुओं के लिए उधार लाया हुआ) आछिन्न (दुर्बल से छीन कर लाया हुआ) अनिसृष्ट (दूसरे हिस्सेदार की अनुमति के बिना दिया हुआ) आहारादि लेना एवं भोगना।

७. बार-बार अशन आदि का प्रत्याख्यान करके उसे भोगना।

८. छह महीने के अन्दर एक गण को छोड़ कर दूसरे गण में जाना। विशेष ज्ञान की प्राप्ति के लिए गुरु-आज्ञा से साधु दूसरे गण में जा सकता है लेकिन छह मास से पहले पुनः गण का परिवर्तन नहीं करना चाहिए।

९. एक महीने में तीन उदक-लेप लगाना। (दशाश्रुतस्कंध टीका के अनुसार नाभिप्रमाण गहरे जल को पार करना उदक-लेप कहलाता है।)

१०. एक महीने में तीन मायास्थान का सेवन करना। माया स्थान का सेवन तो सर्वदा निषिद्ध ही है किन्तु बार-बार भूल करना शबलदोष माना गया है।

११. शय्यातरपिण्ड का सेवन करना।

१२-१४. जानबूझ जीव हिंसा करना, झूठ बोलना, चोरी करना।

१५-१७. जान-बूझ कर सचित्त पृथ्वी, स्निग्ध और सचित्त रजों वाली पृथ्वी, सचित्त शिला, पत्थर एवं घुणों वाली लकड़ी पर इसी प्रकार जीवों वाले स्थान अर्थात् प्राण-बीज-हरियाली-कीड़ीनगरा-लीलन-फूलन-पानी-कीचड़ मकड़ी के जाले आदि पर बैठना, सोना एवं कायोत्सर्गादि करना।

१८. जान-बूझ कर (सचित्त) मूल-कन्द-छाल-प्रवाल-पुष्प-बीज या हरितकाय आदि का भोजन करना।

१९. वर्ष में दस उदक-लेप करना।

२०. वर्ष में दस मायास्थानों का सेवन करना।

२१. सचित्त जल से लिप्त हाथ, कुड़छी या बर्तन से आहारादि लेकर खाना।

**प्रश्न २४४. अभिग्रहधारी साधु कौन होते हैं ?**

**उत्तर**—प्रतिज्ञा विशेष को अभिग्रह कहते हैं एवं द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव को लक्ष्य कर मन में अभिग्रह धारण वाले साधु अभिग्रहधारी कहलाते हैं।

**प्रश्न २४५. साधु के बाईस परीषह कौन-कौन से हैं ?**

**उत्तर**—आपत्ति आने पर भी संयम में स्थिर रहने के लिए तथा कर्मों की निर्जरा के लिए जो शारीरिक तथा मानसिक कष्ट साधुओं द्वारा सहे जाते हैं, उनको परीषह कहते हैं। वे बाईस हैं<sup>१</sup>—१. क्षुधापरीषह—निर्दोष आहार न मिलने पर समभाव से भूख का कष्ट सहन करना। २. पिपासा-परीषह—अचित्त पानी न मिलने पर समभाव से तृषा को सहन करना। ३. शीत-परीषह—सुरक्षित स्थान के अभाव में सर्दी का कष्ट सहना। ४. उष्ण-परीषह—ग्रीष्मकाल में गर्मी सहना। ५. दंशमशक-परीषह—डांस-मच्छर आदि के काटने पर समभाव रखना, जूं-चींटी आदि का कष्ट भी इसी परीषह में समझना चाहिए। ६. अचेल-परीषह—वस्त्र के अभाव में (जिनकल्प आदि की अपेक्षा) तथा आवश्यकतानुसार वस्त्र न मिलने पर स्वभाव से अवस्त्र रहना (चेल का अर्थ वस्त्र है)। ७. अरति-परीषह—संयम पालने में कठिनाइयां उत्पन्न होने पर भी उसके प्रति अरति-उदासीनता न आने देना एवं धैर्यपूर्वक संयम में रत रहना। ८. स्त्रीपरीषह—स्त्रियों द्वारा उपसर्ग करने पर भी विचलित न होना। ९. चर्यापरीषह—विहार के संयम खिन्नता उत्पन्न होने पर धैर्य रखना। १०. निषद्यापरीषह—श्मशानादिक में स्वाध्याय-ध्यान करते समय उपसर्ग होने पर न बोलना। ११. शय्यापरीषह—प्रतिकूल शय्या-निवास स्थान प्राप्त होने पर क्षुब्ध न होना। १२. आक्रोशपरीषह—किसी के द्वारा धमकाए या फटकारे जाने पर क्रोध न करते हुए चुप रहना। १३. वधपरीषह—लकड़ी आदि से मारने पर भी मन में द्वेष न करना। १४. याचनापरीषह—भिक्षा मांगते समय होने वाले मानसिक कष्ट में समभाव रखना। १५. अलाभपरीषह—वस्तु के न मिलने पर संतप्त न होना एवं सोचना कि आज नहीं तो कल मिल जायेगी। १६. रोगपरीषह—रोग

१. (क) उत्तरा. २ अध्ययन

(ग) समवाओ २२/१

(ख) प्रवचनसारोद्धार ८६ द्वार

उत्पन्न होने पर अदीनवृत्ति रखना, अकल्पती औषधि की इच्छा न करना। १७. तृणस्पर्श-परीषह—तृणों की शय्या पर सोते समय उसके स्पर्श से होने वाले कष्ट में धैर्य रखना। १८. जल्ल-परीषह—ग्रीष्म आदि के समय पसीने से, मैल या रजों से शरीर लिप्त होने पर सुखार्थी होकर दीनता न लाना एवं स्नान आदि की इच्छा न करना। १९. सत्कार-पुरस्कार-परीषह—सम्मान होने पर अहंकार न करना एवं अपमान होने पर खिन्न न होना। २०. प्रज्ञापरीषह—बुद्धि की मन्दता के कारण प्रश्न का उत्तर न दे सकने पर उदासी न लाना एवं धैर्यपूर्वक संयम का पालन करते रहना। २१. अज्ञानपरीषह—विशेष ज्ञान (केवलज्ञान) न होने पर अधीर न होना अर्थात् ऐसे न सोचना कि मैं निरर्थक ही साधु बना, तप प्रतिमा आदि इतनी साधना करने पर भी मुझे केवलज्ञान नहीं होता। २२. दर्शनपरीषह—सम्यग्दर्शन में सुदृढ़ रहना। आषाढभूति आचार्यवत् परलोक आदि में सन्देह न लाना।

**प्रश्न २४६. २२ परीषह किस-किस कर्म के उदय से होते हैं?**

**उत्तर—**वेदनीय कर्म के उदय से—११, मोहनीय कर्म के उदय से—८, ज्ञानावरणीय कर्म के उदय से—२, दर्शनावरणीय कर्म के उदय से—१ होते हैं।

**प्रश्न २४७. कन्दर्प-कौत्कुच्य आदि करने वाले साधुओं की क्या गति होती है?**

**उत्तर—**आगम के अनुसार आराधक-साधुओं की गति वैमानिक देव तथा मोक्ष है लेकिन कन्दर्प कथा (काम कथा) आदि में आसक्त साधु यद्यपि तपस्या के बल से देवगति प्राप्त कर लेते हैं किन्तु दूसरों के गुलाम एवं हीन देवता बनते हैं।<sup>१</sup>

**प्रश्न २४८. चरण गुण का अर्थ क्या है तथा उसके कितने प्रकार हैं?**

**उत्तर—**साधु द्वारा निरन्तर सेवन करने योग्य चारित्र-संबंधी नियमों को चरणगुण कहते हैं। चरणगुण सत्तर मान गये हैं, (ये चरणसत्तरी के नाम से प्रसिद्ध हैं) यथा—पांच महाव्रत, दस प्रकार का श्रमणधर्म, सत्रह प्रकार का संयम, दस प्रकार का वैयावृत्त्य, ब्रह्मचर्य की नव गुप्तियां, ज्ञानादिरत्नत्रिक, बारह प्रकार का तप और चार कषाय का निग्रह।<sup>२</sup>

१. (क) उत्तरा. ३६/२६४ से २६७

२. ओधनियुक्ति भाष्य गाथा २

(ख) प्रवचनसारोद्धार द्वार७३गा. ६४६

प्रश्न २४६. करण गुण क्या है तथा उसके ७० भेद कौन-कौन से हैं ?

उत्तर—प्रयोजन उत्पन्न होने पर साधुओं द्वारा जिनका सेवन किया जाए, वे करणगुण कहलाते हैं। करणगुण भी सत्तर हैं, (ये करणसत्तरी के नाम से प्रसिद्ध हैं) यथा—चार प्रकार की पिण्डविशुद्धि, पांच समितियां, बारह भावनाएं, बारह प्रतिमाएं, पांच इन्द्रियों का निग्रह, पच्चीस प्रकार की पडिलेहणा, तीन गुप्तियां और चार अभिग्रह।<sup>१</sup>

प्रश्न २५०. साधु की जाति कौनसी है।

उत्तर—पंचेन्द्रिय।

प्रश्न २५१. साधु की काय कौनसी है।

उत्तर—त्रसकाय।

प्रश्न २५२. साधु में इन्द्रियां कितनी होती हैं।

उत्तर—पांच।

प्रश्न २५३. साधु में पर्याप्ति कितनी है ?

उत्तर—छह।

प्रश्न २५४. साधु में प्राण कितने होते हैं ?

उत्तर—दस।

प्रश्न २५५. साधु में शरीर कितने होते हैं ?

उत्तर—सामान्यतया पांचों शरीर होते हैं। वर्तमान में एक साधु की अपेक्षा तीन शरीर पाते हैं—औदारिक, तैजस, कार्मण।

प्रश्न २५६. साधु में योग कितने होते हैं ?

उत्तर—पन्द्रह।<sup>२</sup>

प्रश्न २५७. साधु में उपयोग कितने होते हैं ?

उत्तर—नौ। तीन अज्ञान छोड़कर।<sup>३</sup>

प्रश्न २५८. साधु के कितने कर्म का बंध होता है ?

उत्तर—सात-आठ।

प्रश्न २५९. साधु में गुणस्थान कितने पाए जाते हैं ?

उत्तर—नौ (९) छह से लेकर चौदहवें तक।<sup>४</sup>

प्रश्न २६०. साधु में इन्द्रियों के विषय कितने हैं।

उत्तर—तेईस।

१. ओघनियुक्ति भाष्य गाथा ३

३. २१ द्वार १२/७

२. २१ द्वार १२/१

४. २१ द्वार १२/७

प्रश्न २६१. साधु में मिथ्यात्व के भेद कितने पाये जाते हैं ?

उत्तर—एक भी नहीं।

प्रश्न २६२. साधु में जीव का भेद कौन सा है ?

उत्तर—सत्री पंचेन्द्रिय का पर्याप्त—१४वां।<sup>१</sup>

प्रश्न २६३. साधु में आत्मा कितनी होती है ?

उत्तर—आठ।<sup>२</sup>

प्रश्न २६४. साधु में दंडक कौन सा ?

उत्तर—एक इक्कीसवां, मनुष्य पंचेन्द्रिय का।<sup>३</sup>

प्रश्न २६५. साधु में लेश्या कितनी ?

उत्तर—छह।<sup>४</sup>

प्रश्न २६६. साधु में दृष्टि कितनी ?

उत्तर—एक—सम्यक् दृष्टि।<sup>५</sup>

प्रश्न २६७. साधु के कौन सा ध्यान होता है ?

उत्तर—तीन ध्यान—रौद्रध्यान, धर्मध्यान और शुक्लध्यान होता है।

प्रश्न २६८. साधुपन छह द्रव्यों और नौ तत्त्वों में क्या ?

उत्तर—छह द्रव्यों में एक—जीवास्तिकाय। नौ तत्त्वों में एक—संवर।

प्रश्न २६९. साधु की राशि कौनसी होती है ?

उत्तर—जीव राशि।

प्रश्न २७०. साधु में महाव्रत कितने होते हैं ?

उत्तर—पांच।

प्रश्न २७१. साधु में चारित्र कितने पाये जाते हैं ?

उत्तर—पांच।

प्रश्न २७२. साधु में भाव कितने पाये जाते हैं ?

उत्तर—पांच।<sup>६</sup>

प्रश्न २७३. साधु में लब्धि कितनी होती है ?

उत्तर—पांच।<sup>७</sup>

१. २१ द्वार १२/७

५. २१ द्वार १२/१

२. २१ द्वार १२/१

६. २१ द्वार १२/७

३. २१ द्वार १२/७

७. २१ द्वार १२/७

४. २१ द्वार १२/६

प्रश्न २७४. क्या साधु भव्य होते हैं या अभव्य ?

उत्तर—भव्य ।<sup>१</sup>

प्रश्न २७५. साधु में पक्ष कितने होते हैं ?

उत्तर—एक—शुक्ल पक्ष ।<sup>२</sup>

प्रश्न २७६. साधु में समुद्घात कितने पाये जाते हैं ?

उत्तर—सात ।

प्रश्न २७७. साधु में संस्थान कितने पाये जाते हैं ?

उत्तर—छह ।

प्रश्न २७८. साधु में संहनन कितने पाये जाते हैं ?

उत्तर—छह ।

प्रश्न २७९. नमस्कार महामंत्र में साधु का कौन सा पद है ?

उत्तर—पांचवां—णमो लोए सव्व साहूण ।

प्रश्न २८०. साधु के लक्षण क्या है ?

उत्तर—पांच महाव्रत, पांच समिति, तीन गुप्ति की विधिवत् आराधना करने वाला साधु कहलाता है ।

प्रश्न २८१. अढ़ाई द्वीप में कितने साधु-साध्वी निरंतर विहार करते हैं ?

उत्तर—अढ़ाई द्वीप व १५ क्षेत्रों में कम से कम दो हजार करोड़ और अधिक से अधिक नौ हजार करोड़ ।

प्रश्न २८२. साधु कहां होते हैं ?

उत्तर—१५ कर्मभूमि में ।

प्रश्न २८३. क्या अकर्मभूमि और अन्तरद्वीप के मनुष्यों में चारित्र होता है ?

उत्तर—नहीं, वहां साधु या श्रावक नहीं होते । वे न ज्यादा पाप करते हैं और नहीं ज्यादा धर्म करते हैं ।

प्रश्न २८४. अढ़ाई द्वीप व १५ क्षेत्र कौन-कौन से हैं ?

उत्तर—अढ़ाई द्वीप—जम्बूद्वीप, घातकी खंड और अर्धपुष्कर द्वीप । पन्द्रह क्षेत्र—५ भरत, ५ ऐरावत और ५ महाविदेह ।

प्रश्न २८५. कौन सी गति से आया हुआ जीव साधु बन सकता है ?

उत्तर—चारों गतियों से ।

प्रश्न २८६. साधु कौन बन सकता है ?

उत्तर—पांच इन्द्रियों से सम्पन्न मनुष्य साधु बन सकता है। (बहरा, गूंगा, लंगड़ा, अचक्षु, रोगी आदि साधु नहीं बन सकते।)

प्रश्न २८७. क्या अभवी जीव साधु बन सकता है ?

उत्तर—नहीं, अभवी जीव द्रव्य साधु वेश धारण कर सकता है।

प्रश्न २८८. अभवी जीव साधु वेश में क्रिया करके कौनसे देवलोक तक जा सकता है ?

उत्तर—नौ ग्रैवेयक तक।

प्रश्न २८९. कम से कम कितनी उम्र वाला साधु बन सकता है ?

उत्तर—सवा आठ वर्ष (गर्भ सहित नौ वर्ष से कुछ कम) की उम्र वाला।

प्रश्न २९०. साधुत्व किस कर्म के क्षयोपशम से प्राप्त होता है ?

उत्तर—साधुपन चारित्र मोहनीय कर्म के क्षयोपशम से प्राप्त होता है।

प्रश्न २९१. 'णमो लोए सव्वसाहूणं' पद का ध्यान किस रंग के साथ व कौन से केन्द्र पर किया जाता है ?

उत्तर—काले रंग के साथ तैजस केन्द्र पर किया जाता है।

प्रश्न २९२. क्या साधु रात्रि में खुले आकाश के नीचे सो सकते हैं ? घूम फिर सकते हैं ?

उत्तर—नहीं। क्योंकि अप्काय (ओस) के जीवों की हिंसा होने की संभावना रहती है।

प्रश्न २९३. रत्नाधिक किसे कहते हैं ?

उत्तर—दीक्षा पर्याय में जो बड़ा होता है उसे रत्नाधिक कहते हैं।

प्रश्न २९४. साधु के कुछ पर्यायवाची नाम बताइए ?

उत्तर—साधु, मुनि, अणगार, निर्ग्रथ, महाव्रतधारी, भिक्षु, श्रमण, ऋषि, तपस्वी आदि।

प्रश्न २९५. साधु के कितने कोटि से त्याग होता है ?

उत्तर—नौ कोटि से।

प्रश्न २९६. साधु की दिनचर्या का पहला अंग क्या है ?

उत्तर—अपररात्री में उठकर आत्मालोचना व धर्म जागरिका करना।<sup>१</sup>

प्रश्न २९६. साधु के अवश्य करणीय कर्म कौन-कौन से हैं ?

उत्तर—सामायिक-समभाव का अभ्यास, उसकी प्रतिज्ञा का पुनरावर्तन।

१. जैन दर्शन : मनन मीमांसा, ३०

२. चतुर्विंशस्तव—चौबीस तीर्थकरों की स्तुति।
३. वन्दना—आचार्य को द्वादशार्त्त वन्दना।
४. प्रतिक्रमण—कृत दोषों की आलोचना।
५. कायोत्सर्ग—काया का स्थिरीकरण।
६. प्रत्याख्यान—त्याग करना।<sup>१</sup>

**प्रश्न २६७. क्या हर किसी मुनि का अपहरण किया जाता है ?**

उत्तर—नहीं, श्रेणी प्राप्त मुनि तथा सर्वज्ञ मुनि का अपहरण नहीं हो सकता।

**प्रश्न २६८. क्या साधु ऊनोदरी तप करता है ?**

उत्तर—हां, साधु ऊनोदरी तप करता है—द्रव्य से खाद्य-संयम व उपकरण लाघव की और भाव से क्रोध आदि कषाय की।

**प्रश्न २६९. साधु के कितने प्रकार का शल्य माना गया है ?**

उत्तर—तीन प्रकार का—(१) माया शल्य (२) निदान शल्य (३) मिथ्या दर्शन शल्य।<sup>२</sup>

**प्रश्न ३००. साधु की निश्रा (आश्रय) कितनी व कौन सी है ?**

उत्तर—साधु के निश्रा स्थान पांच हैं<sup>३</sup>—(१) श्रावक (२) राजा (३) संघ (४) शरीर (५) छह काय के पुद्गल।

**प्रश्न ३०१. साधु में कौन सा वीर्य पाया जाता है ?**

उत्तर—पंडित वीर्य।

**प्रश्न ३०२. आराधक साधु समाधिमरण को प्राप्त कर कौन सी गति में जाते हैं ?**

उत्तर—वैमानिक देवलोक या मोक्ष में।

**प्रश्न ३०३. साधु काल धर्म प्राप्त कर कौन से देवलोक तक जा सकता है ?**

उत्तर—छब्बीसवें देवलोक 'सर्वार्थ सिद्ध' तक।

**प्रश्न ३०४. साधुपन से च्युत होने के कितने कारण है ?**

उत्तर—तीन कारण हैं—(१) पांच महाव्रतों में से किसी एक महाव्रत में बड़ा दोष सेवन करे (२) तीर्थकर की वाणी में शंका करे (३) तीर्थकरों की वाणी के विरुद्ध प्ररूपणा करे।

**प्रश्न ३०५. साधु के उत्कृष्ट कितने भव होते हैं ?**

उत्तर—साधु के उत्कृष्ट १५ (देव व मनुष्य-युक्त) भव माने गए हैं।

१. जैन दर्शन : मनन मीमांसा, ३०

३. स्थानांग ५/३/१६२

२. स्थानांग ३/३/३८५



प्रश्न ३०६. साधु के गुणों का स्मरण करने से क्या होता है ?

उत्तर—साधु के गुणों का जप करने से शनि, राहु, केतु ग्रह की पीड़ा नष्ट होती है।

प्रश्न ३०७. क्या साधु गृहस्थ से शारीरिक सेवा ले सकता है ?

उत्तर—नहीं ले सकता, विशेष चिकित्सा अपवाद है।

प्रश्न ३०८. क्या साधु गृहस्थ की शारीरिक सेवा कर सकता है ?

उत्तर—आध्यात्मिक सेवा कर सकता है, शारीरिक सेवा नहीं।

प्रश्न ३०९. क्या आहार पानी के लिए साधु गृहस्थ के बर्तन काम में ले सकता है ?

उत्तर—नहीं, अपने निश्रा के पात्र काम में ले सकता है।

प्रश्न ३१०. साधु-साध्वी के निमित्त बनाये हुए वस्त्र, पात्र, मकान, आहारादि का साधु-साध्वी सेवन कर सकते हैं या नहीं ?

उत्तर—नहीं, क्योंकि यह कल्पनीय नहीं है, अनाचार है।

प्रश्न ३११. संयम किसे कहते हैं एवं कितने प्रकार का होता है ?

उत्तर—सब के प्रति समभाव रखना संयम है। वह सतरह प्रकार का होता है।<sup>१</sup>

प्रश्न ३१२. सतरह प्रकार के संयम कौन से हैं ?

उत्तर—१. पृथ्वीकाय संयम २. अप्काय संयम ३. तेजस्काय संयम ४. वायुकाय संयम ५. वनस्पति काय संयम ६. द्वीन्द्रिय संयम ७. त्रीन्द्रिय संयम ८. चतुरिन्द्रिय संयम ९. पंचेन्द्रिय संयम १०. अजीवकाय संयम ११. प्रेक्षा संयम १२. उपेक्षा संयम १३. परिष्ठापन संयम १४. प्रमार्जन संयम १५. मनः संयम १६. वचन संयम १७. काय संयम।<sup>२</sup>

प्रश्न ३१३. क्या साधु बिना किंवाड़ वाले स्थान में ठहर सकते हैं ?

उत्तर—हां, साधु ठहर सकते हैं, साध्वियां नहीं।

प्रश्न ३१४. कितने वर्ष की दीक्षा पर्याय वाले मुनि को अंगों (आगमों) का अध्ययन करना कल्पता है ?

उत्तर—साधुओं के दीक्षा पर्याय के साथ आगम अध्ययन का क्रम रखा गया है ?

१. तीन वर्ष की दीक्षा पर्याय वाले श्रमण-निर्ग्रन्थ को आचार प्रकल्प नामक अध्ययन पढ़ना कल्पता है।

२. चार वर्ष की दीक्षा पर्याय वाले श्रमण-निर्ग्रन्थ को सूत्रकृतांग नामक दूसरा अंग पढ़ना कल्पता।

३. पांच वर्ष की दीक्षा पर्याय वाले श्रमण-निर्ग्रन्थ को दशा, कल्प, व्यवहार सूत्र पढ़ना कल्पता है।
४. आठ वर्ष की दीक्षा पर्याय वाले श्रमण-निर्ग्रन्थ को स्थानांग और समवायांग सूत्र पढ़ना कल्पता है।
५. दस वर्ष की दीक्षा पर्याय वाले श्रमण-निर्ग्रन्थ को व्याख्या प्रज्ञप्ति (भगवती सूत्र) नामक अंग पढ़ना कल्पता है।
६. ग्यारह वर्ष की दीक्षा पर्याय वाले श्रमण-निर्ग्रन्थ को क्षुल्लिका, विमानप्रविभक्ति, महल्लिका विमानप्रविभक्ति, अंगचूलिका, वर्गचूलिका और व्याख्याचूलिका नामक अध्ययन पढ़ना कल्पता है।
७. बारह वर्ष की दीक्षा पर्याय वाले श्रमण-निर्ग्रन्थ को अरुणोपपात, वरुणोपपात, गरुडोपपात, धरणोपपात, वैश्रमणोपपात, बेलन्धरोपपात, नामक अध्ययन पढ़ना कल्पता है।
८. तेरह वर्ष की दीक्षा पर्याय वाले श्रमण-निर्ग्रन्थ को उत्थानश्रुत, समुत्थानश्रुत, देवेन्द्रपरियापनिका और नागपरियापनिका नामक अध्ययन पढ़ना कल्पता है।
९. चौदह वर्ष की दीक्षा पर्याय वाले श्रमण-निर्ग्रन्थ को स्वप्न भावना नामक अध्ययन पढ़ना कल्पता है।
१०. पन्द्रह वर्ष की दीक्षा पर्याय वाले श्रमण-निर्ग्रन्थ को चारण-भावना नामक अध्ययन पढ़ना कल्पता है।
११. सोलह वर्ष की दीक्षा पर्याय वाले श्रमण-निर्ग्रन्थ को तेजोनिर्गम नामक अध्ययन पढ़ना कल्पता है।
१२. सत्तरह वर्ष की दीक्षा पर्याय वाले श्रमण-निर्ग्रन्थ को आसीविष भावना नामक अध्ययन पढ़ना कल्पता है।
१३. अठारह वर्ष की दीक्षा पर्याय वाले श्रमण-निर्ग्रन्थ को दृष्टिविष भावना नामक अध्ययन पढ़ना कल्पता है।
१४. उन्नीस वर्ष की दीक्षा पर्याय वाले श्रमण-निर्ग्रन्थ को दृष्टिवाद नामक अध्ययन पढ़ना कल्पता है।
१५. बीस वर्ष की दीक्षा पर्याय वाला श्रमण-निर्ग्रन्थ सर्वश्रुत को धारण करनेवाला हो जाता है।

## ४. लोच प्रकरण

**प्रश्न १. लोच का आगमों में कहां कहां उल्लेख मिलता है ?**

उत्तर—उत्तराध्ययन, निशीथ और दशाश्रुतस्कंध सूत्रों में लोच के बारे में उल्लेख प्राप्त होता है।

**प्रश्न २. लोच परीषह में क्यों नहीं है ?**

उत्तर—जो निरन्तर सहन करना पड़ता है, वह परीषह कहलाता है जबकि लोच वर्ष में एक या दो बार करवाना पड़ता है।

**प्रश्न ३. लोच किसे कहते हैं ?**

उत्तर—हाथ से केशों को उतारना लोच कहलाता है।

**प्रश्न ४. लोच कब किया जाता है ?**

उत्तर—पर्युषण पर्व (संवत्सरी) से पूर्व लुंचन होना अनिवार्य है।<sup>१</sup> वर्ष में दो बार या तीन बार कराना अपनी-अपनी इच्छा पर निर्भर है।

**प्रश्न ५. दाढ़ी और मूंछ का लोच कितनी बार किया जाता है ?**

उत्तर—पर्युषण पर्व पर तो अनिवार्य है ही।<sup>२</sup> शेष अपनी इच्छा पर। तीन, चार या पांच जितनी बार कराएं वह अपनी-अपनी इच्छा है।

**प्रश्न ६. केश लोच के समय राख का उपयोग क्यों किया जाता है ?**

उत्तर—लोच करते समय हाथ से केश न छूटे और रूं तोड़ न हो क्योंकि राख एन्टीसेप्टिक है।

**प्रश्न ७. लोच स्वयं करना होता है या दूसरे साधु का सहयोग भी ले सकते हैं ?**

उत्तर—स्वयं भी कर सकते हैं, दूसरों से भी करवा सकते हैं।

## ५. दीक्षार्थी प्रकरण

**प्रश्न १. दीक्षार्थी की योग्यता के क्या-क्या मापदण्ड होने चाहिए ?**

**उत्तर—**सर्वप्रथम जीव-अजीव आदि नव तत्त्वों का जानकार होना चाहिए।<sup>१</sup>

तत्त्वज्ञान के अलावा दीक्षार्थी की योग्यता के ये मानदंड उपलब्ध होते हैं—यथा—१. आर्यदेश का निवासी २. विशुद्ध जाति-कुल संपन्न ३. हलुकर्मी ४. निर्मल बुद्धि-युक्त ५. संसार को असार समझने वाला ६. वैराग्यवान ७. मन्दकषाय ८. हास्यादि-विकृति की अल्पता ९. कृतज्ञ १०. विनयवान १४. श्रद्धावान १५. स्थिर चित्त १६. दीक्षा का प्रबल संकल्प।<sup>२</sup>

**प्रश्न २. दीक्षा के अयोग्य कौन होता है ?**

**उत्तर—**तीन प्रकार के व्यक्ति दीक्षा के अयोग्य माने गए हैं<sup>३</sup>—

१. पंडक—जन्मना नपुंसक (कृत-नपुंसक दीक्षा ले सकते हैं।)
२. वातिक—विकार उत्पन्न होने के बाद भोग किए बिना नहीं रह सकने वाला।
३. क्लीब—कमजोर दिल का व्यक्ति।

**प्रश्न ३. ग्रंथों में कितने प्रकार के स्त्री-पुरुष दीक्षा के लिए अयोग्य कहे गये हैं ?**

**उत्तर—**१८ प्रकार के पुरुष तथा बीस प्रकार की स्त्रियां दीक्षा के अयोग्य मानी गई हैं। जैसे—१. बालक (सवा आठ वर्ष से कम) २. वृद्ध ३. नपुंसक ४. क्लीब ५. जड़ ६. व्याधित (किसी बड़े रोग से पीड़ित) ७. चोर ८. राजापकारी (राजा का विरोधी) ९. उन्मत्त (यक्षादि के आवेश से या प्रबल मोह के उदय से आक्रांत) १०. अदर्शन (अन्धा या स्त्यानगृद्धि निद्रावाला) ११. दास (क्रीत गुलाम) १२. दुष्ट (अधिक कषायी और

१. दसवै. अ. ४ गाथा १२ से १४

३. बृहत्कल्प ४/४

२. निशीथ ११/८३-८४ की टिप्पण

अधिक विषयी) १३. मूढ़ (हिताहित न सोच सकने वाला) १४. ऋणार्त—कर्जदार १५. जुंगित (जाति, कर्म एवं शरीर से हीन व्यक्ति) १६. अवबद्ध (पराधीन) १७. भृतक (नौकर) १८. शैक्षनिस्फोटिका (माता-पितादि स्वजनों की रजामन्दी के बिना भगाकर लाया हुआ अथवा भागकर आया हुआ व्यक्ति)।<sup>१</sup>

दीक्षा के अयोग्य बीस प्रकार की स्त्रियों में अठारह तो पुरुषों के समान ही हैं और दो ये हैं—गर्भवती एवं छोटे बच्चों वाली। दीक्षा के अयोग्य पुरुष-स्त्रियों का यह विवेचन उत्सर्ग-मार्ग की अपेक्षा से है। विशेष परिस्थिति में योग्य गुरु सूत्र-व्यवहार के अनुसार यथासंभव दीक्षा दे सकते हैं।<sup>२</sup>

#### प्रश्न ४. वैराग्य कितने प्रकार का है ?

उत्तर—पांच इन्द्रियों के विषय-भोगों से उदासीन—विरक्त होना वैराग्य है, वह तीन प्रकार का माना गया है<sup>३</sup>—१. दुःखगर्भित २. मोहगर्भित ३. ज्ञानगर्भित।

१. किसी प्रकार का संकट आने पर विरक्त होकर जो कुटुम्ब आदि का त्याग किया जाता है, वह दुःखगर्भित-वैराग्य है एवं जघन्य है, जैसे अनाथी मुनि आदि।

२. इष्टजन के मर जाने पर मोहवश मुनिव्रत धारण किया जाता है, वह मोहगर्भित वैराग्य है एवं मध्यम है जैसे—स्थूलिभद्र आदि।

३. पूर्व सस्कार या गुरु के उपदेश से आत्मज्ञान होने पर जो संसार का त्याग किया जाता है, वह ज्ञानगर्भित वैराग्य है। इसे उत्तम माना गया है।

#### प्रश्न ५. दीक्षा लेने के कितने कारण हैं ?

उत्तर—दीक्षा लेने के दस कारण माने गये हैं, उन्हें लक्ष्य करके शास्त्रों में दस प्रकार की प्रब्रज्या (दीक्षा) कही है।<sup>४</sup> यथा—

१. छन्दा—अपनी इच्छा से गोविन्दवाचकवत् एवं दूसरों के दबाब से भावदेववत् ली गई दीक्षा छन्दा है।

२. रोषा—शिवभूतिवत् रुष्ट होकर ली गई दीक्षा रोषा है।

३. परिछूना—लकड़हारे की तरह गरीबी से हैरान होकर ली गई दीक्षा परिछूना है।

१. प्रवचनसारोद्धार १०७ द्वार गाथा ७६०-७६१

२. (क) प्रवचनसारोद्धार १०८ गा. ७६२-६३

(ख) निशीथ ११/८५-८६

३. कर्तव्य कौमुदी, दूसरा भाग, पृष्ठ ७०-७१, श्लोक ११८-११९ वैराग्य प्रकरण द्वितीय परिच्छेद।

४. स्थाना. १०/१५

४. स्वप्ना-विशेष प्रकार का स्वप्न आने के कारण पुष्पचूलावत ली गई दीक्षा स्वप्ना है।
५. प्रतिश्रुता-शालिभद्र के बहनोई धन्नासेठवत् आवेश में आकर ली गई दीक्षा प्रतिश्रुता है।
६. स्मारणिका-पूर्वभव का स्मरण करवाने से मल्लिप्रभु के पूर्वभव के मित्र प्रतिबुद्धि आदि छह राजाओं की तरह ली गई दीक्षा स्मारणिका है।
७. रोगणिका-रोग उत्पन्न होने के कारण सनत्कुमार चक्रवर्तिवत् ली गई रोगणिका है।
८. अनादता-किसी के द्वारा अनादर किये जाने पर नन्दीषेणवत् (वासुदेव के पूर्वभव में) ली गई दीक्षा अनादता है।
९. देवसंज्ञप्ति-देवता के प्रतिबोध देने पर मेतार्य मुनिवत् ली गई दीक्षा देवसंज्ञप्ति है।
१०. वत्सानुबन्धिका-पुत्र स्नेह के कारण वज्रस्वामी की मातावत् ली गई दीक्षा वत्सानुबन्धिका है।

**प्रश्न ६. दीक्षार्थी को किस वय में दीक्षित किया जा सकता है ?**

उत्तर-साधु-साध्वियां साधिक आठ वर्ष (गर्भ सहित नव वर्ष) के बालक-बालिका को दीक्षा दे सकते हैं एवं उनके साथ भोजन कर सकते हैं।<sup>१</sup>

**प्रश्न ७. दीक्षा कितने प्रकार की है ?**

उत्तर-दीक्षा चार प्रकार की है।

१. इहलोक प्रतिबद्धा-जीवन का निर्वाह करने के लिए ली जाने वाली दीक्षा।
२. परलोक प्रतिबद्धा-परलोक संबंधि-पौद्गलिक सुखों की प्राप्ति के लिए ली जाने वाली दीक्षा।
३. उभयलोक प्रतिबद्धा-इहलोक व परलोक दोनों प्रकार की इच्छा रखते हुए ली जाने वाली दीक्षा।
४. अप्रतिबद्धा-किसी भी प्रकार की आशा न रखकर आत्म-कल्याण के लिए ली जाने वाली दीक्षा।<sup>२</sup>

**प्रश्न ८. क्या आगमों में दीक्षा किसी विशेष दिशा में देने का संकेत हैं?**

**उत्तर**—हां, आगमों में पूर्व-उत्तर दिशा में दीक्षा देने का उल्लेख है। केवल दीक्षा ही नहीं स्वाध्याय (पठन-पाठन-व्याख्यान धर्मचर्चा आदि) आलोचना-प्रतिक्रमण एवं अनशन संथारा करने में भी इन्हीं दो दिशाओं को महत्त्व दिया गया है।<sup>१</sup>

**प्रश्न ९. दीक्षित व्यक्ति कितने प्रकार के होते हैं?**

**उत्तर**—चार प्रकार के हो सकते हैं<sup>२</sup>—१. सिंहवृत्ति से (उन्नत भावों से) दीक्षा लेकर सिंहवृत्ति से पालने वाले कीर्तिधर सुकौशल (धन्नासेठवत्)। २. सिंहवृत्ति (उन्नत भावों से) से दीक्षा लेकर शृगाल वृत्ति से (दीनवृत्ति से) पालने वाले (कण्डरीकवत्)। ३. शृगाल वृत्ति से दीक्षा लेकर सिंहवृत्ति से पालने वाले (मेतार्यमुनिवत्)। ४. शृगाल वृत्ति से दीक्षा लेकर शृगाल वृत्ति से पालने वाले (सोमाचार्य, गर्गाचार्यवत्)।

**प्रश्न १०. क्या जैन दीक्षा में कोई जाति-सम्बन्धी नियम है?**

**उत्तर**—जाति संबंधी कोई विशेष नियम नहीं हैं। जिसके भी दिल में वैराग्य हो, वही दीक्षा ले सकता है। जैसे—चौबीस तीर्थंकर, नव बलदेव, दस चक्रवर्ती एवं अनेक राजा-महाराजा दीक्षित हुए—ये सभी क्षत्रिय थे। गौतमादि ग्यारह गणधर ब्राह्मण थे। जम्बूस्वामी वैश्य (वणिक) थे एवं हरिकेश मुनि शूद्र—चाण्डाल थे।

**प्रश्न ११. दीक्षा लेकर साधुओं को क्या करना चाहिये?**

**उत्तर**—दीक्षा लेने के बाद गुरु की सेवा में रहकर साधु सामाचारी का ज्ञान करना चाहिए एवं उसका विधिपूर्वक पालन करना चाहिए। (साधु के आचरण को सामाचारी कहते हैं)। सामाचारी दस प्रकार की है<sup>३</sup>—(१) इच्छाकार (२) मिथ्याकार (३) तथाकार (४) आवश्यकी (५) नैषेधिकी (६) आपृच्छना (७) छन्दना (८) प्रतिपृच्छना (९) निमंत्रणा (१०) उपसंपदा।

**प्रश्न १२. क्या साध्वियां भी साधु को दीक्षा दे सकती हैं?**

**उत्तर**—साधुओं के अभाव में दे सकती हैं लेकिन आचार्यादिक साधुओं की निश्रा में देने की विधि है, अपनी निश्रा में नहीं दे सकतीं अर्थात् अपना शिष्य नहीं बना सकतीं।<sup>४</sup>

१. स्थानांग २/१/१६७-१६८

(ख) स्थानां. १०/१०२

२. स्थानांग ४/३/४८०

(ग) उत्तरा. २६/१-७

३. (क) भ. २५/७/५५५

४. व्यवहार ७/६ भाष्य २६५०

## ६. प्रतिक्रमण प्रकरण

प्रश्न १. प्रतिक्रमण किस सूत्र का अंग है?¹

उत्तर—आवश्यक सूत्र का।

प्रश्न २. आवश्यक सूत्र कितने अंग वाला है?²

उत्तर—आवश्यक सूत्र के छह अंग हैं—सामायिक, चउवीसत्थव, वंदना, प्रतिक्रमण, कायोत्सर्ग, प्रत्याख्यान।

प्रश्न ३. व्यक्ति सापेक्ष प्रतिक्रमण के कितने प्रकार हैं?³

उत्तर—दो। साधु प्रतिक्रमण व श्रावक प्रतिक्रमण।

प्रश्न ४. साधु और श्रावक के प्रतिक्रमण में क्या अंतर है?⁴

उत्तर—साधु प्रतिक्रमण महाव्रतों व समिति-गुप्ति की आलोचना पर आधारित है। श्रावक प्रतिक्रमण बारह व्रतों की आलोचना पर आधारित है।

प्रश्न ५. प्रतिक्रमण का क्या अर्थ है?⁵

उत्तर—प्रतिक्रमण शब्द का अर्थ है—अपने स्थान पर लौटना। प्रमादवश मन संयम से बाहर चला गया हो उसे वापस संयम में स्थित करना प्रतिक्रमण कहलाता है।

प्रतिक्रमण का अर्थ—अपनी भूलों को देखना और उनका प्रायश्चित्त करना।

प्रतिक्रमण का अर्थ—औदयिक भाव से क्षयोपशम भाव में लौटना।

प्रश्न ६. प्रतिक्रमण के कितने पर्याय हैं?

उत्तर—आठ पर्याय हैं—प्रतिक्रमण, प्रतिचरण, परिहरण, वारणा, निवृत्ति, निन्दा, गर्हा और शोधि।

१. अमृत कलश

२. अमृत कलश

३. अमृत कलश

४. अमृत कलश

५. अमृत कलश

६. आवश्यक निर्युक्ति १२३३



**प्रश्न ७. प्रतिक्रमण किसका किया जाता है ?**

उत्तर— १. अतीत का प्रतिक्रमण—निन्दा द्वारा अशुभ योग से निवृत्त होना।

२. वर्तमान का प्रतिक्रमण—संवर द्वारा अशुभ योग से निवृत्त होना।

३. अनागत का प्रतिक्रमण—प्रत्याख्यान द्वारा अशुभ योग से निवृत्त होना।<sup>१</sup>

**प्रश्न ८. मुनि को प्रतिक्रमण कब-कब करना चाहिए ?**

उत्तर— १. प्रतिलेखन और प्रमार्जन कर।

२. भक्तपान का परिष्ठापन कर।

३. उपाश्रय के कूड़े-कर्कट का परिष्ठापन कर।

४. सौ हाथ की दूरी तयकर मुहूर्त्त भर उस स्थान में ठहरने पर।

५. यात्रा पथ से निवृत्त होने पर।

६. नदी संतरण करने पर।

७. प्रतिषिद्ध का आचरण करने पर।

८. करणीय (स्वाध्याय आदि) नहीं करने पर।

९. अर्हत् द्वारा प्रतिपादित तत्त्वों पर अश्रद्धा होने पर।

१०. विपरीत प्ररूपणा करने पर।<sup>२</sup>

**प्रश्न ९. प्रतिक्रमण के स्थान कौन-कौन से हैं ?**

उत्तर—मिथ्यात्व, असंयम, कषाय, अप्रशस्त योग और संसार—ये पांच स्थान है।<sup>३</sup>

**प्रश्न १०. क्या प्रतिक्रमण करने का भी कोई निश्चित समय है ?**

उत्तर—प्रतिक्रमण का कालमान है ४८ मिनट। यह दो समय विधिवत् किया जाता है। १. सूर्योदय से ४८ मिनट पहले प्रारंभ कर सूर्योदय तक।

२. सूर्यास्त से ४८ मिनट तक।

**प्रश्न ११. प्रतिक्रमण की उपसम्पदा क्या है ?<sup>४</sup>**

उत्तर—मैं केवली प्रज्ञप्त धर्म की आराधना में उपस्थित होता हूं, विराधना से

१. (क) आवश्यक नियुक्ति १२३१

(ख) भिक्षु आगम विषय कोश

(ख) भिक्षु आगम विषय कोश

३. आवश्यक नियुक्ति १२५०, १२५१

२. (क) आवश्यक नियुक्ति १२७१

४. अमृत कलश

आवहावृ २ पृ. ५०

विरत होता हूं। मैं असंयम से निवृत्त होता हूं, संयम में प्रवृत्त होता हूं। मैं अब्रह्मचर्य से निवृत्त होता हूं, ब्रह्मचर्य में प्रवृत्त होता हूं। मैं अकल्प्य (अनाचरणीय) से निवृत्त होता हूं, कल्प्य (आचरणीय) में प्रवृत्त होता हूं। मैं अज्ञान से निवृत्त होता हूं—ज्ञान में प्रवृत्त होता हूं, मैं अक्रिया (नास्तित्ववाद) से निवृत्त होता हूं, क्रिया (अस्तित्ववाद) में प्रवृत्त होता हूं। मैं मिथ्यात्व से निवृत्त होता हूं, सम्यक्त्व में प्रवृत्त होता हूं। मैं अबोधि से निवृत्त होता हूं, बोधि में प्रवृत्त होता हूं, मैं अमार्ग से निवृत्त होता हूं, मार्ग में प्रवृत्त होता हूं।<sup>१</sup>

**प्रश्न १२. प्रतिक्रमण का समय एक मुहूर्त ही क्यों ?**

उत्तर—आगम साहित्य में प्रतिक्रमण का कालमान कहीं भी निर्दिष्ट नहीं है। उत्तरवर्ती ग्रंथों में उसका कालमान एक मुहूर्त बताया गया है। इसके पीछे मुख्य रूप से दो हेतु दिये गए हैं—

१. छद्मस्थ व्यक्ति की मानसिक एकाग्रता की स्थिति अंतर्मुहूर्त से अधिक नहीं रह सकती। प्रतिक्रमण करने वाला एकाग्रता की स्थिति में अपने दोषों की आलोचना कर सके इस दृष्टि से प्रतिक्रमण का कालमान एक मुहूर्त का है।

२. जिस प्रवृत्ति के लिए आगम में कालमान का निर्देश नहीं है उसका कालमान एक मुहूर्त का समझना चाहिए। जैसे नवकारसी और सामायिक का समझा जाता है। इनका काल भी आगम में निर्दिष्ट नहीं है।

**प्रश्न १३. काल सापेक्ष प्रतिक्रमण के कितने प्रकार हैं ?**

उत्तर—पांच प्रकार<sup>३</sup>—(१) दैवसिक प्रतिक्रमण (२) रात्रिक प्रतिक्रमण (३) पाक्षिक प्रतिक्रमण (४) चातुर्मासिक प्रतिक्रमण (५) सांवत्सरिक प्रतिक्रमण। (६) इत्वरिक प्रतिक्रमण (७) यावत्कथित प्रतिक्रमण (८) उत्तमार्थ प्रतिक्रमण अनशन के समय किया जाने वाला।

**प्रश्न १४. प्रतिक्रमण के छह प्रकार कौन से हैं ?**

उत्तर—१. उच्चार प्रतिक्रमण—मल त्याग करने के बाद वापस आकर ईर्यापथिकी सूत्र के द्वारा प्रतिक्रमण करना।

२. प्रसवण प्रतिक्रमण—मूत्र त्याग करने के बाद वापस आकर ईर्यापथिकी

१. (क) आवश्यक २/६

२. अमृत कलश

(ख) भिक्षु आगम शब्द कोश

३. आवश्यक निबुंक्ति १२४७

सूत्र के द्वारा प्रतिक्रमण करना।

३. इत्वरिक प्रतिक्रमण—दैवसिक, रात्रिक आदि प्रतिक्रमण करना।

४. यावत्कथिक प्रतिक्रमण—हिंसा आदि से सर्वथा निवृत्त होना अथवा आजीवन अनशन करना।

५. यत्किंचित् मिथ्या दुष्कृत प्रतिक्रमण—साधारण अयतना होने पर उसकी विशुद्धि के लिए 'मिच्छामि दुक्कडं' इस भाषा में खेद प्रकट करना।

६. स्वप्नान्तिक प्रतिक्रमण—सोकर उठने के पश्चात् ईर्यापथिकी सूत्र के द्वारा प्रतिक्रमण करना।<sup>१</sup>

**प्रश्न १५. दैवसिक, रात्रिक, पाक्षिक, चातुर्मासिक व सांवत्सरिक प्रतिक्रमण में क्या अंतर है ?**

**उत्तर**—दैवसिक प्रतिक्रमण में दिवस संबंधी, रात्रिक प्रतिक्रमण में रात्रि संबंधी, पाक्षिक प्रतिक्रमण में पक्ष संबंधी, चातुर्मासिक प्रतिक्रमण में चार मास संबंधी व सांवत्सरिक प्रतिक्रमण में संवत्सरी—एक वर्ष संबंधी दोषों की आलोचना की जाती है।<sup>२</sup>

**प्रश्न १६. क्या सभी तीर्थकरों के युग में प्रतिक्रमण दोनों समय किया जाता था ?**

**उत्तर**—पहले व अंतिम तीर्थकरों के साधु-साध्वियों के लिए दोनों समय प्रतिक्रमण करने की अनिवार्यता है। मध्यवर्ती बावीस तीर्थकरों एवं महाविदेह के साधु साध्वियों के लिए प्रतिक्रमण का निश्चित समय नहीं है। वे जब दोष लगता, तभी उसकी आलोचना कर लेते।<sup>३</sup>

**प्रश्न १७. क्या इसके अतिरिक्त भी किया जाता है ?**

**उत्तर**—वस्तुतः जब भी मन संयम से बाहर जाए तो उसे पुनः संयम में प्रतिष्ठित करना अथवा कोई दोष लग जाये तो उसका आलोचन करना। प्रतिक्रमण है। परन्तु विधिवत् सूत्र के पाठ पूर्वक जो प्रतिक्रमण किया जाता है वह दो बार ही किया जाता है।

१. ठाणं ६/१२५

३. अमृत कलश

२. अमृत कलश

प्रश्न १८. प्रतिक्रमण में कितने लोगस्स का ध्यान किया जाता है ?

उत्तर—दैवसिक रात्रिक प्रतिक्रमण में चार, पाक्षिक प्रतिक्रमण में बारह, चातुर्मासिक प्रतिक्रमण में बीस, सांवत्सरिक प्रतिक्रमण में चालीस लोगस्स का ध्यान किया जाता है।

प्रश्न १९. प्रतिक्रमण करने से साधु को क्या-क्या लाभ होता है ?

उत्तर—

- (१) व्रत के छेदों को ढक देता है।
- (२) छेदों को भरने से आश्रव रूक जाता है।
- (३) चारित्र के धब्बों को मिटा देता है।
- (४) आठ प्रवचन माताओं में सावधान हो जाता है।
- (५) संयम में समरस हो जाता है।
- (६) समाधिस्त होकर विहार करता है।<sup>१</sup>

---

१. अमृत कलश

## ७. प्रत्याख्यान प्रकरण

प्रश्न १. दस प्रत्याख्यान कौन-कौन से हैं, अर्थ सहित स्पष्ट करें ?

उत्तर—१. अनागत—भविष्य में आनेवाले किसी पर्व पर संकल्पित पचक्खाण को उस समय बाधा पड़ती देखकर पहले कर लेना अनागतप्रत्याख्यान है।

२. अतिक्रान्त—पर्युषणादि पर्व पर विशेषकारण उपस्थित होने से पूर्व संकलित पचक्खाण को बाद में करना अतिक्रान्त प्रत्याख्यान है।

३. कोटिसहित—जहां एक प्रत्याख्यान की समाप्ति एवं दूसरे प्रत्याख्यान का प्रारंभ एक ही दिन में हो जाए, उसे कोटिसहित प्रत्याख्यान कहते हैं।

४. नियंत्रित—जिस दिन जिस प्रत्याख्यान को करना निश्चित किया है, उसे उसी दिन नियमित रूप से करना (प्राणान्तकष्ट में भी न छोड़ना) नियंत्रितप्रत्याख्यान है।

५. सागार—जिसमें कुछ आगार-अपवाद रखे जाएं, उनमें से किसी एक के उपस्थित होने पर त्यागी हुई वस्तु को निश्चित समय से पहले ही काम में ले लेना सागार-प्रत्याख्यान है।

६. अनागार—जिसमें महत्तरागार आदि आगार न हों, वह अनागार-प्रत्याख्यान है।

७. परिमाणकृत—दत्ति, कवल, घर, भिक्षा या भोजन के द्रव्यों को मर्यादा करना परिमाणकृत-प्रत्याख्यान है।

८. निरवशेष—अशन-पान-खादिम-स्वादिम का सर्वथा त्याग करना निरवशेष प्रत्याख्यान है।

९. संकेत—अंगूठा, मुष्टि, गांठ, घर, प्रस्वेद, उच्छ्वास, स्तिबुक (जल-बिन्दु) एवं दीप का आश्रय लेकर प्रत्याख्यान करना संकेतप्रत्याख्यान है।

१०. अद्धा—काल का आश्रय लेकर नवकारसी-पौरुषी आदि का प्रत्याख्यान करना अद्धाप्रत्याख्यान है।<sup>१</sup>

**प्रश्न २. अब्दाप्रत्याख्यान के दस भेद कौन-कौन से हैं ?**

उत्तर—१. नवकारसी २. पौरुषी ३. पुरिमार्ध ४. एकासन ५. एक-स्थान  
६. निर्विकृति ७. आचाम्ल ८. उपवास ९. अभिग्रह १०. चरम।

**प्रश्न ३. नवकारसी किसे कहते हैं ?**

उत्तर—नमुकारसहियं—नवकारसी—सूर्योदय के पश्चात् एक मुहूर्त्त तक चार आहार का प्रत्याख्यान। नमस्कार महामंत्र का उच्चारण करके इस प्रत्याख्यान को पूर्ण किया जाता है।

**प्रश्न ४. पौरुषी प्रत्याख्यान किसे कहते हैं ?**

उत्तर—पोरसी—प्रहर—दिन के चार भागों में एक भाग (प्रथम भाग) में चार आहार का प्रत्याख्यान करना पौरुषीप्रत्याख्यान है।

**प्रश्न ५. पुरिमार्द्ध प्रत्याख्यान किसे कहते हैं ?**

उत्तर—पुरिमार्द्ध—दो प्रहर—आधा दिन तक चार आहार का प्रत्याख्यान करना पुरिमार्द्ध-प्रत्याख्यान है।

**प्रश्न ६. एकाशन किसे कहते हैं ?**

उत्तर—एगासनं—एकाशन—दिन में एक बार भोजन करने के बाद तीन या चार आहार का प्रत्याख्यान करना एकाशन-प्रत्याख्यान है।

**प्रश्न ७. एक स्थान प्रत्याख्यान किसे कहते हैं ?**

उत्तर—एगट्टाणं—एक स्थान—एक आसन में बैठकर बिना बोलें और बिना संकेत किए दिन में एक बार भोजन करने के बाद तीन या चार आहार का प्रत्याख्यान एकस्थान-प्रत्याख्यान है। इसे एगट्टाण व एकलठाणा भी कहते हैं।

**प्रश्न ८. निर्विगय प्रत्याख्यान क्या है ?**

उत्तर—नीवी—दूध, दही आदि विकृतियां—गरिष्ठ पदार्थों का सर्वथा प्रत्याख्यान करना निर्विगय प्रत्याख्यान है। शास्त्र की भाषा में इसे निव्विगइ एवं चालू भाषा में नीवी कहा जाता है।

**प्रश्न ९. आचाम्ल (आयंबिल) प्रत्याख्यान किसे कहते हैं ?**

उत्तर—आयंबिलं—आयंबिल—दिन में एक बार एक अन्न और पानी के अतिरिक्त कुछ भी ग्रहण करने का प्रत्याख्यान आचाम्ल प्रत्याख्यान है। यह आयंबिल नाम से अधिक प्रसिद्ध है।

**प्रश्न १०. उपवास किसे कहते हैं ?**

उत्तर—अभत्तद्रुं—उपवास—एक दिन के लिए तीन या चार आहार का सर्वथा प्रत्याख्यान करना उसे उपवास प्रत्याख्यान कहते हैं।

**प्रश्न ११. अभिग्रह प्रत्याख्यान से आप क्या समझते हैं ?**

उत्तर—अभिग्गहो—अभिग्रह—स्वीकृत विशेष संकल्प की पूर्ति न हो तब तक तीन या चार आहार का प्रत्याख्यान करना अभिग्रह प्रत्याख्यान है।

**प्रश्न १२. चरम प्रत्याख्यान से क्या तात्पर्य है ?**

उत्तर—दिवस चरिमं—चरम प्रत्याख्यान—एक मुहूर्त दिन शेष हो, उसके बाद चारों आहार का प्रत्याख्यान करना चरम प्रत्याख्यान है।

## ८. आलोचना प्रकरण

**प्रश्न १. आलोचना किसे कहते हैं ?**

उत्तर—आलोचना का अर्थ—गुरु के समक्ष अपने दोषों को प्रकट करना। जिस पाप की शुद्धि आलोचना से ही हो जाती है उसे आलोचनाई प्रायश्चित्त कहते हैं।<sup>१</sup> मर्यादा में रहकर निष्कपट भाव से अपने सभी दोषों को गुरु के आगे प्रकट कर देने का नाम आलोचना है।<sup>२</sup>

**प्रश्न २. आलोचना के पर्याय क्या हैं ?**

उत्तर—विकटना, आलोचना, शोधि, निन्दा, गर्हा, शल्योद्धरण, आख्यान और प्रादुष्करण ये आलोचना के पर्याय हैं।<sup>३</sup>

**प्रश्न ३. आलोचना की विधि क्या है ?**

उत्तर—जैसे एक बालक अपने कार्य-अकार्य सरलता से बता देता है वैसे ही साधक को माया और अहंकार से मुक्त होकर आलोचना करनी चाहिए। उत्तराध्ययन में कहा—भिक्षु सहसा चण्डालोचित कर्म कर उसे कभी न छिपाए। अकरणीय किया हो तो किया और नहीं किया हो तो न किया कहे।<sup>४</sup>

**प्रश्न ४. आलोचना के कितने प्रकार हैं ?**

उत्तर—आलोचना के दो प्रकार हैं—१. मूल गुणों की आलोचना २. उत्तरगुणों की आलोचना।<sup>५</sup>

**प्रश्न ५. आलोचना किससे करें ?**

उत्तर—आचार्य, उपाध्याय, बहुश्रुत साधर्मिक साधु, बहुश्रुत अन्य संभोगिक

१. उशावृ ६०८, भिक्षु आगम

४. (क) ओघनिर्युक्ति ८०

२. भगवती २७/७ टीका

(ख) उत्तराध्ययन १/११

३. भिक्षु आगम शब्द कोश उशावृ

५. ओघ निर्युक्ति ७६०

६०८, ओघनिर्युक्ति ७६१



साधु, बहुश्रुत सारूपिक बहुश्रुत पश्चात्कृत श्रमणोपासक, सम्यक् भावित चैत्य अर्हत्-सिद्ध इस प्रकार क्रमशः के अभाव में दूसरे के पास आलोचना करना निहित है।<sup>१</sup>

**प्रश्न ६. आलोचना करने से क्या लाभ होता है ?**

उत्तर—आलोचना से जीव अनन्त संसार को बढ़ाने वाले, मोक्ष मार्ग में विघ्न उत्पन्न करने वाले माया, निदान तथा मिथ्यादर्शन शल्य को निकाल फेंकता है और ऋजुभाव को प्राप्त होता है। वह अमायी होता है, इसलिए वह स्त्रीवेद और नपुंसक वेद कर्म का बंध नहीं करता और यदि वे पहले बंधे हुए हो तो उनका क्षय कर देता है।<sup>२</sup>

**प्रश्न ७. आलोचना ग्रहण करते समय कौन-कौन से दोष वर्जनीय है ?**

उत्तर—१. नृत्य—अंगों को नचाते हुए आलोचना करना।

२. वल—शरीर को मोड़ते हुए आलोचना करना।

३. चल—अंगों को चलित करते हुए आलोचना करना।

४. भाषा—असंयम तथा गृहस्थ की भाषा में आलोचना करना।

५. मूक—मूक स्वर से 'गुणगुण' करते हुए आलोचना करना।

६. ढङ्कर—उच्च स्वर से आलोचना करना।

इन दोषों का वर्जन करते हुए गुरु के समझ संसृष्ट-असंसृष्ट हाथ, पात्र आदि संबंधि तथा दाता संबंधी आलोचना करनी चाहिए। आहार आदि जिस रूप में ग्रहण किया है, उसी रूप में क्रमशः गुरु को निवेदन करना चाहिए।<sup>३</sup>

**प्रश्न ८. आलोचना किन-किन कारणों से नहीं करता ?**

उत्तर—मेरी कीर्ति कम होगी, मेरा यश कम होगा, मेरा पूजा सत्कार कम होगा। मैंने अकरणीय किया है, मैं अकरणीय कर रहा हूँ और मैं अकरणीय करूँगा।<sup>४</sup>

**प्रश्न ९. आलोचना कौन करता है ?**

उत्तर—जो दस गुणों से युक्त अनगर अपने दोषों की आलोचना करता है।

१. जाति सम्पन्न—उच्च जाति वला।

१. व्यवहार १/३

२. उत्तरा. २६/६

३. ओघनिर्मुक्ति ५१६, ५१७

४. स्थानांग ३/३।३३८, ३४०

२. कुल सम्पन्न—उत्तम कुल वाला—यह व्यक्ति अपने द्वारा लिए गए प्रायश्चित्त को नियमपूर्वक अच्छी तरह पूरा करता है।
३. विनय सम्पन्न—विनयवान, यह बड़ों की बात मानकर हृदय से आलोचना कर लेता है।
४. ज्ञान सम्पन्न—ज्ञानवान, मोक्ष मार्ग के लिए क्या करना क्या नहीं करना इस बात को भलीभांति समझकर आलोचना कर लेता है।
५. दर्शन सम्पन्न—श्रद्धावान, यह भगवान के वचनों पर श्रद्धा होने के कारण यह शास्त्रों में बताई हुई प्रायश्चित्त से होने वाली शुद्धि को मानता है एवं आलोचना कर लेता है।
६. चारित्र सम्पन्न—उत्तम चारित्र वाला, यह अपने चारित्र की शुद्धि के करने के लिए दोषों की आलोचना करता है।
७. क्षान्त—क्षमावान्, यह किसी दोष के कारण गुरु से भर्त्सना या फटकार मिलने पर क्रोध नहीं करता, किन्तु अपना दोष स्वीकार कर आलोचना कर लेता है।
८. दान्त—इन्द्रियों को वश में रखने वाला कठोर से कठोर प्रायश्चित्त को भी शीघ्र स्वीकार कर लेता है। एवं पापों की आलोचना भी शुद्ध हृदय से करता है।
९. अमायी-माया—कपट रहित, यह अपने पापों को बिना छिपाये खुले दिल से आलोचना करता है।
१०. अपश्चात्तापी—आलोचना कर लेने के बाद पश्चात्ताप न करने वाला, यह आलोचना करके अपने आपको धन्य एवं कृतपुण्य मानता है।<sup>१</sup>

**प्रश्न १०. आलोचना देने का अधिकारी कौन होता है ?**

उत्तर—दस स्थानों से सम्पन्न अनगार आलोचना देने का योग्य होता है—

१. आचारवान्—ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप और वीर्य—इन पांच आचारों से युक्त।
२. आधारवान्—आलोचना लेने वाले के द्वारा आलोच्यमान समस्त अतिचारों को जानने वाला।

३. व्यवहारवान्—आगम, श्रुत, आज्ञा, धारणा और जीत—इन पांच व्यवहारों को जानने वाला।
४. अपत्रीडक—आलोचना करने वाले व्यक्ति में, वह लाज या संकोच से मुक्त होकर सम्यक् आलोचना कर सके वैसा साहस उत्पन्न करने वाला।
५. प्रकारी—आलोचना करने पर विशुद्धि कराने वाला।
६. अपरिश्रावी—आलोचना करने वाले के आलोचित दोषों को दूसरों के सामने प्रगट न करने वाला।
७. निर्यापक—बड़े प्रायश्चित्त को भी निभा सके—ऐसा सहयोग देने वाला।
८. अपायदर्शी—प्रायश्चित्त भंग से तथा सम्यक् आलोचना न करने से उत्पन्न दोषों को बताने वाला।
९. प्रियधर्मा—जिसे धर्म प्रिय हो।
१०. दृढधर्मा—जो आपात्काल में भी धर्म से विचलित न हो।<sup>१</sup>

**प्रश्न १०. आलोचना के कितने दोष हैं ?**

**उत्तर—आलोचना के दस दोष हैं—**

१. अकम्प्य—सेवा आदि के द्वारा आलोचना देने वाले की आराधना कर आलोचना करना।
२. अनुमान्य—मैं दुर्बल हूं मुझे थोड़ा प्रायश्चित्त देना इस प्रकार अनुनय कर आलोचना करना।
३. यद्दृष्ट—आचार्य आदि द्वारा जो दोष देखा गया है—उसी की आलोचना करना।
४. बादर—केवल बड़े दोषों की आलोचना करना।
५. सूक्ष्म—केवल छोटे दोषों की आलोचना करना।
६. छन्न—आचार्य न सुन पाए वैसे आलोचना करना।
७. शब्दाकुल—जोर-जोर से बोलकर दूसरे अगीतार्थ साधु सुने वैसी आलोचना करना।
८. बहुजन—एक के पास आलोचना कर फिर उसी दोष की दूसरे के पास

आलोचना करना।

६. अव्यक्त—अगीतार्थ के पास दोषों की आलोचना करना।

१०. तत्सेवी—आलोचना देने वाले जिन दोषों का सेवन करते हैं उनके पास उन दोषों की आलोचना करना।<sup>१</sup>

**प्रश्न १२. आलोचना से कितने गुण निष्पन्न होते हैं ?**

**उत्तर—** १. लघुता—मन अत्यन्त हल्का हो जाता है।

२. प्रसन्नता—मानसिक प्रसक्ति बनी रहती है।

३. आत्मपरनियंतिता—स्व और पर नियंत्रण सहज फलित होता है।

४. आर्जव—ऋजुता बढ़ती है।

५. शोधि—दोषों की विशुद्धि होती है।

६. दुष्करकरण—दुष्कर कार्य करने की क्षमता बढ़ती है।

७. आदर—आदर भाव बढ़ता है।

८. निःशल्यता—मानसिक गांठें खुल जाती हैं और नई गांठें नहीं घुलती, ग्रंथि-भेद हो जाता है।<sup>२</sup>

**प्रश्न १३. पारांचित प्रायश्चित्त के कितने कारण हैं ?**

**उत्तर—**पांच कारण हैं—

१. जिस कुल में रहता है उसी में भेद डालने का प्रयत्न करता है।

२. जिस गण में रहता है उसी में भेद डालने का प्रयत्न करता है।

३. जो हिंसा प्रेक्षी होता है—कुल, गण के सदस्यों का वध चाहता है।

४. जो छिन्द्रान्वेषी होता है।

५. जो बार-बार प्रश्नायतनों का प्रयोग करता है।<sup>३</sup>

१. ठाणं १०/७०

३. ठाणं ५/१/४७

२. ठाणं ८/१०/टि. ३

## ९. चातुर्मास प्रकरण

**प्रश्न १. चातुर्मास किसे कहते हैं ?**

उत्तर—चातुर्मास का अर्थ है—चार मास प्रवास। व्यवहार भाषा में इसका अर्थ है—चार मास (श्रावण, भाद्रव, आश्विन, कार्तिक) तक साधु एक स्थान पर रहे, विहार न करे।

**प्रश्न २. चातुर्मास का दूसरा नाम क्या है ?**

उत्तर—वर्षावास चातुर्मास में वर्षा होती है। वर्षा होने के कारण जीव विराधना से बचने के लिए साधु विहार न कर एक स्थान में वास करता है, इसलिए इसे वर्षावास कहते हैं।

**प्रश्न ३. क्या साधु चातुर्मास में विहार कर सकता है ?**

उत्तर—सामान्यतया साधु चातुर्मास में विहार नहीं कर सकता।<sup>१</sup>

**प्रश्न ४. क्या साधु चातुर्मास में वस्त्र जांच (ग्रहण कर) सकता है ?**

उत्तर—नहीं, चातुर्मास में साधु वस्त्र नहीं जांच सकता। विशेष परिस्थिति की बात अलग है।<sup>२</sup>

**प्रश्न ५. क्या साधु चातुर्मास में वासी आहार ले सकता है ?**

उत्तर—चातुर्मास में साधु (पहले दिन का) बासी फुलके, रोटी, मक्खन आदि नहीं ले सकता।

**प्रश्न ६. इसका क्या कारण है ?**

उत्तर—वर्षावास में इसमें लीलण-फूलण आने की संभावना होती है, इसलिए नहीं ले सकते। विशेषकर श्रावण और भाद्रव मास में।

**प्रश्न ७. चातुर्मास में साधु विहार क्यों नहीं करते ?**

उत्तर—वर्षा होने से जीवों की उत्पत्ति अधिक हो जाती है, वनस्पति, घास आदि की उत्पत्ति से मार्ग अवरुद्ध हो जाता है जीवहिंसा की विशेष संभावना हो

१. निशीथ १०/३४

३. (क) आचा. श्रु. २ अ. ३ उदे. १/१

२. निशीथ १०/४१

(ख) बृहत्कल्प १/३५

जाती है—इत्यादि कारणों को लेकर चातुर्मास में विहार करने का निषेध है।<sup>१</sup>

**प्रश्न ८. विशेष परिस्थिति उत्पन्न हो जाएं तो क्या साधु चातुर्मास में विहार कर सकते हैं ?**

**उत्तर—**विशेष उपस्थिति में विहार किया जा सकता है।<sup>१</sup> १. राजविरोध युद्ध आदि होने से विहार किया जा सकता है। २. दुर्भिक्ष होने से भिक्षा न मिलने जैसी स्थिति में। ३. कोई ग्राम से निकाल दे (राजाज्ञा न हों तो)। ४. बाढ़ आ जाय। ५. जीवन और चारित्र का नाश करने वाले अनार्य-दुष्ट पुरुषों का उपद्रव हो तो। ६. ज्ञानार्थी होकर अर्थात् कोई अपूर्व-शास्त्रज्ञानी आचार्यादि अनशन कर रहे हों एवं उस शास्त्र-ज्ञान के विच्छेद होने की संभावना हो ऐसी परिस्थिति में उसे प्राप्त करने के लिए। ७. दर्शनार्थी होकर अर्थात् जैन दर्शन की प्रभावना करने वाले शास्त्रज्ञान की प्राप्ति के लिए। ८. चारित्रार्थी होकर अर्थात् अपने चातुर्मास वाला क्षेत्र अनेषणा एवं स्त्री आदि के दोषों से दूषित होने पर चारित्र की रक्षा के लिए। ९. आचार्य-उपाध्यायादि के काल करने पर परिस्थितिबश दूसरे गच्छ (वर्ग) में जाना आवश्यक हो जाने पर। १०. आचार्य-उपाध्याय रोगी आदि की वैयावृत्य-सेवा करने के लिये गुरु आदि के भेजने पर।

**प्रश्न ९. चातुर्मास समाप्त होने के बाद क्या साधु-साध्वी उसी क्षेत्र में ठहर सकते हैं ?**

**उत्तर—**सामान्यतया मासकल्प एवं चातुर्मास करने के बाद विहार करना जरूरी है।<sup>२</sup> लेकिन अधिक वर्षा के कारण यदि मार्ग में विशेष-जीवहिंसा की संभावना हो तो १० तथा १५ दिन चातुर्मास के बाद भी ठहर सकते हैं।<sup>३</sup> इसी आगम-विवरण के आधार पर यदि कोई दीक्षार्थी हो तो उसे दीक्षा देने के लिये चातुर्मास एवं मासकल्प के बाद भी १०-१५ दिन अधिक ठहरने की परम्परा है। समाधान इस प्रकार किया जाता है कि यदि जीवदया के लिये चातुर्मास के बाद ठहरा जा सकता है तो जीव-दया पालने वाला साधु बन रहा हो तो उसके लिये अधिक ठहरने में भी कोई दोष नहीं है।

**प्रश्न १०. साधुओं को चातुर्मास कहाँ करना चाहिए ?**

**उत्तर—**जहाँ पठन-पाठन एवं स्वाध्याय-ध्यान तथा मल-मूत्र विसर्जन का

१. स्थाना. ५/२/६६-१००

३. आचा. श्रु. २ अ. ३ उदे. १/४-५

२. निशीथ २/३६

शुद्धस्थान हो, निर्दोष शय्या-संस्तारक एवं आहार-पानी सुलभता से प्राप्त हो सके वहां चातुर्मास करना चाहिए। इन वस्तुओं का योग न हो वहां चातुर्मास नहीं करना चाहिए।<sup>१</sup>

**प्रश्न ११. साधु-साध्वियां एक गांव में अधिक से अधिक कितने दिन ठहर सकते हैं ?**

**उत्तर**—सामान्यतया चातुर्मास में चार मास (अधिक मास गिनती में नहीं) एवं शेषकाल में साधु एक मास और साध्वियां दो मास ठहर सकती हैं। बड़े शहरों में अलग-अलग (पाड़े उपनगर अथवा बस्तियां) हों तो प्रत्येक में एक एवं दो मास ठहरा जा सकता है लेकिन जहां ठहरना हो वहीं गोचरी करनी चाहिए। अगर गोचरी का कल्प अलग न रखा जाए तो अलग-अलग ठहरना भी नहीं कल्पता।

**प्रश्न १२. एक बार चातुर्मास या शेषकाल (१-२ मास) की संपन्नता पर विहार करने के बाद फिर उस स्थान में साधु-साध्वी आ सकते हैं या नहीं ?**

**उत्तर**—जहां चातुर्मास किया है, दो वर्ष तक उस स्थान में पुनः चातुर्मास करना नहीं कल्पता। शेषकाल में जहां साधु एक पूर्ण मास (साध्वियां दो मास) रह जायें तो वहां पुनः दो मास तक नहीं आ सकते एवं रास्ते चलते आ जाए तो एक-दो रात्रि से अधिक ठहरना नहीं कल्पता।<sup>२</sup> साधु यदि छब्बीस दिन ठहर कर दूसरे गांव चले जायें एवं वहां कुछ दिन ठहरकर फिर उसी गांव में आकर ठहरना चाहें तो परम्परा के अनुसार यह विधि है कि दूसरे गांव में जितने दिन ठहरकर आए हों उनके आधे दिन और चार दिन मिलाकर जितने दिन होते हैं, उतने दिन ठहर सकते हैं अर्थात् दस दिन बाहर रहकर आए हों तो पांच एवं चार पहले वाले—ऐसे नौ दिन पुनः ठहरा जा सकता है। लेकिन यदि सत्ताईस दिन ठहर कर विहार करें एवं कुछ दिन बाहर रहकर वापस आए तो केवल तीन दिन ठहर सकते हैं क्योंकि सत्ताईस दिन का लघुमास कहलाता है अतः पिछली विधि काम नहीं आती। साध्वियां यदि उत्कृष्ट ५२ दिन ठहर कर दूसरे गांव चली जाएं तो वहां जितने दिन रहें उतने ही दिन अधिक पूर्वक्षेत्र में वापस आकर ठहर सकती हैं किन्तु ५४ दिन ठहर जाने के बाद छह दिन से अधिक ठहरना नहीं कल्पता।

१. आचां, श्रु. २, अ. २, उद्दे. १/३

३. (क) दसवें चूलिका २/११

२. बृहत्कल्प १/६,७,८,९

(ख) अचू. पृ. २६७

## १०. प्रवास प्रकरण

**प्रश्न १. साधु-साध्वियों के निवास-स्थान-संबंधी नियमों में क्या अन्तर है ?**

**उत्तर**—शीलरक्षा की दृष्टि से नियमों में कुछ अन्तर रखा गया है। जैसे—साधु बाजार में दुकानों पर ठहर सकते हैं, साध्वियां नहीं ठहर सकतीं। परिस्थितिवश ठहरना पड़े तो द्वार पर वस्त्र का पर्दा लगाकर ठहरना आवश्यक है।<sup>१</sup> साधु स्वतंत्र रूप से चाहे जहां ठहर सकते हैं किन्तु साध्वियां शय्यातर या अन्य किसी विश्वासी गृहस्थ की निश्रय—जिम्मेवारी के बिना नहीं ठहर सकतीं।

**प्रश्न २. क्या साधु-साध्वियां एक ग्राम आदि में एक साथ ठहर सकती हैं ?**

**उत्तर**—जिस ग्राम, नगर या राजधानी में एक ही कोट एवं एक ही दरवाजा (निकलने-प्रवेश करने का मार्ग) हो वहां साधु-साध्वियों को एक साथ एक ही समय रहना नहीं कल्पता। अनेक मार्ग हों तो रहा जा सकता है।<sup>२</sup>

**प्रश्न ३. क्या साधु साध्वियों के स्थान पर जा सकते हैं ?**

**उत्तर**—आवश्यकता हो तो उचित समय में जा सकते हैं। साध्वियों के स्थान पर खंखारा आदि द्वारा सूचना दिये बिना नहीं जाना चाहिए।<sup>३</sup>

**प्रश्न ४. क्या साधु उपाश्रय में ठहर सकते हैं ?**

**उत्तर**—जैन परम्परानुसार जहां बैठकर सामायिक-पौषध आदि धर्म-क्रिया की जाए, उस स्थान—मकान का नाम उपाश्रय है। गृहस्थों ने अपनी धर्मक्रिया करने के लिए उपाश्रय बनाया हो तो उसमें साधु ठहर सकते हैं लेकिन यदि साधु के लिए बनाया हो तो उसमें साधु को रहना नहीं कल्पता।<sup>४</sup>

**प्रश्न ५. साधुओं के लिए उपाश्रय कैसा होना चाहिए ?**

**उत्तर**—श्मशान, सूनाघर, वृक्ष का मूल (वृक्ष के नीचे) तथा गृहस्थों ने जो अपने

१. (क) बृहत्कल्प १/१२-१५/२३३१

३. निशीथ ४।२२

(ख) बृहत्कल्प १/२२ से २४

४. आ. श्रु. २ अ. २. उद्दे. २/४४

२. बृहत्कल्प २/८/२१३२



लिए बनाया हो ऐसा कोई भी मकान साधुओं को रहने के लिए खोजना चाहिए। साधु के लिए बनाया हुआ, छाया हुआ, लीपा हुआ तथा खरीदा हुआ मकान निवास के अयोग्य माना गया है।<sup>१</sup>

### प्रश्न ६. साधु अथवा साध्वी वृद्ध एवं बीमार हो जाय तो ?

उत्तर—विशेष परिस्थिति में साधु-साध्वियां स्थिरवासी एक ही स्थान में रह सकते हैं। स्थिरवासी होने के कारण इस प्रकार हैं—१. जंघा-बल क्षीण होने पर २. ग्लान-बीमार होने पर ३. सहायक साधु साध्वियों के अभाव में ४. तपस्यादि द्वारा शरीर कमजोर होने पर ५. अनशन कर लेने पर ६. आगमों का पठन एवं पाठन आवश्यक होने पर ७. विहार-क्षेत्रों के अभाव में ८. संलेखना करते समय ९. रोगमुक्त होने के बाद पूर्ण स्वास्थ्य एवं शक्ति प्राप्त करने के लिए।

इन कारणों से साधु-साध्वियां मासकल्प एवं चातुर्मासकल्प के बाद भी आवश्यकता के अनुसार एक ही स्थान पर निवास कर सकते हैं। वृद्ध-ग्लान आदि की सेवा करने वाले भी उनके साथ रह सकते हैं।<sup>२</sup>

### प्रश्न ७. अनेक साधु-आचार्य-उपाध्याय-गणावच्छेदक आदि एक जगह इकट्ठे हो जाएं तो ?

उत्तर—अनेक साधु (समान धर्मवाले) हों, आचार्य हों, उपाध्याय हों और चाहे गणावच्छेदक हों। यदि एक जगह एकत्रित होने का अवसर आ जाए जो उन्हें स्वतंत्र-रूप से रहना नहीं कल्पता। एक को प्रमुख बनाकर उसकी आज्ञा-अनुशासन में रहना चाहिए।<sup>३</sup>

१. उत्तरा. ३५/६

(ख) आवश्यक चूर्णि

२. (क) व्यवहार वृत्ति ३.४ गाथा ५३४-

३. व्यवहार ४/३२

५३५

## ११. विहार प्रकरण

**प्रश्न १. साधुओं को विहार क्यों करना चाहिए ?**

उत्तर—एक स्थान में रहने से आलस्य-प्रमाद बढ़ता है, लोगों से स्नेह-परिचय हो जाता है, संयम में शिथिलता की संभावना बढ़ जाती है एवं साधु सुख-सुविधावादी बन जाते हैं। ग्रामानुग्राम विहरण से लोगों का उपकार होता है, धर्म का प्रचार होता है, नये-नये अनुभव होते हैं एवं साधु निर्लेप रहते हुए सहनशील बनते हैं अतएव भगवान् ने साधुओं को नवकल्पविहारी कहा है। आठ मास के आठ कल्प एवं चातुर्मास का एक कल्प—ऐसे नव कल्प माने गये हैं। सामान्य अवस्था में इन कल्पों का भंग करके जो साधु एक ही स्थान में नियतवास करते हैं, वे प्रायश्चित्त के भागी होते हैं।<sup>१</sup>

**प्रश्न २. साधु-साध्वियां कौन-कौन से क्षेत्रों में विहार कर सकते हैं ?**

उत्तर—जहां ज्ञान-दर्शन-चारित्र्य की वृद्धि होती हो अर्थात् शुद्ध साधुपना पल सकता हो, उन सभी क्षेत्रों-देशों में साधु-साध्वियां विहार कर सकते हैं।

**प्रश्न ३. क्या साधु-साध्वियां विकट देश में विहार कर सकते हैं ?**

उत्तर—साधु कर सकते हैं लेकिन साध्वियां नहीं कर सकतीं। (जहां चोर, जार एवं अनार्य लोगों की बहुलता हो, उसे विकट देश कहते हैं)।

**प्रश्न ४. क्या साधु सिर ढककर विहार कर सकते हैं ?**

उत्तर—साधु सिर ढककर विशेष कारण (जैसे-वर्षा, ओस, धुअर आदि) के सिवाय विहार नहीं कर सकते हैं।<sup>२</sup>

**प्रश्न ५. विहार करते समय रास्ते में सचित्त पृथ्वी-पानी-वनस्पति आदि आ जाए तो ?**

उत्तर—आसपास में दूसरा शुद्ध मार्ग हो तो उस मार्ग से जाना चाहिए। दूसरे मार्ग की व्यवस्था न हो और जाना जरूरी हो तो जाने की विधि इस प्रकार

१. (क) निशीथ २/३७

२. निशीथ २/६६

(ख) अ. २ अ. २, उद्दे. २, सू. ४३३

है—मार्ग में पृथ्वी-पानी हो तो पानीवाले मार्ग से नहीं जाना। (उसमें त्रस एवं वनस्पति की भी हिंसा है) पृथ्वी-वनस्पति हो तो वनस्पतिवाले मार्ग से नहीं जाना। (उसमें अनन्त जीवों की हिंसा भी हो सकती है) पृथ्वी-त्रस हों तो पृथ्वी वाले मार्ग से जाना।

**प्रश्न ६. एक मार्ग में हरियाली हो, दूसरे मार्ग में पानी हो। पानी और हरियाली दोनों ही जीव हैं ?**

**उत्तर—**दोनों में जीव होने पर भी पहले पानी वाले मार्ग में न जाए।<sup>१</sup> यदि दूसरा रास्ता ही न हो तो पानी वाले मार्ग को पार कर सकते हैं। क्योंकि पानी में हरियाली (निगोद की नियमा) भी है।

**प्रश्न ७. साधु-मार्ग में छोटी या बड़ी नदी आ जाए तो क्या साधु नदी में चलकर उसे पार कर सकता है ?**

**उत्तर—**दूसरा मार्ग हो तो थोड़ा चक्कर लेकर उस मार्ग से जाना चाहिए। जहां तक हो सके नदी को पैरों से पार नहीं करना चाहिए। दूसरा विकल्प न हो तो नदी भी पार कर सकते हैं।

**प्रश्न ८. नदी पार करने की क्या विधि है ?**

**उत्तर—**भण्डोपकरणों को व्यवस्थित कर अपने शरीर का प्रमार्जन करना चाहिए एवं फिर सागारिक अनशन अर्थात् जल में रहना हो तब तक चारों आहार का त्याग कर एक पैर जल से ऊपर एवं एक पैर जल में रखते हुए नदी आदि के जल से पार होना चाहिए।<sup>२</sup>

**प्रश्न ९. नदी आदि पार करने की क्या कोई मर्यादा भी है ?**

**उत्तर—**जिसमें थोड़ा जल हो एवं जिसमें पूर्वोक्त विधि से चला जा सके ऐसी छोटी नदी एक मास में दो-तीन बार तक पार की जा सकती है<sup>३</sup> लेकिन जिनमें अधिक गहरा जल हो, वैसी गंगा, यमुना, सरयू, कोसिका, मही—ये पांच बड़ी नदियां<sup>४</sup> (इन जैसी दूसरी भी) एक मास में केवल एक बार एवं वर्ष में उत्कृष्ट नौ बार (नौका या पैरों द्वारा) पार की जा सकती हैं।<sup>५</sup>

इन पांच कारणों से अपवाद रूप में नदी पार करने की आज्ञा भी दी गई है—

१. राजा आदि के भय से।

१. ओघ निर्युक्ति ४३ से ४५

२. आ. श्रु. २. अ. ३ उद्दे. २/३४

३. स्थानांग ५/२/९८

४. (क) बृहत्कल्प ४।२९

(ख) स्थानांग ५/२/९८

५. स्थानांग ५/२/९८

२. दुर्भिक्ष होने से।
३. शत्रु द्वारा उठाकर नदी आदि में डाल देने पर।
४. बाढ़ आदि आने से नदी साधु को बहाकर ले जाये तो।
५. म्लेच्छों का उपद्रव होने पर।

**प्रश्न १०. क्या साधु नौका (नाव) में बैठ सकते हैं ?**

उत्तर—चलकर पार नहीं किया जा सके—इतना जल यदि रास्ते में आ जाए तो नौका में बैठकर नदी आदि को पार कर सकते हैं लेकिन वह नौका ऊर्ध्वप्रतिस्रोतगामी, अधोअनुस्रोतगामी एवं तिर्यग्गामिनी न हो, उत्कृष्ट एक-आधा योजन से अधिक लंबा मार्ग न हो तथा गृहस्थ अपने काम के लिए उसे ले जा रहा हो एवं वह सहर्ष ले जाना स्वीकार करे तो अपने भण्डोपकरणों को एकत्रित कर विधिपूर्वक साधु नाव पर चढ़ सकते हैं।<sup>१</sup>

**प्रश्न ११. क्या साधु-साध्वियां रात के समय विहार कर सकते हैं ?**

उत्तर—नहीं कर सकते। स्वाध्याय-ध्यान एवं स्थंडिलार्थ बाहर जा सकते हैं किन्तु अकेला जाना नहीं कल्पता।<sup>२</sup> व्याख्यानदि करने के लिए लगभग डेढ़ सौ मीटर तक जाने की परम्परा है लेकिन मस्तक ढंक कर एवं पूंज-पूंज कर जाना चाहिए।

**प्रश्न १२. रात्रि विहार का निषेध क्यों किया गया ?**

उत्तर—संभवतः दो कारण हैं—१. रात को दीखता नहीं और लंबे मार्ग में पूंज-पूंज कर चलना संभव नहीं। २. सूक्ष्मअपकाय की वृष्टि। भगवती १/६ में कहा गया है कि सूक्ष्मअपकाय हर वक्त बरसती है। दिन में गर्मी के कारण नीचे पहुंचने से पहले ही नष्ट हो जाती है लेकिन रात को नष्ट होने की संभावना कम रहने से नीचे गिरती है अतः उस समय पूर्वोक्त विशेष कार्यों के बिना साधुओं को घूमना-फिरना एवं विहार करना नहीं कल्पता।

**प्रश्न १३. क्या साधु अकेला विहार कर सकता है ?**

उत्तर—अव्यक्त अर्थात् ज्ञान एवं वय से अपरिपक्व साधु को अकेला विचरना उपयुक्त नहीं है। अकेला विचरने वाला साधु आठ गुणों से सम्पन्न होना चाहिए। आचार्य की आज्ञा या विशेष परिस्थिति की बात न्यारी।<sup>३</sup>

१. आ. श्रु. २ अ. ३ उ. १/१४

३. स्थानां. ८/१

२. बृहत्कल्प १/४५

**प्रश्न १४. आठ गुण कौन-कौन से हैं ?**

उत्तर—१. तत्त्वों में पूर्ण श्रद्धा वाला २. सच्चा पुरुषार्थी ३. मेधावी ४. बहुश्रुत  
५. शक्तिमान ६. अल्पाधिकरण ७. धृतिमान ८. वीर्य सम्पन्न।<sup>१</sup>

**प्रश्न १५. जो स्वच्छन्दतावश अकेले विचर रहे हैं, उनके लिए प्रभु ने क्या कहा है ?**

उत्तर—स्वच्छन्दता से अकेले भटकने वाले साधु में प्रभु ने तेरह दुर्गुण कहे हैं।<sup>२</sup> वह  
१. बहुत क्रोधवाला २. बहुत मान वाला ३. बहुत कपटवाला ४. बहुत लोभवाला ५. बहुत पापवाला ६. नया-नया वेश बनाने वाला ७. बहुत धूर्तता वाला ८. दुष्ट संकल्पवाला ९. आस्रवों में अनुरक्तिवाला, १०. दुष्ट कर्म करनेवाला ११. मैं विशेष चरित्र पालन के लिए अकेला विचरता हूँ, इस प्रकार अपनी प्रशंसा करने वाला, १२. मेरा दोष कोई देख न ले, इस भय से आक्रांत एवं १३. अज्ञान-प्रमादवश सदा मूढ़भाव में रमण करनेवाला होता है।

**प्रश्न १६. सहगामी साधु के कालधर्म प्राप्त होने पर यदि साधु अकेला रह जाये तो ?**

उत्तर—अपने साधर्मिक साधुओं की तरफ विहार कर देना चाहिए एवं विशेष कारण के बिना रास्ते के गांवों में एक रात्रि से अधिक नहीं ठहरना चाहिए।<sup>३</sup>

**प्रश्न १७. विहार में साधु कम से कम कितने होने चाहिए ?**

उत्तर—कम से कम दो साधु तो होने ही चाहिए। आचार्य-उपाध्याय शेषकाल में दो साधुओं से विचर सकते हैं, चातुर्मास में तीन अवश्य होने चाहिए। गणावच्छेदक शेषकाल में तीन से कम एवं चतुर्मास में चार से कम साधुओं के बिना नहीं रह सकते।

**प्रश्न १८. क्या योग्य साध्वियां अकेली विहार कर सकती हैं ?**

उत्तर—नहीं अकेली साध्वी स्थंडिलभूमि, गोचरी एवं स्वाध्याय करने के लिए भी नहीं जा सकती। परिस्थितिवश अकेली हो जाए तो उसे जल्दी से जल्दी दूसरी साध्वी से मिलने का प्रयत्न करना चाहिए।<sup>४</sup>

**प्रश्न १९. साध्वियों क विहार की क्या विधि है ?**

उत्तर—सामान्यतया दो साध्वियां स्वतंत्र विहार नहीं कर सकतीं। शेषकाल या

१. स्थानांग ८/१

३. व्यवहार ४/११

२. आ. ५/४

४. बृहत्कल्प ५/१५

चातुर्मास में कम से कम तीन साध्वियां होनी चाहिए। प्रवर्तिनी साध्वी को शेषकाल में तीन एवं चातुर्मास में चार साध्वियों से कम रहना नहीं कल्पता। इस प्रकार गणावच्छेदिका-साध्वी शेषकाल में चार साध्वियों एवं चातुर्मास में पांच से कम नहीं रह सकती।

**प्रश्न २०. रोग अवस्था में साधु या साध्वी विहार न कर सके तो क्या विधान है ?**

**उत्तर—**रोग अवस्था में साधु या साध्वी तब तक एक गांव में रह सकते हैं जब तक वे स्वस्थ न हो जाएं।

**प्रश्न २१. क्या साधु रोग अवस्था के बिना भी एक गांव में एक मास से अधिक रह सकता है ?**

**उत्तर—**हां, रह सकता है। स्थविर होने पर एक गांव में रह सकता है। ज्ञान, दर्शन, चारित्र की वृद्धि हेतु भी एक गांव में रह सकता है। आचार्यों, स्थविर व बड़े साधुओं के कल्प में भी ज्यादा रह सकता है।

**प्रश्न २२. सूर्योदय के पहले या सूर्यास्त के बाद कितने समय तक विहार किया जा सकता है ?**

**उत्तर—**सूर्य के उदय से पहले इतना प्रकाश हो जाए कि जमीन पर चलने वाले चींटी आदि जीव स्पष्ट दिखाई दें और सूर्यास्त के बाद भी इतना प्रकाश हो जिसमें जीव दिखाई दे, उस समय तक साधु विहार कर सकता है।

**प्रश्न २३. विहार में साधु गृहीत आहार-पानी का कितने कि. मी. तक उपभोग कर सकता है ?**

**उत्तर—**दो कोस तक यानी ४-५ मील अथवा ७-८ किलोमीटर के आसपास।

## १२. आशातना प्रकरण

प्रश्न १. आशातना किसे कहते हैं ?

उत्तर—आशातना का अर्थ है अशिष्ट व्यवहार। आय का अर्थ है सम्यग् दर्शन आदि की प्राप्ति और शातना का अर्थ है विनाश। जो आय का नाश करती है, वह आशातना है। चारित्रवान्, तपस्वी, ज्ञानी तथा ज्ञान आदि की अवहेलना को आशातना कहते हैं।

प्रश्न २. आशातना कितने प्रकार की होती है ?

उत्तर—तैतीस प्रकार की।<sup>१</sup>

प्रश्न ३. आशातना का स्वरूप क्या है ?

उत्तर—असद्व्यवहार, अवज्ञा अथवा अविनय पूर्ण व्यवहार करना आशातना है।

प्रश्न—४. दीक्षापर्याय में रत्नाधिक (दीक्षा पर्याय में बड़े साधु) की आशातना हो जाए तो क्या करना चाहिए ?

उत्तर—वन्दन कर खमतखामणा करना चाहिए।

प्रश्न ५. बड़े साधु द्वारा छोटे साधु के पैर आदि लग जाए तो उन्हें क्या करना चाहिए ?

उत्तर—उन्हें भी उससे क्षमायाचना करनी चाहिए।

प्रश्न ६. परस्पर बोलचाल हो जाए तो क्या करना चाहिए ?

उत्तर—खमत-खामणा।

प्रश्न ७. खमत-खामणा का क्या अर्थ है ?

उत्तर—अपनी गलती के लिए क्षमा मांगना और दूसरों की गलती के लिए क्षमा देना।

प्रश्न ८. साधुओं के लिए खमत-खामणा करना क्यों आवश्यक है ?

उत्तर—जब तक परस्पर खमत-खामणा न करे तब तक वह आहारादि नहीं कर सकते।

### प्रश्न ६. तैतीस आशातनाएं कौनसी है ?

उत्तर—१-५. अर्हत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधुओं की आशातना, ६. साध्वियों की आशातना, ७-८. श्रावकों एवं श्राविकाओं की आशातना, ९-१०. देवों और देवियों की आशातना, ११-१२. इहलोक और परलोक की आशातना, १३. केवलीप्रज्ञप्त धर्म की आशातना, १४. देव, मनुष्य और असुरसहित लोक की आशातना, १५. सर्व-प्राण-भूत-जीव और सत्त्वों की आशातना, १६. काल की आशातना, १७. श्रुत की आशातना, १८. श्रुत देवता की आशातना, १९. वाचनाचार्य की आशातना, २०. व्याविद्ध-कहीं के अक्षरों को कहीं, २१. व्यत्याम्रडित-उच्चार्यमान पाठ में दूसरे पाठों का मिश्रण करना, २२. हीनाक्षर-अक्षरों का न्यून कर उच्चारण करना। २३. अत्यक्षर-अक्षरों को अधिक कर उच्चारण करना। २४. पदहीन-पदों को कम कर उच्चारण करना। २५. विनयहीन-विराम रहित उच्चारण करना। २६. घोषहीन-उदात्त आदि घोष रहित उच्चारण करना। २७. योगहीन-संबंध रहित उच्चारण करना। २८. सुष्ठुदत्त-योग्यता से अधिक ज्ञान देना। २९. दुट्टु प्रतीच्छित्त-ज्ञान को सम्यक् भाव से ग्रहण न करना। ३०. अकाल में स्वाध्याय करना। ३१. काल में स्वाध्याय न करना। ३२. अस्वाध्याय काल में स्वाध्याय करना। ३३. स्वाध्याय काल में स्वाध्याय न करना।<sup>१</sup>



## १३. गण प्रकरण

**प्रश्न १. क्या साधुओं में भी विशेष पद होते हैं ?**

उत्तर—गच्छ—गण या संघ की व्यवस्था के लिए योग्य व्यक्ति को दिये जाने वाले विशेष-अधिकार का नाम पद है। जैन संघ में साधुओं की योग्यतानुसार सात पद निश्चित किये गये हैं—१. आचार्य, २. उपाध्याय ३. प्रवर्तक ४. स्थविर ५. गणी ६. गणधर ७. गणावच्छेदक।<sup>१</sup>

**प्रश्न २. आचार्य किसे कहते हैं ?**

उत्तर—जो पांच प्रकार के आचार का पालन करते हैं, प्रकाश करते हैं—तत्त्व समझाते हैं एवं उनके पालन का उपदेश देते हैं, जो सूत्र और अर्थ के जानकार होते हैं, आचार्य के शास्त्रोक्त लक्षणों से युक्त होते हैं, गण के मेढीभूत (आधारभूत) होते हैं एवं गण की चिन्ता से मुक्त होकर (योग्य शिष्य को अपना काम सौंपकर) शास्त्रों के अर्थ की वाचना देते हैं, वे आचार्य कहलाते हैं।

**प्रश्न ३. आचार्य की आठ सम्पदा कौन कौन सी है ?**

उत्तर—(१) आचार संपदा (२) श्रुत संपदा (३) शरीर संपदा (४) वचन संपदा (५) वाचना संपदा (६) मति संपदा (७) प्रयोगमति संपदा (८) संग्रह परिज्ञा संपदा।<sup>२</sup>

**प्रश्न ४. आचार संपदा क्या है ? उसके कौन कौन से चार भेद हैं ?**

उत्तर—चारित्र की विशेष दृढ़ता को आचारसंपदा कहते हैं। इसके चार भेद हैं—(क) संयम में ध्रुवयोगयुक्त होना अर्थात् संयम की प्रत्येक क्रिया में मन-वचन-काया को स्थिरता पूर्वक लगाना। (ख) गणी की उपाधि मिलने पर या संयम की प्रधानता के कारण मन में अभिमान न करना—सदा नम्र रहना। (ग) अप्रतिबद्ध विहार करते रहना। (एक स्थान पर अधिक न

१. स्थानां. ३/३/३६२

(ख) दसाओ ४/३

२. (क) स्थानां. ८/१५/१६

ठहरना)। (घ) अपना स्वभाव प्रौढ़ व्यक्तियों के समान गंभीर रखना।  
(कम उम्र होने पर भी गम्भीर विचार रखना)।<sup>१</sup>

**प्रश्न ५. श्रुत संपदा कौन सी है ? उसके चार भेद बताएं ?**

**उत्तर**—बहुत शास्त्रों का विशद ज्ञान होना श्रुतसंपदा है। इसके चार प्रकार हैं—(क) बहुश्रुत—बहुत शास्त्र पढ़कर उनके तत्त्वों को भली-भांति समझ लेना एवं उसे समझाने में समर्थ होना। (ख) परिचितश्रुत—शास्त्रों को अपने नाम की तरह याद रखना अर्थात् विशिष्ट धारणाशक्तिवाला होना तथा स्वाध्याय का अभ्यासी होना। (ग) विचित्रश्रुत—स्व-पर मत के तलस्पर्शी अध्ययन द्वारा अपने शास्त्रीय ज्ञान में विचित्रता प्राप्त कर लेना। (घ) घोषविशुद्धिश्रुत—शास्त्र का उच्चारण करते समय उदात्त-अनुदात्त-स्वरित, ह्रस्व-दीर्घ-प्लुत एवं स्वरों-व्यंजनों का पूरा ध्यान रखना।<sup>२</sup>

**प्रश्न ६. शरीर सम्पदा से आप क्या समझते हैं ? उनके भेदों को स्पष्ट करें।**

**उत्तर**—शरीर का सुसंगठित और प्रभावशाली होना शरीरसंपदा है। इसके चार लक्षण हैं—(क) आरोह-परिणाहसंपन्न—शरीर की लम्बाई-चौड़ाई का प्रमाण युक्त होना। (ख) अनवत्रपशरीर—शरीर का अलज्जास्पद होना (जिसे देखकर घृणा उत्पन्न न हो)। (ग) स्थिरसंहनन—शरीर का स्थिर संगठन होना (ढीला-ढाला न होना)। (घ) प्रतिपूर्णेन्द्रिय-इन्द्रियों की परिपूर्णता का होना (कान-आंख आदि में कमी न होना)। आने वाले व्यक्ति पर सबसे पहले शारीरिक सौन्दर्य का ही प्रभाव पड़ता है। केशीकुमार श्रमण और अनाथीमुनि के शरीर की सुन्दरता ने ही राजा प्रदेशी और सम्राट् श्रेणिक को आकृष्ट किया था अतः आचार्य के लिये इस आवश्यक माना गया है।

**प्रश्न ७. वचन संपदा किसे कहते हैं ? उसके भेदों को समझाइये।**

**उत्तर**—मधुर, प्रभावशाली एवं आदेय वचन का होना वचनसंपदा है। इसके चार भेद हैं—(क) आदेय वचन—वचन जनता द्वारा ग्रहण करने योग्य होना चाहिये। (ख) मधुरवचन—गणी के वचन में मधुरता-कर्णप्रियता एवं अर्थ-गाम्भीर्य होना चाहिये। (ग) अनिश्रित वचन—वाणी क्रोधादि कषाय से रहित होनी चाहिये। उन्हें आवेश में आकर नहीं बोलना चाहिए। (घ) असंदिग्धवचन—वाणी ऐसी होनी चाहिये जिसे सुनकर श्रोता के मन में सन्देह उत्पन्न न हो।<sup>३</sup>

- |                          |              |                          |
|--------------------------|--------------|--------------------------|
| १. (क) दशाश्रुत स्कन्ध   | (ख) दशाश्रुत | (ख) स्थानांग ८/१५/टि. १६ |
| स्थान टिप्पण ८/१५/टि. १६ |              | ३. दसाओ ४/६              |
| २. (क) दसाओ ४/५          |              | ४. दसाओ ४/७              |

**प्रश्न ८. वाचना संपदा से क्या तात्पर्य है ? भेदों सहित स्पष्ट करे।**

उत्तर—शिष्यों को पढ़ाने की योग्यता को वाचनासंपदा कहते हैं। वह चार प्रकार की है—(क) विचयोद्देश—किस शिष्य को कौन-सा शास्त्र किस प्रकार पढ़ाना, इस बात का ठीक-ठीक निर्देशन करना अर्थात् शिष्यों का पाठ्यक्रम निश्चित करना। (ख) विनयवाचना—शिष्यों को निश्चित पाठ्यक्रम के अनुसार पढ़ाना। (ग) परिनिर्वाप्यवाचना—शिष्य जितना ग्रहण कर सके उसे उतना ही पढ़ाना। (घ) अर्थनिर्यापकत्व—प्रमाण-नय कारक-समास-विभक्ति आदि द्वारा शास्त्रों के अर्थों की संगति बिठाते हुए एवं पूर्वापर संबंध को समझाते हुए पढ़ाना।<sup>१</sup>

**प्रश्न ९. मति संपदा किसे कहते हैं ? उसके चार भेदों के नाम लिखो।**

उत्तर—मति संपदा—मतिज्ञान की उत्कृष्टता को मतिसंपदा कहते हैं। उसके चार भेद हैं—अवग्रह, ईहा, अवाय और धारणा।<sup>२</sup>

**प्रश्न १०. प्रयोगमति संपदा किसे कहते हैं ? उसके चार भेद कौन-कौन से हैं ?**

उत्तर—शास्त्रार्थ या विवाद के लिए अवसर आदि की जानकारी को प्रयोगमति संपदा कहते हैं। इसके चार भेद ये हैं—(क) अपनी शक्ति को समझकर एवं भावी सफलता को ध्यान में रखकर शास्त्रार्थ करना। (ख) सभा की विद्वत्ता एवं मूर्खता पर पूरा विचार करके शास्त्रार्थ करना। (ग) जहां शास्त्रार्थ करना है, उस क्षेत्र में अनुकूलता कैसी है—इस बात पर गौर करके शास्त्रार्थ करना। (घ) शास्त्रार्थ के विषय को अच्छी तरह समझकर अर्थात् स्वपक्ष-परपक्ष के तर्कों-वितर्कों का पूरी तरह अवगाहन कर शास्त्रार्थ में प्रवृत्त होना।<sup>३</sup>

**प्रश्न ११. संग्रह परिज्ञा संपदा को भेदों सहित स्पष्ट करें ?**

उत्तर—शेषकाल एवं चातुर्मास के लिए मकान-पाट-वस्त्र-पात्र आदि का कल्प के अनुसार संग्रह करना संग्रहपरिज्ञासंपदा है। इसके भी चार प्रकार हैं—(क) साधुओं के लिए चातुर्मासार्थ स्थान का निरीक्षण करना। (ख) पीठ-फलक-शय्या-संथारे का ध्यान रखना। संघ कि उपयोग में आने वाले उपकरण आदि का संग्रह (ग) समयानुसार साधु के सभी आचारों का विधिपूर्वक स्वयं पालन करना एवं दूसरों से करवाना। (घ) अपने से बड़ों का यथाविधि विनय करना।<sup>४</sup>

१. दसाओ ४/८

२. (क) दसाओ ४/९

(ख) स्थानां. ८/१५/टि. १६

३. दसाओ ४/१२

४. (क) दसाओ ४/१३

(ख) स्थानां. ८/१५/टि. १६

### प्रश्न १२. आचार्य में और क्या-क्या विशेषता होनी चाहिए ?

उत्तर—आचार्य के छह कर्तव्य बतलाये गए हैं—१. सूत्रार्थ स्थिरीकरण—सूत्र के विवादग्रस्त अर्थों का निश्चय करना अथवा सूत्र और अर्थ में चतुर्विध संघ को स्थिर करना २. विनय—सबके साथ नम्रता से व्यवहार करना ३. गुरु पूजा—अपने से बड़े साधुओं की भक्ति करना ४. शैक्ष बहुमान—शिक्षा ग्रहण करनेवाले नवदीक्षित साधुओं का सत्कार करना ५. दानपति श्रद्धा—दान देनेवाले व्यक्तियों की उपदेशादि द्वारा श्रद्धा बढ़ाना ६. बुद्धिबल वर्द्धन—शिष्यों की बुद्धि तथा आध्यात्मिक शक्ति बढ़ाना।<sup>१</sup>

इसके अलावा अपने अंतेवासी-शिष्य को चार प्रकार की विनय प्रतिपत्ति (चार प्रकार के विनय का प्रतिपादन करने की कला) सिखाना भी आचार्य के लिए आवश्यक है। आचार्य को छह गुणों से सम्पन्न होना चाहिए— (१) श्रद्धा सम्पन्न (२) सभी तरह से सच्चा (३) मेधावी (४) बहुश्रुत (५) शक्तिमान। (६) स्वपक्ष-परपक्ष के विग्रह से दूर रहने वाला।<sup>२</sup>

### प्रश्न १३. चार प्रकार के विनय कौन-कौन से हैं ?

उत्तर—चार विनय इस प्रकार हैं—१. आचारविनय २. श्रुतविनय ३. विक्षेपणा-विनय ४. दोषनिर्घातनाविनय।<sup>३</sup>

### प्रश्न १४. आचार विनय क्या है ?

उत्तर—आचारविनय की शिक्षा में आचार्य अपने शिष्य को ये चार बातें सिखाते हैं—१. साधु को सत्रह प्रकार के संयम में सुदृढ़ रखना। २. बारह प्रकार की तपस्या में प्रोत्साहित करना। ३. गण की सारणा-वारणा करते हुए रोगी, बाल, वृद्ध एवं दुर्बल साधुओं की उचित व्यवस्था करना। ४. योग्य साधुओं को एकाकीविहार-प्रतिमा स्वीकार करने के लिए प्रेरित करना।<sup>४</sup>

### प्रश्न १५. श्रुत विनय की शिक्षा में आचार्य अपने शिष्य को श्रुत संबंधी क्या शिक्षा देते हैं ?

उत्तर—श्रुतविनय की शिक्षा में आचार्य अपने शिष्य को पढ़ाने की विधि सिखाते हैं। जैसे—पहले मूलसूत्र पढ़ाना, फिर अर्थ पढ़ाना, विद्यार्थी का हित हो वह पढ़ाना एवं फिर प्रमाण-नय-निक्षेपादि द्वारा तत्त्व को सांगोपांग समझाना।<sup>५</sup>

१. स्थानांग ६/५७ टीका

४. दसाओ ४/१५

२. स्थानांग ६/१

५. दसाओ ४/१६

३. दसाओ ४/१४

**प्रश्न १६. विक्षेपणाविनय क्या है ?**

उत्तर—विक्षेपणाविनय की शिक्षा में आचार्य अपने शिष्य को ये चार बातें सिखाते हैं—१. मिथ्यात्वी को सम्यग्दृष्टि बनाना। २. सम्यग्-दृष्टि को सर्वविरति बनाना। ३. सम्यक्त्व-चारित्र से पतित व्यक्ति को पुनः स्थिर करना। ४. चारित्रधर्म की वृद्धि करने वाले अनुष्ठानों में तत्पर रहना।<sup>१</sup>

**प्रश्न १७. दोष-निर्घातना विनय से क्या तात्पर्य है ?**

उत्तर—दोष निर्घातना विनय की शिक्षा में आचार्य अपने शिष्य को ये चार बातें सिखाते हैं—१. क्रोधी के क्रोध को उपदेश से शान्त करना। २. दोषी के दोष को दूर करना। ३. शंका-कांक्षा करने वालों को उनसे निवृत्त करना। ४. स्वयं पूर्वोक्त दोषों से मुक्त रहना।<sup>२</sup>

**प्रश्न १८. आचार किसे कहते हैं ?**

उत्तर—मोक्ष एवं आत्मिक गुणों की वृद्धि के लिए किए जाने वाले ज्ञानादि आसेवन रूप अनुष्ठान विशेष को आचार कहते हैं।

**प्रश्न १९. आचार कौन कौन से हैं ?**

उत्तर—ज्ञानाचार, दर्शनाचार, चारित्राचार, तपाचार, वीर्याचार।<sup>३</sup>

**प्रश्न २०. ज्ञानाचार किसे कहते हैं ? उसकी आराधना के आठ प्रकार कौन से हैं ?**

उत्तर—सम्यक्त्व का ज्ञान कराने के हेतुभूत-श्रुतज्ञान की आराधना करना ज्ञानाचार है। यह आराधना आठ प्रकार से होती है—१. जिस समय जो सूत्र पढ़ने की आज्ञा हो, वह सूत्र उसी समय पढ़ना। २. ज्ञानदाता का विनय करना। ३. ज्ञानदाता का बहुमान करना। ४. शास्त्र पढ़ते समय आगमोक्त विधि से तप करना। ५. ज्ञानदाता के गुणों को न छिपाना अर्थात् उनका गुणगान करना। ६. सूत्र के पाठ का शुद्ध उच्चारण करना। ७. सूत्र का निःस्वार्थ बुद्धि से सच्चा अर्थ करना। ८. सूत्र और अर्थ दोनों को शुद्ध पढ़ना एवं समझना।<sup>४</sup>

**प्रश्न २१. दर्शनाचार से क्या तात्पर्य है तथा उसकी आराधना के आठ आचार कौन से हैं ?**

उत्तर—निःशङ्कितारूप से सम्यग्दर्शन की आराधना करना दर्शनाचार है। दर्शन की आराधना के आठ आचार ये हैं—१. सर्वज्ञ भगवान् की वाणी में

१. दसाओ ४/१७

४. स्थानांग ५/२/१४७ का टिप्पण ६४

२. दसाओ ४/१८

५. उत्तरा. २८/३१

३. स्थानांग ५/२/१४७

शंका न करना। २. पर-दर्शन की विशेष-ऋद्धि देखकर उसकी आकांक्षा न करना। ३. धर्म क्रिया के फलों में संदेह न करना। ४. अनेक मत-मतान्तरों के विवादास्पद विचारों को सुनकर अपनी श्रद्धा को डावांडोल न करना। ५. गुणिजनों (सम्यग्दृष्टियों) का गुणगान करना। ६. धर्म में अस्थिर व्यक्ति को उपदेशादि द्वारा स्थिर करना। ७. स्वधर्मी-बन्धुओं के प्रति वत्सलभाव रखना एवं उन्हें धार्मिक सहायता देना। ८. सर्वज्ञभाषित धर्म की (प्रचार आदि द्वारा) प्रभावना करना।

**प्रश्न २२. चारित्राचार क्या है? उसकी आराधना कैसे होती है?**

उत्तर—ज्ञान एवं श्रद्धापूर्वक सर्वसावद्ययोग का त्याग करना चारित्र है। चारित्र की आराधना करना चारित्राचार है। इसकी आराधना पांच समिति, तीन गुप्तिरूप अष्ट प्रवचन-माता का विधिपूर्वक पालन करने से होती है।<sup>१</sup>

**प्रश्न २३. तपाचार किसे कहते हैं?**

उत्तर—इच्छा निरोध रूप अनशन आदि बारह प्रकार के तप का सेवन करना तपाचार है।<sup>२</sup>

**प्रश्न २४. वीर्याचार से आप क्या समझते हैं?**

उत्तर—अपनी शक्ति का गोपन न करते हुए धर्म कार्यों में अर्थात् ज्ञान-दर्शन-चारित्र-तप की आराधना में मन-वचन-काया द्वारा प्रवृत्ति करना वीर्याचार है।<sup>३</sup>

**प्रश्न २५. आचार्य के छत्तीस गुण कौन-कौन से हैं?**

उत्तर—आचार्य के छत्तीस गुण इस प्रकार हैं—पांच इन्द्रियों का निग्रह, नवबाइ सहित ब्रह्मचर्य का पालन, चार कषायों (क्रोध-मान-माया-लोभ) का त्याग, पांच महाव्रतों का पालन, पांच आचारों का अनुशीलन एवं अष्ट प्रवचन-माता (पांच समिति-तीन गुप्ति) का आराधन, गुणसम्पन्न आचार्य इन छत्तीस नियमों के पालन में पूरे सजग रहते हैं।<sup>४</sup>

**प्रश्न २६. आचार्य की ऋद्धि कितने प्रकार की है? समझाए?**

उत्तर—तीन प्रकार की है—१. ज्ञानऋद्धि २. दर्शनऋद्धि ३. चारित्र-ऋद्धि।

**प्रश्न २७. क्या सभी आचार्य एक समान होते हैं?**

उत्तर—नहीं हो सकते। गुण, बुद्धि एवं प्रभाव की न्यूनाधिकता की दृष्टि से आचार्य अनेक प्रकार के होते हैं।

१. स्थानां. ५/२/१४७ टि. ६४

४. अमृत कलश, भाग-३

२-३. स्थानां. ५/२/१४७ टि. ६४

५. स्थानां. ३/४/५०४

**प्रश्न २८. गुणों की दृष्टि से आचार्य किसके समान होते हैं ?**

उत्तर—१. आंवले के मधुरफल समान, २. द्राक्षा के मधुरफल समान, ३. क्षीर के मधुरफल समान, ४. शर्करा (खांड) के मधुरफल (इक्षु) समान।<sup>१</sup>

**प्रश्न २९. बुद्धि एवं गुणों की दृष्टि से चार प्रकार के आचार्य कौन-कौन से हैं ?**

उत्तर—१. श्वपाककरण्डसमान—षट्प्रज्ञक गाथादि रूप सूत्रधारी एवं विशिष्ट-क्रियाहीन आचार्य। २. वेश्याकरण्डसमान—ज्ञान अधिक न होने पर भी वाग्आडम्बर से मुग्धजनों को प्रभावित करने वाले आचार्य। ३. गृहपतिकरण्डसमान—स्व-परमत के ज्ञाता एवं क्रियादि गुण युक्त आचार्य। ४. राजकरण्डसमान—आचार्य के सभी गुणों से संपन्न एवं साक्षात् तीर्थकरदेवतुल्य आचार्य। इन चारों प्रकार के आचार्यों में प्रथम दो अयोग्य एवं शेष दो सुयोग्य हैं।<sup>२</sup>

**प्रश्न ३०. प्रभाव की दृष्टि से आचार्य के चार उदाहरण कौन-कौन से हैं ?**

उत्तर—१. आचार्य सालवत् और परिवार भी सालवत्—साल-वृक्षवत्—स्वयं उत्तम श्रुतादियुक्त और शिष्यसमूह भी उनके समान विशालज्ञानसंपन्न है—२. आचार्य सालवत् और परिवार एरण्डवत्—(गर्गाचार्यवत्) स्वयं सालवृक्षवत् विशालश्रुतादि सम्पन्न किन्तु शिष्य-परिवार एरण्डवृक्षवत् श्रुतादि गुणविहीन ३. आचार्य एरण्डवत् और परिवार सालवत्—(अंगारमर्दकवत्)—स्वयं श्रुतादिहीन किन्तु शिष्य परिवार गुणसंपन्न ४. आचार्य एरण्डवत् और परिवार भी एरण्डवत्— स्वयं शिष्य परिवार सहित श्रुतादि-विहीन।<sup>३</sup>

**प्रश्न ३१. आचार्य के कितने प्रकार हैं ?**

उत्तर—तीन प्रकार के आचार्य कहे गए हैं—शिल्पाचार्य, कलाचार्य और धर्माचार्य।

१. शिल्पाचार्य—जो शिल्पों के प्रवीणशिक्षक होते हैं, वे शिल्पाचार्य कहलाते हैं जैसे—सुनार, सुथार आदि।

२. कलाचार्य—जो कलाओं को सिखाने वाले प्रधान-अध्यापक होते हैं, वे कलाचार्य कहलाते हैं, जैसे—नाटक, काव्य आदि।

३. धर्माचार्य—श्रुत-चारित्र रूप धर्म का स्वयं पालन करने वाले एवं दूसरों को उसका उपदेश देने वाले गच्छनायक-मुनिराज धर्माचार्य कहलाते हैं।

१. स्थानां. ४/३/४११

३. स्थानां. ४/४/५४३

२. स्थानां. ४/३/५४१

**प्रश्न ३२. गण में शांति रखने के लिए आचार्य-उपाध्याय को क्या-क्या करना चाहिये ?**

**उत्तर—**पांच कार्य करते रहने से गण में शांति रहती है<sup>१</sup>—

१. आज्ञा-धारणा की सम्यक् प्रवृत्ति करते रहने से। (इस कार्य में प्रवृत्ति करो) ऐसे विधान करना आज्ञा है और 'इस कार्य को मत करो' ऐसे निषेध करना धारणा है।

२. रत्नाधिक साधुओं का उचित विनय करते एवं करवाते रहने से।

३. योग्य शिष्यों को निष्पक्ष भाव से शास्त्र पढ़ाते रहने से।

४. ग्लान, नवदीक्षित एवं रोगी साधुओं की उपयुक्त सेवा करवाते रहने से।

५. साधु-साध्वियों की सलाह लेकर दूर देश में विहार करने से।

इन पांचों बातों पर जो आचार्य-उपाध्याय ध्यान नहीं रखते उनके गच्छ में कलह-अशांति हो जाती है।

**प्रश्न ३३. आचार्य-उपाध्याय उत्कृष्ट कितने भव करते हैं ?**

**उत्तर—**निष्ठापूर्वक गण का प्रतिपालन करने वाले गुणसंपन्न आचार्यों-उपाध्यायों के उत्कृष्ट तीन भव माने गये हैं। कई उसी भव में मोक्ष चले जाते हैं, कई दो भव कर लेते हैं किन्तु तीसरे भव का अतिक्रमण नहीं होता अर्थात् तीसरे भव में तो मोक्ष अवश्य ही जाते हैं।<sup>२</sup>

**प्रश्न ३४. आचार्य बनने वाला साधु कम से कम कितने वर्ष का दीक्षित होना चाहिए ?**

**उत्तर—**पांच वर्ष के दीक्षित साधु को आचार्यपद दिया जा सकता है<sup>३</sup> लेकिन वह आचारकुशल, संयमकुशल, प्रवचनकुशल, प्रज्ञप्ति (प्रायश्चित्त देने में) कुशल, संग्रह-उपसंग्रह कुशल, अक्षुण्णाचार, अशबलाचार, अभिन्नाचार, असंक्लिष्टाचार एवं दशाश्रुतस्कन्ध, बृहत्कल्प तथा व्यवहार सूत्र का ज्ञाता अवश्य होना चाहिये।

**प्रश्न ३५. उपाध्याय किसे कहते हैं ?**

**उत्तर—**जिनके उपापत में मुनि धर्मशास्त्र का अध्ययन करते हैं, जो सम्यग्ज्ञान-दर्शन चारित्र से युक्त होते हैं, सूत्र-अर्थ-तदुभय की विधि के जानकार होते

१. स्थानां. ५/५/४६

३. व्यवहार ७/२०, ३/५

२. भ. ५/६/१४७



हैं, भविष्य में आचार्य पद के योग्य होते हैं और सूत्र की वाचना दिया करते हैं, वे उपाध्याय कहलाते हैं।<sup>१</sup>

**प्रश्न ३६. उपाध्याय के पच्चीस गुण कौन-कौन से हैं ?**

उत्तर—१-१२. बारह अंगशास्त्रों के वेत्ता १३. करणगुणसम्पन्न १४. चरणगुण-संपन्न १५-२२. आठ प्रकार से शासन की प्रभावना करने वाले २३-२५. तीनों योगों को वश में करने वाले। ये उपाध्याय के पच्चीस गुण हैं। ग्यारह अंग, बारह उपांग के ज्ञाता तथा आगम अध्ययन व अध्यापन में कुशल इन पच्चीस गुणों के धारक उपाध्याय होते हैं।<sup>२</sup>

**प्रश्न ३७. उपाध्याय बनने वाले साधु कितने वर्ष के दीक्षित होने चाहिये ?**

उत्तर—कम से कम तीन वर्ष के दीक्षित एवं आचारकल्प (आचारांग-निशीथ) के ज्ञाता तथा आचारकुशलता आदि गुणों से सम्पन्न। इतनी योग्यता होने पर भी वे व्यंजन-जात (उपस्थ व काख में रोमयुक्त) अवश्य होने चाहिये।<sup>३</sup>

**प्रश्न ३८. आचार्य, उपाध्याय गण से किन किन कारणों से मुक्त हो सकते हैं ?**

उत्तर—पांच कारणों से वे गण से पृथक् हो जाते हैं।<sup>४</sup> जैसे—१. गण में आज्ञा-धारणा (प्रवृत्ति-निवृत्ति) का अच्छी तरह प्रयोग न कर सकने पर। २. अभिमानवश स्वयं दीक्षावृद्ध साधुओं का उचित विनय न कर सकने पर। या दूसरों द्वारा न करवा सकने पर। ३. शिष्यों को यथासमय शास्त्र न पढ़ा सकने पर (शास्त्र न पढ़ा सकने के दो कारण हैं—आचार्य-उपाध्याय का मन्दबुद्धि एवं सुख में आसक्त होना अथवा शिष्यों का अविनीत-अयोग्य होना)। ४. स्वगण या अन्यगण की साध्वी में मोहवश आसक्त हो जाने पर। ५. मित्र एवं ज्ञातिजनों के दुःख से प्रेरित होकर वस्त्रादि द्वारा उनकी सहायता करने के लिये विवश हो जाने पर।

**प्रश्न ३९. प्रवर्तक किसे कहते हैं ?**

उत्तर—तप, संयम एवं शुभयोग में जो साधु जिस कार्य के लिए योग्य हो, उसे उसी कार्य में प्रवृत्त एवं अयोग्य को उस कार्य से निवृत्त कर दूसरे कार्य में संयोजित करने वाले तथा गण की चिंता में लीन रहने वाले साधु प्रवर्तक कहलाते हैं।

१. प्रवचनसरोद्धार, प्रभावनायोगननिग्गा

३. व्यवहार ३/३, ७/२०, १०/२५

२. अमृत कलश, भाग-३

४. स्थानां. ५/२/१६७

**प्रश्न ४०. प्रवर्तक-स्थविर आदि पदधारी साधु कितने वर्ष के दीक्षित होने चाहिए ?**

उत्तर—आठ वर्ष के दीक्षित एवं कम से कम स्थानांग-समवायांग के जानकार हों, उन्हें—१. आचार्य २. उपाध्याय ३. प्रवर्तक ४. स्थविर ५. गणी ६. गणावच्छेदक—ये छहों पद दिये जा सकते हैं लेकिन वे आचारकुशलता आदि गुणों से सम्पन्न अवश्य होने चाहिये। यदि इन गुणों से रहित हों तो उन्हें कोई भी पद देना नहीं कल्पता।<sup>१</sup>

**प्रश्न ४१. प्रभावक साधु कौन कहलाते हैं ?**

उत्तर—आठ प्रकार से शासन की प्रभावना करने वाले (प्रभावना का अर्थ शोभा है) साधु प्रभावक कहलाते हैं।

**प्रश्न ४२. आठ प्रभावक कौन-कौन से हैं ?**

उत्तर—१. प्रावचनी—जैन-जैनतर शास्त्रों के विशेष जानकार। (प्रवचन का अर्थ शास्त्र है)। २. धर्मकथी—आक्षेपणी-विक्षेपणी-संवेगणी-निर्वेदनी इन चारों प्रकार की कथाओं द्वारा प्रभावशाली व्याख्यान देने वाले। ३. वादी—वादी-प्रतिवादी-सभ्य-सभापति रूप चतुरंग-सभा में पुष्ट-तर्कों द्वारा विपक्ष का खण्डन एवं स्वपक्ष का मण्डन करने वाले। ४. नैमित्तिक—भूत-भविष्य एवं वर्तमान में होने वाले हानि-लाभ के जानकार। ५. तपस्वी—नाना प्रकार की तपस्या करने वाले। ६. विद्यावान—रोहिणी-प्रज्ञप्ति आदि विद्याओं के ज्ञाता। ७. सिद्धि-युक्त—अंजन-पादलेप आदि सिद्धियों को जानने वाले। ८. कवि—गद्य-पद्य-कथ्य-गेय, इन चारों प्रकार के काव्यों की रचना करने वाले।<sup>२</sup>

**प्रश्न ४३. स्थविर किसे कहा जाता है ?**

उत्तर—सन्मार्ग से गिरते हुए मनुष्य को स्थिर करने वाले व्यक्ति स्थविर कहलाते हैं। संयम से विचलित साधु को धैर्य बंधाकर स्थिर करना एवं उनकी दुविधाओं का निवारण करना। उनका सहज स्वीकृत दायित्व होता है। विवक्षावश बड़े-बूढ़े विशेषज्ञानी, मुख्य एवं प्रभावशाली व्यक्तियों को भी स्थविर कहा जाता है। शास्त्र में दस प्रकार के स्थविर कहे गए हैं<sup>३</sup>—

१. ग्रामस्थविर—गांव में व्यवस्था करने वाले बुद्धिमान् एवं प्रभावशाली व्यक्ति।

१. व्यवहार ३/७-८

३. स्थानां १०/१३६

२. प्रवचनसारोद्धार १४८ द्वार गा. ६३४

२. नगरस्थविर—नगर के माननीय एवं प्रतिष्ठित व्यक्ति।
३. राष्ट्रस्थविर—राष्ट्र के माननीय मुख्य नेता।
४. प्रशास्तृस्थविर—धर्मोपदेश देने वालों में प्रमुख व्यक्ति।
५. कुलस्थविर—लौकिक एवं लोकोत्तर (धार्मिक) कुलों की व्यवस्था करने वाले एवं व्यवस्था तोड़ने वालों को दंडित करने वाले व्यक्ति।
६. गणस्थविर—गण की व्यवस्था करने वाले व्यक्ति।
७. संघस्थविर—संघ की व्यवस्था करने वाले व्यक्ति। धर्मपक्ष में एक आचार्य की संतति को या चान्द्र आदि साधु समुदाय को कुल कहते हैं। कुल के समुदाय को अथवा सापेक्ष तीन कुल के समूह को गण कहते हैं तथा गणों के समुदाय को संघ कहते हैं।
८. जातिस्थविर—साठ वर्ष की आयु वाले वृद्ध व्यक्ति।
९. श्रुतस्थविर—स्थानांग-समवायांग शास्त्र के ज्ञाता मुनिराज।
१०. पर्यायस्थविर—बीस वर्ष की दीक्षा पर्याय वाले साधु।

**प्रश्न ४४. गणी किसे कहते हैं ?**

**उत्तर—**साधु-समुदाय का नाम गण है और जिसके अधिकार में गण हो। वह गणी या गणाचार्य कहलाता है। गणी सूत्र के अर्थ का निर्णय करने वाले, प्रियधर्मी, दृढधर्मी, शास्त्रानुकूल प्रवृत्ति में कुशल, जातिसम्पन्न, कुलसम्पन्न, स्वभाव से गम्भीर, विविध लब्धिवाले, संग्रहोपग्रह-कुशल (गण के योग्य-पात्र आदि के संग्रह तथा यथाविधि सब साधुओं को बांटने में निपुण) हेय-उपादेय के यथायोग-अभ्यासी तथा प्रवचन के अनुरागी होते हैं।

**प्रश्न ४५. गणधर किसे कहते हैं ?**

**उत्तर—**तीर्थकरों के प्रधान शिष्य (गौतम स्वामी आदिवत्) गणधर कहलाते हैं साधुओं की दिनचर्या आदि का पूर्णतया ध्यान रखनेवाले साधुओं को भी गणधर कहा जाता है।

**प्रश्न ४६. गणावच्छेदक किसे कहते हैं ?**

**उत्तर—**जो गण के निमित्त विहार क्षेत्र तथा उपकरणों की खोज करने के लिए धैर्ययुक्त कुछ साधुओं के साथ आचार्य के आगे चलते हैं एवं सूत्रार्थ के विशेषज्ञ होते हैं, वे गणावच्छेदक कहलाते हैं।

## १४. कल्प प्रकरण

प्रश्न १. कल्प का क्या अर्थ है ?

उत्तर—शास्त्रों में निर्दिष्ट साधु के आचार एवं अनुष्ठान-विशेष को कल्प कहते हैं। कल्प मुख्यतया दो माने गये हैं—स्थित कल्प एवं अस्थित कल्प।<sup>१</sup>

प्रश्न २. स्थितकल्प का क्या अर्थ है ?

उत्तर—अचेलक आदि दसों कल्पों का नियमित रूप से पालना स्थितकल्प है एवं पालने वाले साधु स्थितकल्पिक कहलाते हैं। ये प्रथम-अंतिम तीर्थकरों के समय होते हैं।<sup>२</sup>

प्रश्न ३. दस कल्प कौन-कौन से हैं ?

उत्तर—(१) अचेलक (२) औद्देशिक (३) शय्यातरपिंड (४) राजपिंड (५) कृतिकर्म (६) व्रत कल्प (७) ज्येष्ठ कल्प (८) प्रतिक्रमण कल्प (९) मास कल्प (१०) पर्युषण कल्प।<sup>३</sup>

प्रश्न ४. अचेल आदि १० कल्प से आप क्या समझते हैं ?

उत्तर—१. अचेलकत्व—चेल का अर्थ वस्त्र है। वस्त्र न रखना या अल्प-मूल्य, श्वेत एवं प्रमाणोपेत रखना अचेलकल्प है। २. औद्देशिककल्प—साधुओं के उद्देश्य से बनाया गया आहार आदि औद्देशिक होता है एवं तद्विषयक आचार का नाम औद्देशिककल्प है। ३. शय्यातरपिण्डकल्प—शय्यातर के (जिसके मकान में साधु निवास करें उसके) घर से आहारादि लेने के विषय में बताये गये आचार को शय्यातरपिण्डकल्प कहते हैं। ४. राजपिण्डकल्प—इस कल्प में राजाओं के यहां से (उत्सवादि के अवसर पर) आहार आदि लेने का निषेध है। यह कल्प मध्यम-तीर्थकरों के साधुओं के लिए आवश्यक है। ५. कृतिकर्मकल्प—आगमविधि के अनुसार साधु-साध्वियों को अपने रत्नाधिक साधु-साध्वियों का

१. भ. २५/६/२६६

३. (क) बृहत्कल्प ७/२०/६३६४

२. स्थानां. टि. ३६/सू. १०३

(ख) स्थानां. सू. १०३/टि. ३६

अभ्युत्थान-वंदना आदि करना कृतिकर्मकल्प है। ६. व्रतकल्प—महाव्रतों का विधिपूर्वक पालन करना व्रतकल्प है। ७. ज्येष्ठकल्प—ज्ञान-दर्शन-चारित्र में बड़े को ज्येष्ठ कहते हैं। ज्येष्ठ के विषय में बनाये गये विधि-विधान ज्येष्ठकल्प कहलाते हैं। ८. प्रतिक्रमणकल्प—कृत पापों की आलोचना करना प्रतिक्रमण है। नियमित रूप से दोनों वक्त प्रतिक्रमण करना प्रतिक्रमणकल्प है। ९. मासकल्प—चातुर्मास या किसी दूसरे विशेष कारण के बिना एक स्थान में एक मास से अधिक न ठहरना मासकल्प है। १०. पर्युषणाकल्प—चातुर्मास में एक ही स्थान पर रहना पर्युषणाकल्प है।<sup>१</sup>

**प्रश्न ५. क्या ये कल्प चौबीस ही तीर्थकर के समय के साधु-साध्वियों के लिए अवश्य पालनीय हैं ?**

**उत्तर—**प्रथम व अंतिम तीर्थकरों के साधु-साध्वियों के लिए १० कल्प अवश्य पालनीय हैं। मध्य के २२ तीर्थकरों के लिए—(१) शय्यातरपिण्ड (२) कृतिकर्म (३) व्रत (४) ज्येष्ठ कल्प अवश्य पालनीय हैं, शेष ६ कल्प का पालन जरूरी नहीं है। महाविदेह के लिए भी इसी प्रकार है।<sup>२</sup>

**प्रश्न ६. अस्थितकल्प का क्या अर्थ है ?**

**उत्तर—**उपर्युक्त दस कल्पों में से—१. शय्यातरपिण्डकल्प २. कृतिकर्मकल्प ३. व्रतकल्प ४. ज्येष्ठकल्प—इन चारों को तो नियमित रूप से पालना एवं शेष छहों को अनवस्थित रूप से (आवश्यकता होने पर) पालना अस्थितकल्प है। इस कल्प का अनुसरण करने वाले मुनि अस्थितकल्पिक कहलाते हैं। ये भरत-ऐरावत में बाईस तीर्थकरों के समय होते हैं एवं महाविदेह क्षेत्र में सदा रहते हैं।<sup>३</sup>

**प्रश्न ७. स्थविरकल्प किसे कहते हैं ?**

**उत्तर—**गच्छ में रहने वाले साधुओं के आचार को स्थविरकल्प कहते हैं। सत्रह प्रकार के संयम का पालन, तप एवं प्रवचन को दीपाना, शिष्यों में ज्ञान-दर्शन-चारित्र की वृद्धि करना एवं जंघाबल क्षीण होने पर वसति, आहार और उपधि के दोषों का परिहार करते हुए एक ही स्थान में स्थिरवासी होकर रहना आदि-आदि स्थविरकल्प की विधि है। उक्त विधि के अनुसार संयम पालने वाले साधु स्थविरकल्पिक कहलाते हैं।<sup>४</sup>

१-२. स्थानां. सू. १०३/टि. ३६

४. बृहत्कल्प ६/२०/६४८५

३. बृहत्कल्प ६/२०/६३६१

### प्रश्न ८. जिनकल्प का क्या अर्थ है ?

उत्तर—जिन अर्थात् गच्छ से अलग होकर विचरने वाले। साधुओं का कठिन आचार जिनकल्प कहलाता है।<sup>१</sup> इसे धारण करने वाले प्रायः आचार्य, उपाध्याय, प्रवर्तक, स्थविर एवं गणावच्छेदक होते हैं। उन्हें उक्त कल्प धारण करने से पूर्व अपनी आत्मा को इन पांच तुलाओं से तोलना चाहिए—

१. तप-तुला—क्षुधा पर ऐसा नियंत्रण कर लेना कि देवादि द्वारा दिए गए उपसर्गों के कारण यदि छहः मास तक अन्न-पानी न मिले तो भी मन में खिन्नता न हो।

२. सत्त्व-तुला—उपाश्रय, उपाश्रय के बाहर, चौक, शून्यघर एवं श्मशान—इन स्थानों में रात के समय एकाकी कायोत्सर्ग करके भी भयभीत न हो, अभ्यास द्वारा ऐसा सत्त्व प्राप्त कर लेना।

३. सूत्र-तुला—शास्त्रों को अपने नाम की तरह इस प्रकार याद कर लेना कि उनकी आवृत्ति के अनुसार रात या दिन में उच्छ्वास-प्राण-स्तोक-लव-मुहूर्त आदि का ठीक-ठीक ज्ञान किया जा सके।

४. एकत्व-तुला—अपने गण के साधुओं से (आलाप-संलाप-सूत्रार्थ पूछना या बताना, सुख-दुःख पूछना या कहना आदि-आदि) बाह्य-संबंधों का विच्छेद करते हुए अपने शरीर-उपधि को भी आत्मा से भिन्न मानकर 'मैं अकेला हूँ' ऐसा अनुभव कर लेना।

५. बल-तुला—अपने शारीरिक एवं मानसिक बल को तोल लेना। दूसरे साधुओं की अपेक्षा जिनकल्प धारनेवालों का शारीरिक-मानसिक बल बहुत ज्यादा होना चाहिए ताकि उपसर्गों के समय विचलित होने का अवसर न आए।

### प्रश्न ९. जिन कल्पिक मुनियों की चर्या क्या है ?

उत्तर—१. श्रुत—जिनकल्पी जघन्यतः प्रत्याख्यान नामक नौवें पूर्व की तीसरी आचार वस्तु के ज्ञाता तथा उत्कृष्टतः अपूर्ण दशपूर्वधर होते हैं। संपूर्ण दशपूर्वधर होते हैं जिनकल्प अवस्था स्वीकार नहीं करते।

२. संहनन—वे वज्रऋषभनाराच संहनन वाले होते हैं।

३. उपसर्ग—अनेक उपसर्ग हों ही, ऐसा कोई नियम नहीं है। किन्तु जो भी

१. स्थानांग सू. १०३/टि. ३६

उपसर्ग उत्पन्न होते हैं, उन सबको वे समभाव से सहन करते हैं।

४. आतंक-रोग या आतंक उत्पन्न होने पर वे उन्हें समभाव से सहन करते हैं।

५. वेदना-उनके दो प्रकार की वेदनाएं होती हैं-१. आभ्युपगमिकी-लुंचन, आतापना, तपस्या आदि करने से उत्पन्न वेदना। २. औपगमिकी-अवस्था से उत्पन्न तथा कर्मों के उदय से उत्पन्न वेदना।

६. कतिजन-वे अकेले ही होते हैं।

७. स्थंडिल-वे उच्चार और प्रस्रवण का उत्सर्ग विजन तथा जहां लोग न देखते हों, ऐसे स्थान में करते हैं।

वे कृतकार्य होने पर (हेमन्त ऋतु के चले जाने पर) उसी स्थंडिल में वस्त्रों का परिष्ठापन कर देते हैं। अल्पभोजी और रूक्षभोजी होने के कारण उनके मल बहुत थोड़ा बंधा हुआ होता है, इसलिए उन्हें निर्लेपन (शुचि लेने) की आवश्यकता नहीं होती। बहुदिवसीय उपसर्ग प्राप्त होने पर भी वे अस्थंडिल में मल-मूत्र का उत्सर्ग नहीं करते।

८. वसति-वे जैसा स्थान मिले वैसे में भी ठहर जाते हैं। वे साधु के लिए लीपी-पुती वसति में नहीं ठहरते। बिलों को घूल आदि से नहीं ढंकते, पशुओं द्वारा खाए जाने पर या तोड़े जाने पर भी वसति की रक्षा के लिए पशुओं का निवारण नहीं करते; द्वार बन्द नहीं करते; अर्गला नहीं लगाते।

९. उनके द्वारा वसति की याचना करने पर यदि गृहस्वामी पूछे कि आप यहां कितने समय तक रहेंगे? इस जगह आपको मूल-मूत्र का त्याग करना है, यहां नहीं करना है। यहां बैठें, यहां न बैठें। इन निर्दिष्ट तृण-फलकों का उपयोग करें, इनका न करें। गाय आदि पशुओं की देखभाल करें, मकान की अपेक्षा न करें, उसकी सार-संभाल करते रहें तथा इसी प्रकार के अन्य नियंत्रणों की बातें कहे तो जिनकल्पिक मुनि ऐसे स्थान में कभी न रहे।

१०. जिस वसति में बलि दी जाती हो, दीपक जलता हो, अग्नि आदि का प्रकाश हो तथा गृहस्वामी कहें कि मकान का भी थोड़ा ध्यान रखें या वह पूछे कि आप इस मकान में कितने व्यक्ति रहेंगे?-ऐसे स्थान में भी वे नहीं रहते। वे दूसरे के मन में सूक्ष्म अप्रीति भी उत्पन्न करना नहीं

चाहते, इसलिए इस सबका वर्जन करते हैं।

११. भिक्षाचर्या के लिए तीसरे प्रहर में जाते हैं।

१२. सात पिडैषणाओं में से प्रथम दो को छोड़कर शेष पांच एषणाओं से अलेपकृत भक्त-पान लेते हैं।

१३. मल-भेद आदि दोष उत्पन्न होने की संभावना के कारण वे आचामाम्ल नहीं करते। वे मासिकी आदि भिक्षु प्रतिमा तथा भद्रा, महाभद्रा, सर्वतोभद्रा आदि प्रतिमाएं स्वीकार नहीं करते।

१४. जहां मासकल्प करते हैं, वहां उस गांव या नगर को छह भागों में विभक्त कर, प्रतिदिन एक-एक विभाग में भिक्षा के लिए जाते हैं।

१५. वे एक ही वसति में सात (जिनकल्पिकों) से अधिक नहीं रहते। वे एक साथ रहते हुए भी परस्पर संभाषण नहीं करते। भिक्षा के लिए एक ही वीथि में दो नहीं जाते।

१६. क्षेत्र-जिनकल्प मुनि का जन्म और कल्पग्रहण कर्मभूमि में ही होता है। देवादि द्वारा संहरण किए जाने पर वे अकर्मभूमि में भी प्राप्त हो सकते हैं।

१७. काल-अवसर्पिणी काल में उत्पन्न हो तो उनका जन्म तीसरे-चौथे आरे में होता है। और जिनकल्प का स्वीकार तीसरे, चौथे और पांचवें में भी हो सकता है। यदि उत्सर्पिणी काल में उत्पन्न हो तो दूसरे, तीसरे और चौथे आरे में जन्म लेते हैं और जिनकल्प का स्वीकार तीसरे और चौथे आरे में ही करते हैं।

१८. चारित्र-सामायिक अथवा छेदोपस्थापनीय संयम में वर्तमान मुनि जिनकल्प स्वीकार करते हैं। उसके स्वीकार के पश्चात् वे सूक्ष्मसंपराय आदि चारित्र में भी जा सकते हैं।

१९. तीर्थ-वे नियमतः तीर्थ में ही होते हैं।

२०. पर्याय-जघन्यतः उनतीस वर्ष की अवस्था में (९ गृहवास के और २० श्रमण पर्याय के) और उत्कृष्टतः गृहस्थ और साधु-पर्याय की कुछ न्यून करोड़ पूर्व में इस कल्प को ग्रहण करते हैं।

२१. आगम-जिनकल्प स्वीकार करने के बाद वे नए श्रुत का अध्ययन नहीं करते, किन्तु चित्त-विक्षेप से बचने के लिए पहले पढ़े हुए श्रुत का स्वाध्याय करते हैं।



२२. वेद-स्त्रीवेद के अतिरिक्त पुरुषवेद तथा असंक्लिष्ट नपुंसकवेद वाले व्यक्ति इसे स्वीकार करते हैं। स्वीकार करने के बाद वे सवेद या अवेद भी हो सकते हैं। यहां अवेद का तात्पर्य उपशांत वेद से है। क्योंकि वे क्षपकश्रेणी नहीं ले सकते, यहां अवेद का तात्पर्य उपशांत वेद से है। क्योंकि वे क्षपकश्रेणी नहीं ले सकते, उपशम श्रेणी लेते हैं। उन्हें उस भव में केवलज्ञान नहीं होता।

२३. कल्प-वे दोनों कल्प-स्थित कल्प अथवा अस्थित कल्प वाले होते हैं।

२४. लिंग-कल्प स्वीकार करते समय वे नियमतः द्रव्य और भाव-दोनों लिंगों से युक्त होते हैं। आगे भावलिंग तो निश्चय ही होता है। द्रव्यलिंग जीर्ण या चोरो द्वारा अपहृत हो जाने पर हो भी सकता है और नहीं भी।

२५. लेश्या-उनमें कल्प स्वीकार के समय तीन प्रशस्त लेश्याएं (तैजस, पद्य और शुक्ल) होती हैं। बाद में उनमें छहों लेश्याएं हो सकती हैं, किन्तु वे अप्रशस्त लेश्याओं में बहुत समय तक नहीं रहते और वे अप्रशस्त लेश्याएं अति संक्लिष्ट नहीं होती।

२६. ध्यान-वे प्रवर्द्धमान धर्म्यध्यान में कल्प का स्वीकरण करते हैं, किन्तु बाद में उनमें आर्त-रौद्रध्यान की सद्भावना भी हो सकती है। उनमें कुशल परिणामों की उद्दामता रहती है, अतः ये आर्त-रौद्र ध्यान भी प्रायः निरनुबंध होते हैं।

२७. गणना-एक समय में इस कल्प को स्वीकार करने वालों की उत्कृष्ट संख्या शतपृथक्त्व (१००) और पूर्व स्वीकृत के अनुसार यह संख्या सहस्रपृथक्त्व (१०००) होती है। पन्द्रह कर्मभूमियों में उत्कृष्टतः इतने ही जिनकल्पी प्राप्त हो सकते हैं।

२८. अभिग्रह-वे अल्पकालिक कोई भी अभिग्रह स्वीकार नहीं करते। उनके जिनकल्प अभिग्रह जीवन पर्यन्त होता है। उसमें गोचर आदि प्रतिनियत व निरपवाद होते हैं, अतः उनके लिए जिनकल्प का पालन ही परम विशुद्धि का स्थान है।

२९. प्रव्रज्या-वे किसी को दीक्षित नहीं करते, किसी को मुंड नहीं करते। यदि ये जान जाए कि अमुक व्यक्ति अवश्य ही दीक्षा लेगा, तो वे उसे उपदेश देते हैं और उसे दीक्षा ग्रहण करने के लिए संविग्न गीतार्थ साधु के पास भेज देते हैं।

३०. प्रायश्चित्त—मानसिक सूक्ष्म अतिचार के लिए उनको जघन्यतः चतुर्गुरुक मासिक प्रायश्चित्त लेना होता है।
३१. निष्प्रतिकर्म—वे शरीर किसी भी प्रकार से प्रतिकर्म नहीं करते। आंख आदि का मैल भी नहीं निकालते और न कभी किसी प्रकार की चिकित्सा ही करवाते हैं।
३२. कारण—वे किसी प्रकार के अपवाद का सेवन नहीं करते।
३३. काल—वे तीसरे प्रहर में भिक्षा करते हैं और विहार भी तीसरे प्रहर में करते हैं। शेष समय वे प्रायः कायोत्सर्ग में स्थित रहते हैं।
३४. स्थिति—विहरण करने में असमर्थ होने पर वे एक स्थान पर रहते हैं, किन्तु किसी प्रकार के दोष का सेवन नहीं करते।
३५. समाचारी—साधु-समाचारी के दस भेद हैं। इनमें से वे आवश्यकी, नैषेधिकी, मिथ्याकार, आपृच्छा और उपसंपद्—इन पांच समाचारियों का पालन करते हैं।<sup>१</sup>

### प्रश्न १०. यथालन्द-कल्प क्या है ?

उत्तर—पानी से भीगा हुआ हाथ जितनी देर में सूखे उतने समय से लेकर पांच दिन तक के समय को लन्द कहते हैं। उतने काल का उल्लंघन किए बिना जो साधु विचरते हैं अर्थात् पांच दिन से अधिक एक जगह नहीं ठहरते, वे साधु यथालंदिक कहलाते हैं।<sup>२</sup>

### प्रश्न ११. स्वयंबुद्ध एवं प्रत्येकबुद्ध मुनि कौन होते हैं ?

उत्तर—जो गुरु आदि के उपदेश एवं बाह्यनिमित्त के बिना स्वतः प्रतिबोध पाकर दीक्षा लेते हैं वे मुनि स्वयंबुद्ध कहलाते हैं। ये दो प्रकार के होते हैं—तीर्थकर एवं तीर्थकर-व्यतिरिक्त। तीर्थकर तो निश्चित रूप से तीन ज्ञान युक्त एवं कल्पातीत होते हैं। तीर्थकर-व्यतिरिक्त स्वयंबुद्ध मुनि दो तरह के हैं—पूर्वजन्म-ज्ञान सहित और पूर्वजन्म-ज्ञानरहित। पूर्वजन्म-ज्ञानसहित स्वयंबुद्ध मुनि कई देवप्रदत्त-साधुलिंग (साधु का वेष) धारण करते हैं और कई गुरु के पास दीक्षा लेते हैं। फिर शक्ति सम्पन्नता के पश्चात् इच्छा होने पर अकेले विचरते हैं अन्यथा गच्छ में रहते हैं। पूर्वजन्म-ज्ञानरहित स्वयंबुद्ध मुनि गुरु के पास साधु-वेष लेकर गच्छ में ही रहते हैं। दोनों ही प्रकार के स्वयंबुद्ध मुनि मुखवस्त्रिका-रजोहरण आदि बारह उपकरण रखते हैं।<sup>३</sup>

१. ठाणं ६/१०३/टि. ३६ पृ. ७०४।

३. प्रश्नव्याकरण १०/१०

२. प्रवचनसारोद्धार ७०

जो किसी का उपदेश सुने बिना करकण्डु आदिवत् वृषभ आदि किसी वस्तु को देखकर जातिस्मरणादि ज्ञान द्वारा प्रतिबुद्ध होकर संयम लेते हैं वे मुनि प्रत्येकबुद्ध कहलाते हैं।

**प्रश्न १२. कल्पातीत मुनि किसे कहा जाता है ?**

**उत्तर—**जिन पर जिनकल्प-स्थविरकल्प के नियम लागू न हों, वे मुनि कल्पातीत कहलाते हैं। ऐसे मुनि या तो छद्मस्थ-अवस्था में घोर तपस्या करते हुए तीर्थकर होते हैं या ग्यारहवें से चौदहवें गुणस्थान वाले वीतराग होते हैं।<sup>१</sup>

## १५. गोचरी प्रकरण

प्रश्न १. गोचरी शब्द का क्या अर्थ है ?

उत्तर—जैसे गाय थोड़ा-थोड़ा घास चरती है, उसी प्रकार अनेक घरों से थोड़ा-थोड़ा आहार-पानी लेना गोचरी कहलाता है। गोचरी का अर्थ है गाय की तरह चर्या करना।<sup>१</sup>

प्रश्न २. गोचरी के अन्य नाम क्या हैं ?

उत्तर—भिक्षाचरी, माधुकरीवृत्ति, उच्छ्वृत्ति, कापोती वृत्ति, कर्पिंजल वृत्ति।<sup>२</sup>

प्रश्न ३. आगमों में छह प्रकार की गोचरी से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर—शास्त्रों में छह प्रकार की गोचरी कही है।<sup>३</sup> जैसे—

१. पेटा—ग्राम आदि को पेटा-संदूकवत् चार कोनों में बांटकर बीच के घरों को छोड़ते हुए चारों दिशाओं में समश्रेणी से भिक्षा लेना।

२. अधपेटा—पूर्वोक्त विधि से क्षेत्र का बांटकर केवल दो दिशाओं से भिक्षा लेना।

३. गोमूत्रिका—जमीन पर पड़े हुए चलते बैल के मूत्र के आकार से क्षेत्र की कल्पना करके भिक्षा लेना।

४. पतंगवीथिका—पतंग की गतिवत् किसी भी क्रम के बिना छड़े-बिछुड़े घरों से भिक्षा लेना।

५. शम्बूकावर्ता—शंख के आवर्त की तरह वृत्त (गोल) गति से भिक्षा लेना।

६. गतप्रत्यागता—इसमें साधु एक पंक्ति के घरों की गोचरी करता हुआ अन्त तक चला जाता है एवं लौटता हुआ दूसरी पंक्ति के घरों से भिक्षा लेता है।

प्रश्न ४. नव कोटि विशुद्ध भिक्षा का तात्पर्य क्या है ?

उत्तर—श्रमण भगवान महावीर ने साधु-साध्वियों के लिए नौ कोटि परिशुद्ध भिक्षा

१. दसवे. ५।१।२

३. (क) स्थानां. ६/६९

२. भिक्षु आगम शब्द कोश १ गोचरचर्या

(ख) उत्तरा. ३०/१९

का निरूपण किया है। साधु आहर आदि के लिए न तो हिंसा करता, न करवाता और न करते हुए का अनुमोदन करता। न स्वयं आहार आदि पकाता, न पकवाता और न पकवाने वाले का अनुमोदन करता है। न स्वयं आहार आदि खरीदता न खरीदवाता और न खरीदने वाला का अनुमोदन (समर्थन) करता।<sup>१</sup>

**प्रश्न ५. साधु किन-किन घरों से गोचरी ले सकते हैं ?**

उत्तर—जिन घरों में मांस, अंडा, मदिरा (शराब) आदि अभक्ष्य पदार्थों का व्यवहार रसोड़ घर में न हो उन घरों से ले सकते हैं।

**प्रश्न ६. गोचरी के लिए किस समय जाना चाहिए ?**

उत्तर—यद्यपि सूर्योदय के बाद सूर्यास्त तक गोचरी का समय है, फिर भी भगवान ने कहा है कि गांव आदि में जब भोजन आदि बनने का समय हो उसी समय भिक्षार्थ जाना चाहिए अन्यथा भिक्षा न मिलने से आत्मा को कष्ट होगा एवं द्वेषवश गांव के लोगों की निंदा करने का प्रसंग आयेगा।<sup>२</sup> शास्त्र में तीसरे प्रहर भिक्षा का जो वर्णन है<sup>३</sup> वह अभिग्रहधारी साधुओं की अपेक्षा से समझना चाहिए। आहार करने के बाद आवश्यकता हो तो साधु दूसरी बार भी गोचरी जा सकते हैं।<sup>४</sup>

**प्रश्न ७. गोचरी जाते समय किन-किन बातों का ध्यान रखना चाहिए ?**

उत्तर—युगमात्र भूमि को देख-देख कर चलना चाहिए। बीज, हरित, मिट्टी, पानी एवं कीड़े आदि प्राणियों से बचते हुए चलना चाहिए।<sup>५</sup> दौड़ते, बात करते एवं हंसते हुए नहीं चलना चाहिए।<sup>६</sup> कबूतर, चिड़िया आदि पक्षी दाना चुग रहे हों, बच्चे खेल रहे हों तो उनके बीच से नहीं निकलना चाहिए। वर्षा ओस धंवर आदि में तथा जोरदार आंधी चलते समय एवं जल आदि सूक्ष्म जीव गिरते समय नहीं जाना चाहिए।<sup>७</sup> भिखारी आदि द्वार पर खड़े हों तो उन्हें लांघकर गृहस्थ के घर में प्रवेश नहीं करना चाहिए।<sup>८</sup> विशेष कारण बिना गोचरी के समय गृहस्थ के घर में न तो बैठना चाहिए, न कथा करनी चाहिए।<sup>९</sup>

१. स्थानांग ६/३०

२. दसवे. ५/२/४-६

३. उत्तरा. २६/१२

४. दसवे. ५/२/३

५. दसवे. ५/१/३

६. दसवे. ५/११४

७. दसवें. ५/१/८

८. दसवें. ५/१०-१२

९. दसवें. ५/२/८

**प्रश्न ९. मुनि कौन से सूत्र का पारायण किये बिना स्वतंत्र गोचरी नहीं कर सकता ?**

उत्तर—दशवैकालिक सूत्र अथवा परंपरा की जोड़ का अध्ययन किये बिना स्वतंत्र गोचरी नहीं कर सकता।

**प्रश्न ९. साधु गोचरी के लिए कितनी दूर जा सकते हैं ?**

उत्तर—अर्ध-योजन (दो कोस) तक जा सकते हैं<sup>१</sup> एवं गोचरी करके लाया हुआ आहार आदि दो कोस तक ले जा सकते हैं। यदि भूल से आगे ले जाया जाए तो खाना-पीना नहीं कल्पता।<sup>२</sup>

**प्रश्न १०. गोचरी के बाद बना हुआ आहार साधु ले सकते हैं या नहीं ?**

उत्तर—नहीं ले सकते।

**प्रश्न ११. गोचरी करने के बाद बनी हुई वस्तु दिन भर नहीं ली जा सकती या कुछ समय तक ?**

उत्तर—इसका नियम प्रहर के आधार पर है। दिन के चार प्रहर होते हैं। उनमें तीन प्रहर का एक कल्प है एवं चौथे प्रहर का दूसरा कल्प। गोचरी करने के बाद आरंभ करके बनाई वस्तु परम्परा के अनुसार तीन प्रहर दिन व्यतीत हो वहां तक नहीं ली जा सकती। चौथे प्रहर में ली जा सकती है।

**प्रश्न १२. क्या साधु रात को कोई भी चीज नहीं ले सकते ?**

उत्तर—पीठ-फलक शय्या-संस्तारक आदि यतनापूर्वक ले सकते हैं किन्तु आहार आदि बिल्कुल नहीं ले सकते।<sup>३</sup> आगमों में कहा है कि निःसंदेह सूर्य उदय हुआ या न छिपा जानकर साधु ने गोचरी की एवं आहार करना शुरू किया उस समय सूर्य उदय न होने की या छिप जाने की शंका पड़ जाए अर्थात् गोचरी करते समय शायद रात थी ऐसा सन्देह हो जाए तो उस आहार को (चाहे मुख में लिया हुआ घास भी क्यों न हो) खाना नहीं कल्पता, परठना ही पड़ता है।<sup>४</sup>

**प्रश्न १३. क्या गोचरी के लिए गया हुआ साधु गृहस्थ के घर बैठ सकता है ?**

उत्तर—गोचरी के लिए गया हुआ मुनि (विशेष कारण तपस्या, अनशन, बीमारी आदि के सिवा) गृहस्थ के घर में न बैठे और न खड़ा रहकर धर्मकथा कहे।<sup>५</sup>

१. उत्तरा. २६/३५

४. बृहत्कल्प ५/६ से ८

२. निशीथ १२/३२

५. दसवे. ५/२/८

३. बृहत्कल्प १/४२

**प्रश्न-१४. साधु-साध्वियों को कितने प्रकार का दान दिया जाता है ?**

उत्तर—चौदह प्रकार का<sup>१</sup>—१. अशन (पकाया हुआ आहार—दाल, भात, रोटी आदि), २. पान (पानी), ३. खादिम (सूखा मेवा, फल आदि), ४. स्वादिम (सुपारी, लोंग, इलायची आदि मुखवास,) ५. वस्त्र, ६. पात्र, ७. कंबल (ऊनी वस्त्र), ८. पादप्रौछन (रजोहरण), ९. पीठ (काष्ठ का छोटा पट्ट), १०. फलक (सोने का पट्ट), ११. शय्या (निरवद्य-स्थान मकान), १२. संस्तारक (घास का बिस्तर), १३. औषधि (शुद्ध दवा, एक ही वस्तु), १४. भैषज (कई औषधियों से बना चूर्ण, गोली, अवलेह आदि)। इसी प्रकार अन्य अचित्त पदार्थों का दान दे सकते हैं।

**प्रश्न १५. क्या साधु गोचरी में फल ले सकते हैं ?**

उत्तर—सचित्त फल नहीं ले सकते।<sup>२</sup> छिलके व बीज से रहित या अग्नि आदि के संस्कार द्वारा अचित्त किया हुआ फल हों तो विधिपूर्वक ले सकते हैं। किन्तु जिन (बेर-इक्षुखण्ड आदि) में खाने का अंश थोड़ा हो एवं फेंकने का अंश ज्यादा हो, वैसे अचित्त फल भी निषिद्ध हैं।<sup>३</sup>

**प्रश्न १६. क्या साधु मेवा-मिष्टान्न आदि सरस आहार ले सकते हैं ?**

उत्तर—यदि विधिपूर्वक सहजरूप में मिल जाए तो ले सकते हैं। इतिहास-विश्रुत घटना है—देवकीरानी के घर से मुनियों ने केसरिया मोदक लिए थे, ग्वाले के भव में शालिभद्र के जीव ने तपस्वी मुनि को खीर दी थीं, धन्य सार्थवाह के भव में ऋषभप्रभु के जीव ने मुनि को घी बहराया था एवं श्रेयांसकुमार के यहां भगवान् ऋषभ ने इक्षुरस लिया था।

**प्रश्न १७. साधु कितने प्रकार का आहार ले सकते हैं ?**

उत्तर—वस्तुतः साधु को चार प्रकार का आहार लेना कल्पता है—१. अशन २. पान ३. खादिम ४. स्वादिम।<sup>४</sup>

**प्रश्न १८. निर्दोष विधि से गोचरी करने के बाद साधु को क्या करना चाहिए ?**

उत्तर—साधु को भिक्षा लेकर अपने स्थान में आना चाहिये। यदि कारणवश चाहे तो आज्ञा लेकर गृहस्थ के घर में, कोठे में या भीत की ओट में बैठकर विधिपूर्वक आहार कर सकता है। सामान्यतः गृहस्थों के घरों में भोजन करना उचित नहीं लगता।<sup>५</sup>

१. भगवती २/६४

४. निशीथ १२/३१

२. दसवे. ३/७, ५/१/७०

५. दसवे. ५/१/८२-८३

३. दसवे. ५/१/७३-७४

**प्रश्न १६. साधु को अपने स्थान पर आकर क्या-क्या करना चाहिए ?**

उत्तर—अपने स्थान में प्रवेश करते समय साधु को विनयपूर्वक 'मत्थएण वंदामि' (निस्सही, निस्सही) कहना चाहिए एवं गुरु के समीप आकर गोचरी दिखा इरियावहिय पडिक्कमण सुत्तं का पाठ कर गोचरी में असावधानीवश लगे हुए दोषों की (पडिक्कमामि गोयरचरियाए भिक्खायरियाए आदि पाठ बोलकर) आलोचना करनी चाहिए। उसके बाद गुरु एवं सांभोगिक साधुओं को भिक्षा में प्राप्त भोजन के लिए निमंत्रित करना चाहिए कि हे महानुभावो! मुझे तारो एवं मेरी इस भिक्षा में से कुछ लेने की कृपा करो।<sup>१</sup>

**प्रश्न २०. मुनि को आहार क्यों करना चाहिए ?**

उत्तर—मुनि को संयम यात्रा के सम्यक् निर्वाह के लिए आहार करना चाहिए।<sup>२</sup>

**प्रश्न २१. आहार करते समय कौन-कौन-से दोष टालने आवश्यक हैं ?**

उत्तर—पांच दोष टालने चाहिए—वे ये हैं<sup>३</sup>—१. संयोजना, २. अप्रमाण, ३. अंगार, ४. धूम ५. अकारण।

**प्रश्न २२. किन किन कारणों से साधु को आहार नहीं करना चाहिए ?**

उत्तर—१. रोग उत्पन्न होने पर, २. राजा, स्वजन, देव, तिर्यच आदि द्वारा उपसर्ग उपस्थित करने पर, ३. ब्रह्मचर्य की रक्षा के लिए, ४. प्राण-भूत-जीव-सत्त्वों की दया के लिए, ५. तप करने के लिए, ६. अन्तिम-संलेखना संधारा कर शरीर को छोड़ने के लिए। उपरोक्त कारणों से आहार को त्यागना धर्म है किन्तु क्रोधादिवश भूख-हड़ताल करना धर्म में नहीं आता।<sup>४</sup>

**प्रश्न २३. आहार करने के छह कारण कौन से हैं ?**

उत्तर—१. भूख मिटाने के लिए २. सेवा के लिए ३. ईर्या समिति के पालन के लिए ४. संयम पालने के लिए ५. प्राण रक्षा के लिए ६. स्वाध्याय ध्यान आदि धर्म चिंतन के लिए।<sup>५</sup>

**प्रश्न २४. आहार करते समय साधु को किन पांच बातों का ध्यान रखना चाहिए ?**

उत्तर—(१) स्वाद के लिए न खाए (२) मात्रा से अधिक न खाए (३) लोलुपता से न खाए (४) आहार और दाता की निंदा करते हुए न खाए (५) कारण बिना न खाए।

१. दसर्वे ५/१/८८

२. उत्तरा. ८/११

३. उत्तरा. २४/१२

४. उत्तरा. २६/३३-३४

५. उत्तरा० २६/३१-३२



**प्रश्न २५. साधु का आहार करना सावद्य है या निरवद्य ?**

**उत्तर—**भगवती १/९ के अनुसार प्रासुक-निर्दोष आहार करता हुआ साधु सात-आठ कर्मों के बंधनों को शिथिल करता है अतः उनका आहार करना निरवद्य एवं संयम को पुष्ट करने वाला है। क्योंकि वे शरीर के द्वारा ज्ञान-दर्शन-चारित्र का परिवहन करने के लिए एवं मोक्ष-प्राप्ति के लिए ही खाते हैं, न कि शरीर के लिए।

**प्रश्न २६. दिन में भिक्षा करके लाया हुआ आहार साधु कब तक रख सकते हैं?**

**उत्तर—**दूसरे प्रहर में लाया हुआ भोजन तो दिन भर रख सकते हैं। किन्तु प्रथम प्रहर में लाया हुआ भोजन चौथे प्रहर में नहीं रख सकते। अगर भूल से रह जाए तो उसे खाना-पीना नहीं कल्पता।<sup>१</sup> औषधि के विषय में यह विधान है कि गाढागाढ (विशेष) कारणवश प्रथम प्रहर में लाई हुई औषधि चौथे प्रहर में खाई एवं लगाई जा सकती है, साधारण कारण में नहीं। इसीलिए दूसरे प्रहर में औषधियों की पुनः आज्ञा लेने की परम्परा है।

**प्रश्न २७. क्या मुनि गोचरी करके लाई वस्तु गृहस्थ को वापस दे सकता है?**

**उत्तर—**आहार आदि गृहस्थ को वापस नहीं दिया जा सकता लेकिन औषधि के रूप में जो चूर्ण-गोली-मरहम-इन्जेक्शन आदि चीजें ली जाती हैं, वे आवश्यकतानुसार काम में लेकर शेष वापस दी जा सकती हैं। यदि असावधानी पूर्वक पात्र में कोई सचित्त वस्तु आ जाये तो उसे वापस देने की परम्परा है। सचित्त-अचित्त के साथ मिल जाये तो उसे खाना नहीं कल्पता, परठना पड़ता है। प्रातिहारिक वस्त्र-पात्र यदि काम में न लिए जाएं तो उसी दिन भुलाए जा सकते हैं। शय्या-संधारा, पाट-बाजोट, सूई-कैंची-चाकू आदि शस्त्र, खरल-मूसल एवं पेन-पेंसिल आदि जो भी संयमसाधना में उपकारी हैं, वे सभी वस्तुएं काम में लेकर वापस दी जा सकती हैं।

**प्रश्न २८. साधु गृहस्थ के घर में गोचरी कैसे जाएं ?**

**उत्तर—**संकेत या सूचना करके जाएं। साधु सीधा गृहस्थ के घर गोचरी न जाएं।<sup>२</sup>

**प्रश्न २९. क्या साधु वर्षा में गोचरी एवं शौच जा सकते हैं ?**

**उत्तर—**वर्षा में साधु शौच जा सकते हैं, गोचरी नहीं।<sup>३</sup>

१. बृहत्कल्प भाग-२, ४/१२-१३

३. दसवे. ५/१/८

२. आचा. श्रु. २ अ. १ उ. ५/५४

**प्रश्न ३०. वर्षा, ओस या अधिक त्रस जीव बरसते समय साधु विहार एवं गोचरी क्यों नहीं कर सकते हैं ?**

उत्तर—क्योंकि इससे त्रस-स्थावर जीवों की विराधना होने की संभावना रहती है।<sup>१</sup>

**प्रश्न ३१. प्रहर किसे कहते हैं ?**

उत्तर—दिन और रात का चौथाई भाग प्रहर होता है। दिन-रात के घटने बढ़ने के साथ प्रहर का समय भी घटता बढ़ता रहता है।<sup>२</sup>

**प्रश्न ३२. साधु-साध्वी गोचरी करने के लिए जाएँ और रास्ते में वर्षा आ जाएँ तो क्या आगे जा सकते हैं ?**

उत्तर—नहीं जा सकते लेकिन रास्ते में कहीं ठहरने का स्थान न हो तो आगे जा सकते हैं या अपने स्थान पर वापिस आ सकते हैं। शास्त्रों में बारह कुल की गोचरी कही है जैसे—

१. उग्रकुल—आरक्षक कुल।
२. भोगकुल—राजा के पूज्यस्थानीय कुल।
३. राजन्यकुल—राजा के मित्र स्थानीय कुल।
४. क्षत्रियकुल—राष्ट्रकूटादि (राठौड़ आदि) कुल।
५. इक्ष्वाकुकुल—ऋषभ देव भगवान के वंशज।
६. हरिवंशकुल—अरिष्टनेमि भगवान के वंशज।
७. ग्वालादिका कुल।
८. वैश्य (वणिक) कुल।
९. नापित कुल।
१०. सुथार कुल।
११. ग्राम रक्षक कुल।
१२. तन्तुवाय (वस्त्रादि बुनने वाले) कुल।

इन बारह कुलों से मिलते-जुलते वे सभी कुलों में गोचरी जा सकते हैं।<sup>३</sup>

**प्रश्न ३३. क्या साधु अकेली स्त्री तथा साध्वी अकेले भाई-से गोचरी ले सकते हैं ?**

१. दसवे. ५/१/८

३. आ. श्रु. २ अ. १ उ. २/२३

२. उत्तरा. २७/१२

उत्तर—अकेली बहिन से साधु व अकेले भाई से साध्वी गोचरी नहीं ले सकते।<sup>१</sup>  
कम-से-कम दो होने चाहिए।

प्रश्न ३४. साधु-साध्वी सचित्त फल सब्जी नहीं लेते इसलिए उन्हें उबालकर बहरा सकते हैं क्या ?

उत्तर—नहीं बहरा सकते क्योंकि यह भी आधाकर्मी दोष में आता है। स्वयं को सचित्त खाने का त्याग हो और स्वयं के खाने के लिए उबालकर रखा हो तो उसमें से बहराया जा सकता है।

प्रश्न ३५. साधु-साध्वियां गोचरी पधारे उस समय बिजली, पंखा चालू करने के बाद क्या वह व्यक्ति बहरा सकता है ?

उत्तर—नहीं बहरा सकता क्योंकि यह सम्मत नहीं हैं।

प्रश्न ३६. क्या साधु हरी सब्जी वाला रायता ले सकते हैं ?

उत्तर—यदि सब्जी उबाली हुई हो तो ले सकते हैं।

प्रश्न ३७. क्या साधुओं को देने के लिए घर से लाया हुआ आहारादि साधु ले सकते हैं ?

उत्तर—तीन घर के अंतर्गत यतनापूर्वक लाई हुई वस्तु ले सकते हैं। तीन घर की सीमा के बाहर से लायी हुई वस्तु नहीं ले सकते। लेने वाले साधु को प्रायश्चित्त आता है। इसी शास्त्र-वाक्य के आधार पर तीन घर से आगे के व्यक्ति भावना भाने के लिए भी नहीं आ सकते।<sup>२</sup>

प्रश्न ३८. क्या साधु जैनों के घरों से ही गोचरी ले सकते हैं या दूसरे घरों से भी ?

उत्तर—जैन-अजैन का कोई प्रश्न नहीं है। जहां भी शुद्ध प्रासुक आहार मिल सके वहीं से साधु ले सकते हैं।

प्रश्न ३९. क्या साधु अपने हाथ से आहार आदि ग्रहण कर सकता है ?

उत्तर—औषधि और पानी के सिवा खाने-पीने की कोई भी चीजें साधु अपने हाथ से उठाकर नहीं ले सकते।

प्रश्न ४०. पीने का पानी तथा भोजन लेने के बाद उस घर में पुनः बनाया गया पानी या खाना आदि भी ले सकते हैं ?

उत्तर—नहीं ले सकते। एक बार पानी-आहार ले लेने के बाद पुनः बनाया गया

१. निशीथ ८/१

(ख) पि. नि. ३/४४

२. (क) नि. ३/१५

पानी या खाना तीन प्रहर दिन तक नहीं लिया जा सकता। चौथी प्रहर यानी शाम को लिया जा सकता हैं। परन्तु पानी पंचमी, धोने आदि के लिए ले सकते हैं।

**प्रश्न ४१. पूर्वकर्म दोष किसे कहते हैं ?**

उत्तर—साधु को बहराने के निमित्त मुनि के पधारने से पहले यदि कोई आरंभ सम्भारंभ किया जाए अथवा हो जाए उसे पूर्व कर्म दोष कहते है, जैसे—गोचरी बहराने के निमित्त से कच्चे पानी से हाथ धोना आदि।<sup>१</sup>

**प्रश्न ४२. पश्चात् कर्म दोष किसे कहते हैं ?**

उत्तर—गोचरी बहराने के बाद कच्चे पानी से हाथ धोना, बरतन आदि धोना, बहराने के कारण खाना कम पड़ जाये तो फिर से बनाना आदि सब प्रकार की हिंसा पश्चात् कर्म-दोष में आती है।<sup>२</sup>

**प्रश्न ४३. क्या साधु अपनी वस्तु गृहस्थ को दे सकते हैं ?**

उत्तर—नहीं दे सकते। शास्त्र में कहा है कि जो साधु अपना आहार-पानी-खादिम-स्वादिम-वस्त्र-पात्र-कम्बल एवं रजोहरण गृहस्थ को देता है, उसे प्रायश्चित्त आता है।<sup>३</sup>

**प्रश्न ४४. पहले दिन का मक्खन साधु को दूसरे दिन बहराया जा सकता है ?**

उत्तर—नहीं क्योंकि उसमें जीव उत्पन्न होने की संभावना होती है।

**प्रश्न ४५. कौन-सा मक्खन साधु-साध्वी दूसरे दिन भी ले सकते है ?**

उत्तर—मक्खन छाछ आदि में डूबा हुआ, फ्रिज में रखा हुआ या बाजार का मक्खन जिसमें नमक वगैरह मिला होता है वह बहर सकते हैं।

**प्रश्न ४६. क्या साधु पर्युषण (संवत्सरी) के दिन आहार कर सकते हैं ?**

उत्तर—किंचिन्मात्र भी आहार नहीं कर सकते। करने से प्रायश्चित्त आता है।<sup>४</sup>

**प्रश्न ४७. शुद्ध साधु को सूझता आहार पानी, वस्त्र, बाजोट, दवाई, मकान आदि-आदि वस्तुएं देने से क्या लाभ होता है ?**

उत्तर—साधु-साध्वियों को निर्दोष दान देने से श्रावक के बारहवां व्रत होता है। उस तीन लाभ होते हैं—

१. संवर—जितनी वस्तु आहार, पानी, वस्त्र आदि दाता साधु-साध्वियों को बहरा देता है उतना व्रत संवर होता है। उस वस्तु के उपयोग करने से

१. दसवे. ५/१/३२

३. दसवे. ३/६

२. दसवे. ५/१/३५

४. निशीथ १०/३६

जो अन्नत लगता उससे वह बच जाता है।

२. व्रत संवर से अशुभ कर्मों का नाश होता है तथा अंतराय कर्म का क्षय होता है और आत्मा उज्ज्वल होती है।

३. स्वयं के ऊनोदरी तप होता है।

**प्रश्न ४८. साधु-साध्वियों को असत्य बोलकर असूझता आहार-पानी देने से क्या होता है ?**

उत्तर—१. असूझता बहराने से अतिथिविसंभाग व्रत भंग होता है, २. असत्य बोलने का दोष लगता है। ३. वह साधु के व्रत में दोष लगाता है इसलिए उसे दोष लगता है।

**प्रश्न ४९. रायता या सिकंजी, शरबत आदि में कच्चे पानी का बर्फ मिला हो तो वह सूझता होता है या असूझता ?**

उत्तर—असूझता होता है किन्तु बर्फ के पूर्णतः गलने के करीब १० मिनट बाद सूझता हो सकता है।

**प्रश्न ५०. साधु-साध्वियां गोचरी के लिए पधार जाएं उस समय यदि गृहस्थ सचित्त का स्पर्श कर रहा हों, जैसे धान चुग रहा हो, हाथ में हरियाली की थैली हो, फ्रिज खोल रहा हो, लाईट-पंखा आदि चालू कर रहा हो तो वह सूझता हो सकता है ?**

उत्तर—साधु-साध्वी के घर पधारने पर जिस भाई-बहन के वन्दना करने का पच्चक्खण होता है वे सचित्त छोड़ कर वन्दना करने पर सूझते हो सकता हैं। अन्यथा नहीं होते।

**प्रश्न ५१. जिस प्रकार सचित्त से स्पृष्ट वन्दना करने पर सूझता हो सकता है वैसे स्नान करके आया हुआ, हाथ धोया हुआ, वनस्पति काटता हुआ, नमक आदि सचित्त रजों से संयुक्त सचित्त या कच्चा पानी आदि लगा हो, वह भी सूझता हो सकता है ?**

उत्तर—नहीं होता है, क्योंकि वन्दना करने के बाद भी सचित्त का संघट्टा (स्पर्श) बना रहता है। परन्तु सचित्त का अंश न रहने के बाद वह बहरा सकता है।

**प्रश्न ५२. क्या सामायिक में साधु-साध्वी को गोचरी पानी आदि की भावना भाई जा सकती है तथा बहराया जा सकता है ?**

उत्तर—हां, भावना भाना तथा बहराना—दोनों किया जा सकता है क्योंकि साधु

को दान देना निरवद्य धार्मिक प्रवृत्ति है सामायिक में सावद्य प्रवृत्ति का ही त्याग होता है।

**प्रश्न ५३. गोचरी हो जाने के बाद क्या निवेदन करना चाहिए ?**

उत्तर—आपने कृपा कराई, मेहरबानी कराई, हमें व्रत का लाभ दिया। आपके और कोई वस्तु की जरूरत हो तो फिर कृपा कराना, हम भावना भाते हैं।

**प्रश्न ५४. क्या साधु आमंत्रित भोजन ले सकता है ?**

उत्तर—नहीं, वे किसी गृहस्थ का निमंत्रण स्वीकार नहीं करते।<sup>१</sup>

**प्रश्न ५५. क्या साधु आहारादि (अशन, पान, खादिम, स्वादिम) मांगकर ले सकते हैं ?**

उत्तर—जिस देश प्रांत में जन-साधारण का जो खाना हो वह भोजन उदर पूर्ति के लिए मुनि मांगकर ले सकते हैं। कारण से दवाई ले सकते हैं। पुस्तक, पत्रे वस्त्र-पात्र आदि प्रातिहारिक वस्तु की याचना मांगकर कर सकते हैं। इनके अतिरिक्त और कुछ नहीं मांग सकते।

**प्रश्न ५६. अतिथि संविभाग व्रत से क्या तात्पर्य है ?**

उत्तर—यह श्रावक का बारहवां व्रत है साधु के भिक्षार्थ आने का कोई समय निर्धारित नहीं होता है। ऐसे त्यागी साधुओं का नाम अतिथि है। अपने लिए बनी हुई वस्तु का सम्यक् विभाग-हिस्सा करके अर्थात् स्वयं संकोच करके अतिथि को देना अतिथि संविभाग-व्रत है। इसका दूसरा नाम यथा संविभाग व्रत भी है। जहां पर साधु-साध्वियां का योग उपलब्ध न होने पर भी खाने के समय दान देने की भावना रखना अतिथि संविभाग व्रत है।

**प्रश्न ५७. यदि फ्रिज जिसमें फल सब्जी आदि रखें हो और वह चालू हो तो क्या उसमें से कोई अचित्त वस्तु निकाल कर साधु को बहरा सकते हैं ?**

उत्तर—नहीं बहरा सकते क्योंकि चालू फ्रिज खोलने पर तेजस्काय की विराधना की संभावना रहती है। फ्रिज खोलने पर उसके हिलने से जीवों की विराधना होती है। यदि साधु के पधारने से पहले भी उनके लिए निकाल कर रखे तो वह भी अकल्पनीय होता है। क्योंकि साधु के लिए असूझती वस्तु सूझती करना भी दोष है।

**प्रश्न ५८.** क्या साधु को बहराने के लिए खरीदकर लाई हुई वस्तु, उधार लाई गई वस्तु, अदला-बदली की हुई वस्तु तथा किसी से छिनी हुई वस्तु कल्पनीय होती है ?

**उत्तर—**नहीं, ये सब अकल्पनीय होती हैं।

**प्रश्न ५९.** साधु पधारने वाले हो, यह सोचकर कि हम भी जल्दी खा लेंगे। इस निमित्त से खाना जल्दी बनाया जाये तो क्या वह भोजन कल्पनीय होता है ?

**उत्तर—**नहीं, ऐसा आहार-पानी भी अकल्पनीय होता है, क्योंकि वह साधु और गृहस्थी दोनों के लिए जल्दी बना है, उसी प्रकार खाना बन रहा हो, उसमें मुनि के लिए थोड़ा ज्यादा बनाकर रखे तो भी अकल्पनीय होता है।

**प्रश्न ६०.** आलमारी आदि जो स्थाई हो, दीवार के भीतर स्थित हो और न हिलती हो उसमें यदि सचित्त, अचित्त दोनों तरह की वस्तु रखी हो तो क्या अचित्त वस्तु बहरा सकते हैं ?

**उत्तर—**हां, वह सूझती होती है बशर्ते उस खण में कागज, कपड़ा या अन्य कोई उठाऊ वस्तु बिछी न हो या सचित्त का स्पर्श न हो।

**प्रश्न ६१.** साधु अपने के भोजन की व्यवस्था कैसे करते हैं ?

**उत्तर—**वे गोचरी (भिक्षा) द्वारा अपने भोजन की व्यवस्था करते हैं।

**प्रश्न ६२.** साधुओं की भिक्षा विधि क्या है ?

**उत्तर—**साधु दाता का अभिप्राय देख कर शुद्ध-भिक्षा लेते हैं।

**प्रश्न ६३.** शुद्ध-भिक्षा का क्या अर्थ है ?

**उत्तर—**१. जिस घर में मांस मदिरा आदि अभक्ष्य पदार्थों का सेवन न होता हो।

२. भोजन साधु के लिए बना हुआ न हो, गृहस्थ अपने लिए बनाता हो, उसमें से अपना संकोच कर साधु को दे तो साधु उसे ले सकता है। ३.

रोटी आदि वस्तु कच्चे पानी, अग्नि, हरियाली, नमक आदि सचित्त वस्तु का स्पर्श न करती हो। ४. बहराने वाला (भिक्षा देने वाला) किसी प्रकार की हिंसा में रत न हो।

**प्रश्न ६४.** साधु द्वारा पहले दिन जिस घर से भिक्षा प्राप्त की गई हो तो क्या उसी घर से वहां दूसरे दिन भी भिक्षा प्राप्त की जा सकती हैं।

**उत्तर—**उस स्थान पर नहीं ले सकते सहज स्थान परिवर्तन हो तो ले सकते हैं।

**प्रश्न ६५.** स्थान-परिवर्तन का क्या अर्थ है ?

**उत्तर—**जिस स्थान पर आज गोचरी की। उसी घर में दूसरे दिन दूसरे स्थान पर

यदि मान्यतानुसार कल्प स्थापित हो तथा वहां सहज वस्तु लाई गई हो तो उसकी गोचरी साधु कर सकते हैं ?

**प्रश्न ६६. क्या एक ही स्थान पर हमेशा गोचरी की जा सकती है ?**

**उत्तर**—एक ही परिवार की एक ही स्थान पर हमेशा गोचरी नहीं कि जा सकती है अलग-अलग परिवार यदि सेवा करने के लिए आते है, तो उस स्थान पर अपने स्वयं की वस्तुओं की भावना भाने पर गोचरी की जा सकती है।

**प्रश्न ६७. व्यक्ति परिवर्तन से क्या अभिप्राय है ?**

**उत्तर**—वस्तु के मालिक ने अपनी वस्तु दूसरे व्यक्ति को सौंप दी हो।

**प्रश्न ६८. किसी घर के द्वार पर या भीतर भिक्षाचर भिक्षा के लिए खड़ा हो तो क्या साधु उसको लांघकर घर के भीतर गोचरी जा सकता है ?**

**उत्तर**—भिक्षाचर हो या अन्य कोई मांगने वाला यदि द्वार पर या भीतर खड़ा हो तो साधु उसे लांघकर भिक्षा लेने भीतर नहीं जा सकता। यदि मांगने वाला कह दे तो साधु घर में प्रवेश कर सकता है।

**प्रश्न ६९. क्या साधु गर्भवती स्त्री के हाथ से भिक्षा ले सकता है ? उसकी विधि क्या है ?**

**उत्तर**—साधु गर्भवती स्त्री के हाथ से भिक्षा ले सकता है, उसकी विधि यह है—जब साधु घर में गोचरी जाए उस समय गर्भवती स्त्री बैठी हो और वह बैठी ही भिक्षा दे तो साधु ले सकता है, खड़ी होकर दे तो साधु नहीं ले सकता। यदि वह खड़ी हो और खड़ी ही भिक्षा दे तो साधु ले सकता है। बैठी या खड़ी जिस अवस्था में वह हो उसी अवस्था में भिक्षा दे तो साधु ले सकता है।<sup>१</sup>

**प्रश्न ७०. ऐसा क्यों करते हैं ?**

**उत्तर**—अहिंसा की दृष्टि से ऐसा करते हैं। उठने बैठने से गर्भस्थ शिशु को कष्ट होता है। दान देते समय किसी को कष्ट होना शुद्ध भिक्षा का एक दोष है इसलिए वह अकल्पनीय है।<sup>२</sup>

**प्रश्न ७१. माता बच्चे को स्तनपान करा रही हो। उस समय बच्चे का स्तनपान छुड़ाकर साधु को बहराए तो क्या साधु ले सकता है ?**

**उत्तर**—स्तनपान छुड़ाने से बच्चे को पीड़ा होती है, अंतराय आती है। इसलिए साधु उसके हाथ से भिक्षा नहीं ले सकता।<sup>३</sup>

१. दसवे. ५/१/४०-४१

३. दसवे. ५/१/४२-४३

२. दसवे. ५/१/४०-४१



**प्रश्न ७२. प्रथम प्रहर में लिया गया भोजन-पानी साधु कितने समय तक खाने-पीने के काम में ले सकता है ?**

**उत्तर—**प्रथम प्रहर में लिये गये आहार-पानी को तीन प्रहर तक खाने-पीने के काम में ले सकता है, उससे आगे नहीं।<sup>१</sup>

**प्रश्न ७३. प्रथम प्रहर में गोचरी करने के बाद क्या साधु उस घर से द्वितीय प्रहर में गोचरी कर सकता है ?**

**उत्तर—**नहीं कर सकता प्रथम प्रहर, द्वितीय प्रहर और तृतीय प्रहर का कल्प एक होता है। इन तीन प्रहरों में एक बार गोचरी के बाद उस घर में गोचरी के बाद बना हुआ आहार-पानी साधु ग्रहण नहीं कर सकता। पहले बनी हुई वस्तु ली सकती है। चतुर्थ प्रहर का कल्प अलग होता है।

**प्रश्न ७४. विगय का अर्थ समझाइये।**

**उत्तर—**विगय का अर्थ-विकृति पैदा करने वाला पदार्थ। विगय छह हैं—१. दूध, २. दही, ३. घी ४. तेल ५. कढ़ाई-विगय-चीनी मिश्री डालकर बनी हुई वस्तु तथा तली हुई वस्तु ६. चीनी (शक्कर), गुड़ आदि। (मद्य, मांस, मधु और मक्खन महाविगय है।)<sup>२</sup>

**प्रश्न ७५. क्या साधु विगय ग्रहण कर सकता है ?**

**उत्तर—**सामान्यतः भिक्षा के रूप में शक्कर, मिश्री आदि विधिवत् ग्रहण कर सकता है। पर महाविग्रह में मद्य, मांस का ग्रहण कर ही नहीं सकता है।

**प्रश्न ७६. मिश्री आदि विगय की वस्तु साधु-साध्वियां स्वयं ले सकते हैं ?**

**उत्तर—**नहीं ले सकते हैं, केवल मालिश आदि के तैल को छोड़कर।

**प्रश्न ७७. नित्यपिंड और सत्पिंड क्या होता है ?**

**उत्तर—**पिंड का अर्थ होता है, आहार-पानी। नित का अर्थ होता है, रोज। नित्य पिंड—अर्थात् रोज-रोज एक ही स्थान पर एक ही मालिक का आहार-पानी लेना। और सत्पिंड का अर्थ होता है, कम से कम एक दिन छोड़कर आहार-पानी लेना।<sup>३</sup>

**प्रश्न ७८. क्या साधु-साध्वी नित्यपिंड ले सकते हैं ?**

**उत्तर—**सामान्यतः नित्यपिंड नहीं ले सकते किन्तु बीमारी या अन्य कारणवश दवा-पथ्य के रूप में लें तो प्रायश्चित्त का विधान है।

**प्रश्न ७९. अंधकार पूर्ण स्थान से या जहां पूरा प्रकाश न हो ऐसे स्थान से लाई गयी वस्तु क्या साधु ले सकता है ?**

**उत्तर—**नहीं ले सकता। क्योंकि उसमें हिंसा की संभावना रहती है।

१. निशीथ १२/३१

३. दसवें ३/८

२. स्थानां. ६/२३

## १६. सचित्त-अचित्त प्रकरण

**प्रश्न १. सचित्त किसे कहते हैं? उदाहरण से समझाएं?**

**उत्तर—**सचित्त अर्थात् चित्त सहित। जिसमें जीव हो, चेतना हो, उसे सचित्त कहते हैं। जैसे—साधारण नमक, कच्चा पानी, अग्नि, वायु, वनस्पति, चलते फिरते प्राणी आदि सब सचित्त हैं।

**प्रश्न २. अचित्त किसे कहते हैं?**

**उत्तर—**जिसमें जीव न हो, जो चेतना रहित हो उसे अचित्त कहते हैं। जितने पौद्गलिक पदार्थ हैं वे सारे अचित्त हैं जैसे—गर्म किया हुआ नमक, उबला हुआ पानी, चूने तथा राख मिला हुआ धोवण पानी, उबले फल, सब्जी, बीज तथा छिलके विहीन फल, फलों का रस, मिठाई नमकीन, पक्का हुआ खाना, काजू, अंजीर, किसमिस, दाख, सूखा मेवा, लौंग, सिकी हुई इलायची इत्यादि।

**प्रश्न ३. इलायची, काली मिर्च, जीरा, राई, धनियां आदि सचित्त है या अचित्त?**

**उत्तर—**सचित्त है। शस्त्र परिणति के बिना वे सब सचित्त है।

**प्रश्न ४. जलजीरा सचित्त है या अचित्त?**

**उत्तर—**सचित्त होता है, क्योंकि उसमें कच्चा नमक मिला होता है।

**प्रश्न ५. बेदाणा या अनारदाना सचित्त या अचित्त?**

**उत्तर—**सचित्त। उबला हुआ अचित्त होता है।

**प्रश्न ६. छिलके सहित केला सचित्त है या अचित्त?**

**उत्तर—**सचित्त है। केले का छिलका सचित्त होता है। छिलका उतर जाने पर केला अचित्त होता है।

**प्रश्न ७. क्या पत्ते वाले शाक (पोदीना, धनिया, पालक आदि) और गोभी आदि शाक सचित्त का त्यागी खा सकता है?**

**उत्तर—**ये शाक सचित्त होते हैं। अग्नि से संस्कारित किए बिना ये अचित्त नहीं

होते। पोदीना, धनिया आदि को पीसकर बनाई गई चटनी अचित्त है।

**प्रश्न ८. अष्टमी, चतुर्दशी आदि तिथियों को या सदा के लिए हरी लीलोती का त्याग वाला व्यक्ति क्या, केला, सेव आदि खा सकता है?**

**उत्तर**—नहीं खा सकता परन्तु कोकिन केला, आगरे का पेठा, गाजरपाक, सेव और आंवले आदि का मुरब्बा हरियाली में नहीं माना जाता।

**प्रश्न १०. क्या साधु सभी प्रकार की अचित्त वस्तुओं को ग्रहण कर सकते हैं?**

**उत्तर**—नहीं। अचित्त के साथ (एषणीय) ग्रहण करने योग्य भी होनी चाहिए।

**प्रश्न ११. क्या साधु सचित्त को ग्रहण कर सकते हैं?**

**उत्तर**—हां—ले सकते हैं संज्ञी मनुष्य पंचेन्द्रिय जो दीक्षित होना चाहता है उसे ले सकते हैं अन्य सचित्त वस्तु ग्रहण नहीं कर सकते।

**प्रश्न १२. कौन-कौन से सचित्त के स्पर्श से हिंसा होती है?**

**उत्तर**—चार स्थावर काय के स्पर्श मात्र से हिंसा होती है। जैसे कच्चा-पानी, सब तरह की हरियाली, बीज, (एकेन्द्रिय), नमक, कच्ची मिट्टी तथा अग्निकाय।

**प्रश्न १३. पिसी हुई इलायची, काली मिर्च, जीरा, धनियां, मसाला आदि सचित्त या अचित्त?**

**उत्तर**—अचित्त! क्योंकि बीजों के पीसे जाने पर उसमें जीव नहीं रहते किन्तु वारीक दानों वाली पिसी हुई वस्तु जब तक छानी नहीं जाती उसमें बीज रहने की संभावना रहती है इसलिए छानने के बाद उसे प्रासुक माना जाता है।

**प्रश्न १४. बादाम की गिरी, पिस्ता, काजू, अंजीर, मुनक्का, किसमिस आदि सचित्त है या अचित्त?**

**उत्तर**—अचित्त! क्योंकि गिरी बीज को फोड़ने पर निकलती है। इसलिए वह अचित्त है बिदाम खोल सहित सचित्त एवं खोल रहित अचित्त है। पिस्ता काजू, कली राख, मुनक्का, अंजीर आदि अग्नि से संस्कार किए हुए होते हैं। इसलिए अचित्त हैं।

**प्रश्न १५. साबुत बादाम का फल, बेर, खुरमाणी (जल-दारु) अचित्त है या सचित्त?**

**उत्तर**—सचित्त है, क्योंकि वे बीज सहित होते हैं।

**प्रश्न १६. क्या लवंग अचित्त है ?**

उत्तर—हां! क्योंकि वह सूखा हुआ फूल है, उसमें बीज नहीं है। टोपी वाला लोंग भी अचित्त ही है।

**प्रश्न १७. नारियल (डाब) का पानी सचित्त है या अचित्त ?**

उत्तर—पानी अचित्त है। डाब सचित्त है। उसकी निकली हुई मलाई या जर्मी हुई चटक भी अचित्त होती है।

**प्रश्न १८. नॉबू, मिर्च, कैरी और जमीकन्द का आचार कितने दिनों के बाद अचित्त माना जाता है ?**

उत्तर—गर्म तेल में बना हुआ होने पर तीन दिन के बाद तथा जमीकन्द और पानी का आचार तीन दिन के बाद अचित्त माना जाता है। प्याज के अलग टुकड़े न किए गये हों तो उसका आचार तीन दिन के बाद भी न लें पर उसमें घृत, तैल आदि डालकर आचार किया गया हो तो वह तीन दिन के बाद लिया जा सकता है।

**प्रश्न २०. क्या टमाटर का जूस भी अचित्त होता है ?**

उत्तर—टमाटर उबले हुए हो अथवा उसका जूस कपड़े या छलनी से छानने पर उसमें बीज न रहे तो अचित्त हो जाता है।

**प्रश्न २१. जिस प्रकार फलों का रस, गन्ने का रस अचित्त होता है क्या उसी तरह प्याज, अदरक आदि जमीकंद (जमीन में होने वाले) का रस भी अचित्त होता है ?**

उत्तर—जमीकंद का रस अचित्त नहीं होता, वह सचित्त है। गर्म होने पर या अन्य वस्तु पर्याप्त मात्रा में मिल जाने पर ही अचित्त होता है।

**प्रश्न २२. क्या अचित्त भी अकल्पनीय होता है ?**

उत्तर—साधु मर्यादा के प्रतिकूल वस्तु अकल्पनीय होती है।

**प्रश्न २३. पक्का (प्रासुक) पानी का क्या तात्पर्य है ?**

उत्तर—प्रासुक यानि अचित्त। जो पानी चूना या राख से युक्त हो, वह १० मिनट बाद पक्का हो जाता है। ऐसी हमारी मान्यता एवं प्ररूपणा है।

**प्रश्न २४. प्रासुक एवं एषणीय का क्या अभिप्राय है ?**

उत्तर—साधु प्रासुक व स्थविर के भोजी होते हैं। अतः प्रासुक का अर्थ जीव रहित और एषणीय का अर्थ है। एषणा समिति से युक्त।

**प्रश्न २५. साधु-साध्वियां कौन-कौन सा पानी काम में ले सकते हैं ?**

उत्तर—गर्म पानी, राख, चूना आदि मिला हुआ तथा फिल्टर का पानी ले सकते हैं। क्योंकि वह अचित्त (पक्का) पानी है।

**प्रश्न २६. क्या साधु-साध्वी कुंआ, तालाब, नदी, वर्षा का पानी काम में ले सकते हैं ?**

उत्तर—नहीं क्योंकि उसे सचित्त माना जाता है।

**प्रश्न २७. साधु केवल गर्म पानी ही ले सकते हैं या अन्य अचित्त पानी भी ?**

उत्तर—जिस पानी का वर्ण, गंध, रस, स्पर्श बदल जाए वह प्रासुक होता है, वह पानी साधु ग्रहण कर सकता है।

**प्रश्न २८. शास्त्र में कौन से इक्कीस तरह के पानी का वर्णन है ?**

उत्तर—१. कठोती का जल (आटे का धोवन) २. ढोकला आदि का जल ३. चावलों का जल (जिसमें चावल धोये गये हों) ४. तिलों का जल ५. तुषों का जल ६. जवों का जल ७. ओसावण (चावल आदि को उबालने के बाद निकाला हुआ जल) ८. छाछ पर से उतारा हुआ खट्टा जल (आछ) ९. उष्ण जल १०. आम का धोवन ११. आम्रातक (फल विशेष) का धोवन १२. कपित्थ फल का धोवन १३. बिजोर फल का धोवन १४. दाखों का धोवन १५. दाड़िम-अनार का धोवन १६. खजूर का धोवन १७. नारियल का धोवन १८. कैरों का धोवन १९. बेरों का धोवन २०. आंवल्लों का धोवन २१. इमली का धोवन तथा इनसे मिलते-जुलते दूसरे भी वे जल, जो अचित्त हों, साधु विधिपूर्वक ले सकते हैं।

इस आगम-वचन के अनुसार साधु गुड़ का जल, चीनी का जल, दूध का बर्तन धोया हुआ जल एवं राख से मांजे हुए लोटे-कलशे आदि का धोवन भी लेते हैं। किसी व्यक्ति के कच्चा पानी पीने का त्याग हो और उसने अपने लिए राख-चूना आदि डालकर पक्का पानी बनाया हो तो वह भी साधु विधिपूर्वक ले सकते हैं।<sup>१</sup>

पक्का पानी पीने वालों को यह बात ध्यान देने की है कि नाममात्र राख या चूने से पानी पक्का-अचित्त नहीं होता। उसका वर्ण-गंध-रस-स्पर्श बदलने से ही होता है। अन्यथा कच्चा ही रहता है। इसलिए समझदार व्यक्ति पानी में राख-चूना आदि डालकर उसे हाथ या लकड़ी से मिलाते हैं। राख आदि द्रव्य कितना डाला जाए यह बात अनुभवियों से समझने योग्य है। पानी या धोवन बनाने के बाद त्याग वालों को लगभग १०-१५ मिनट तक काम में नहीं लेना चाहिए।

१. आचार चूला अ. १३. ७-द, सू. ६६ से १०४ तक

अपनी आवश्यकतानुसार बनाये हुए धोवन, गर्म पानी आदि में से संकोच करके साधुओं को देना धर्म है किन्तु उनके लिए अधिक बनाकर देना धर्म न होकर प्रत्युत दोष का कारण है। स्थानांग २/१/१२५ में शुद्ध साधु को अशुद्ध आहार आदि देने से अल्प आयुष्य (पाप कर्म) का बंध होना कहा है। श्रावक सम्यक्त्व ग्रहण करते समय एक पच्चक्खाण करता है कि मैं शुद्ध साधु को जानबूझकर अशुद्ध आहार-पानी तीन करण तीन योग से नहीं दूंगा।

**प्रश्न २६. वह गृहस्थ, जिसके कच्चा पानी पीने का त्याग नहीं है, प्रासुक (पक्का) पानी बनाएं तो क्या साधु-साध्वी ले सकते हैं ?**

**उत्तर**—ले सकते हैं लेकिन वह साधु-साध्वी के निमित्त न हो। अच्छा हो गृहस्थ स्वयं कच्चा पानी पीने का त्याग करे।

**प्रश्न ३०. एक बार जो पानी प्रासुक (पक्का) हो जाता है, क्या वह पुनः सचित्त हो सकता है ?**

**उत्तर**—हां प्रासुक पानी में यदि थोड़ा भी कच्चा पानी मिल जाए तो सारा पानी सचित्त माना जाता है। किन्तु जिस पानी में चूना, राख आदि पदार्थ दिखाई देते हों उसमें यदि पाव आधा पाव सचित्त पानी मिल जाए तो दस मिनट बाद उस पानी को अचित्त मानने की विधि है।

**प्रश्न ३१. तुरंत उबाले हुए पानी में यदि थोड़ा कच्चा पानी मिल जाए तो क्या वह पानी अचित्त माना जाता है ?**

**उत्तर**—उसे अचित्त नहीं, सचित्त माना जाता है। उस पानी को फिर से पूरा उबालें, तभी वह अचित्त बनता है।

**प्रश्न ३२. जो बर्तन कच्चे पानी में या नल आदि के नीचे साफ किये जाते हैं, वे कितनी देर बाद सूझते हो सकते हैं ?**

**उत्तर**—ऐसे बर्तन जब तक पूरे सूख न जाए, तब तक सूझते नहीं होते इसलिए इनका उपयोग लेते वक्त सचित्त या कच्चे पानी के त्याग वालों को विशेष सावधानी रखनी चाहिए।

**प्रश्न ३३. साधु-साध्वी जिस स्थान से एक बार पीने के लिए पानी ले लेते हैं तो क्या उसके बाद बनाया गया खाना आदि बहर सकते हैं ?**

**उत्तर**—हां, लिया जा सकता है, क्योंकि गौचरी और पानी का कल्प अलग-अलग है।

**प्रश्न ३४. मिट्टी के घड़े पर लीलण फूलन आ जाए तब उस घड़े का पानी क्या साधुओं को बहरा सकते हैं ?**

**उत्तर—**नहीं, क्योंकि लीलण-फूलन वनस्पति काय के जीव हैं उनकी हिंसा होती है, इसलिए नहीं बहरा सकते। भूल से बहराने पर घर असूझता हो जाता है।

**प्रश्न ३५. क्या सचित्त भी कल्पनीय/सूझता होता है।**

**उत्तर—**बहराने वाला भी सचित्त जीव सहित होता है। दीक्षार्थी भी सजीव होता है इसलिए सचित्त भी कल्पनीय हो जाता है पर जहां हिंसा होती हो वह सचित्त नहीं कल्पता।

## १७. सूझता असूझता प्रकरण

प्रश्न १. सूझता-असूझता क्या होता है ?

उत्तर—सूझता का अर्थ होता है प्रासुक और असूझता अर्थात् अप्रासुक। ये दोनों शब्द गौचरी विधि से संबंधित हैं। जो आहार-पानी, भिक्षा-संबंधित बयालीस दोषों से मुक्त है, वह सूझता कहलाता है, जिसे साधु ले सकते हैं।

प्रश्न २. कस्टर्ड जिसमें सचित्त अर्थात् बिना उबाले हुए फल, सब्जी (ककड़ी, धनिया, पौदीना, गाजर, प्याज मिश्रित) क्या सूझता होता है ?

उत्तर—नहीं होता। वह असूझता रहता है क्योंकि कस्टर्ड में डालने मात्र से वनस्पति काय अचित्त नहीं होती।

प्रश्न ३. रायता आदि में बिना उबाले हुए ककड़ी-धनियां आदि सब्जी डाली हुई हो और छमका दिया गया हो तो वह सूझता या असूझता ?

उत्तर—असूझता क्योंकि छमके से उनके अचित्त होने जितना ताप उत्पन्न नहीं होता।

प्रश्न ४. बिछौना-गद्दी आदि के स्पर्श होता हो तो क्यों नहीं बहराना चाहिए ?

उत्तर—क्योंकि उस रुई में कपास का बीज हो सकता है किन्तु यदि तीन वर्ष पुराना बिछौना है या पिंजी हुई रुई से बना है तो सूझता होता है।

प्रश्न ५. बरसात के छींटे लग गये हो या कच्चे पानी से स्नान किया हुआ हो, हाथ धोकर आए हो तो वह व्यक्ति कितनी देर में सूझता माना जाता है ?

उत्तर—हाथ सूखने पर अन्यथा दस मिनट के बाद सूझता माना जाता है।

प्रश्न ६. प्रासुक पानी असूझता कैसे होता है ?

उत्तर—इसका एक कारण यह है—जब गृहस्थ मटकी के नीचे कोई बर्तन, कुंडा, धामा आदि रखकर फिर उसमें कच्चा पानी छानते हैं तब छानते समय



थोड़ा-बहुत कच्चा पानी नीचे के बर्तन में एकत्रित हो जाता है, कुछ पानी वहां बिखर जाता है। गृहस्थ मटकी में चूना आदि मिला कर पानी पक्का कर लेते हैं किन्तु नीचे रखे हुए बर्तन के कच्चे पानी के कारण वह सारा पानी असूझता रहता है।

**प्रश्न ७. असूझता होने से बचने का क्या उपाय है ?**

**उत्तर**—इसके लिए केवल एक बात ध्यान में रखने की है कि मटकी का पानी पहले पक्का किया हुआ हो या अन्य किसी बर्तन में किया हुआ पक्का पानी छाने तो इससे बचा जा सकता है।

**प्रश्न ८. बिना देखे चलने से व बहराने के लिए बर्तन, वस्तु आदि बिना देखे आगे पीछे करने से चींटी आदि की हिंसा हो जाए तो क्या घर असूझता हो जाता है ?**

**उत्तर**—हां, यदि मुनि लेने के लिए तत्पर हो जाए तो असूझता हो जाता है। इसलिए सम्यक् प्रकार से देखे बिना चलना नहीं चाहिए व कोई भी वस्तु बिना प्रमार्जन किये सरकाना अथवा लाना नहीं चाहिए।

**प्रश्न ९. असूझता होने के कारण कौन-कौने-से है ?**

**उत्तर**—असूझता होने के कुछ विधान इस प्रकार हैं—कच्चा नमक, कच्चा पानी, अग्नि तथा हरियाली को छूने मात्र से असूझता हो जाता है। बहराते समय चींटी, मक्खी आदि जीव की हिंसा होने पर असूझता होता है। हवा के स्पर्श से असूझता नहीं होता पर फूंक देने या ऊपर से गिराते-गिराते बहराने से असूझता होता है।

**प्रश्न १०. घर असूझता किन-किन कारणों से होता है ?**

**उत्तर**—बहराते समय फूंक मार दे, कपड़ों में कांटा हो या सचित्त वस्तु से लिप्त हो या ऊंचे से गिराता हुआ देता हो तो उसका घर असूझता हो जाता है। गोचरी में कोई सचित्त वस्तु बहरा देने पर। जैसे फल फ्रूट आदि बिना उबले हो या उसमें बीज या छिलका आ जाये तो वह घर असूझता हो जाता है।

साधु-साध्वी बहर रहे हो उस समय दूध आदि में फूंक देने पर।

बहराते समय सचित्त हरियाली पानी आदि का संघट्टा होने पर।

**प्रश्न ११. ऊंचे से गिराते-गिराते पानी-गौचरी आदि बहराने से घर असूझता क्यों हो जाता है ?**

**उत्तर**—ओधे (रजोहरण) की डांडी जितनी ऊंचाई से अधिक ऊपर से मूंग के दाने

जितनी वस्तु भी गिरे तो वायुकाय की हिंसा हो सकती है इसलिए असूझता माना जाता है।

प्रश्न १२. आलमारी, टेबल आदि उठाऊ, हिलने वाली चीज के भीतर या ऊपर सचित्त या अचित्त दोनों वस्तुएं पड़ी हो तो उनमें से अचित्त वस्तु साधु को बहरा सकते हैं ?

उत्तर—नहीं, अचित्त वस्तु को लेते समय सचित्त वस्तु भी हिल सकती है, इसीलिए उसे लेना सम्मत नहीं है।

## १८. शय्यातर प्रकरण

**प्रश्न १. शय्यातर किसे कहते हैं? क्या साधु शय्यातर के घर से आहारादि ले सकते हैं?**

**उत्तर—**जिस घर में साधु कुछ समय एवं दिन व रात के लिए भी रहता है तो वह शय्यातर कहलाता है लेकिन जिस घर में दो रात्री या उससे अधिक प्रवास हो वहां दूसरे दिन उस घर से या उसका नमक-पानी शामिल हो उसके घर से—१. अशन २. पान ३. खादिम ४. स्वादिम ५. वस्त्र ६. पात्र ७. कम्बल ८. पादप्रोज्छन ९. सूई १०. कैंची ११. नखच्छेदनी १२. कर्णशोधनी आदि कुछ भी नहीं ले सकते, लेकिन उसका पुत्र-पुत्री आदि पारिवारिक दीक्षा ले तो दीक्षार्थी के साथ वस्त्र-पात्र आदि लिए जा सकते हैं।<sup>१</sup> शय्यातर का घर धारे बिना गोचरी भी नहीं जा सकते। तीन-चार व्यक्तियों का मकान हो तो उनमें से एक को शय्यातर स्थापित करके दूसरों का आहार आदि ले सकते हैं। यदि तीनों का एक साथ भोजन बनने में खर्चा सम्मिलित होने के कारण गोचरी नहीं कर सकते हैं।

**प्रश्न २. शय्यातर की क्या-क्या वस्तुएं ले सकते हैं?**

**उत्तर—**प्लास्टिक के बर्तन, पाट-बाजोट, खरल, हमामदस्ता, घास का बिछौना, हाडी बर्तन, लोढ़ी, एनीमा-पिचकारी, कागज, रेत, ढगलिया, दांत कुरेदनी आदि-आदि प्रातिहारिक वस्तु ले सकते हैं।<sup>२</sup>

**प्रश्न ३. जिस दिन विहार हो क्या उस दिन शय्यातर की गोचरी की जा सकती है?**

**उत्तर—**हां, उस दिन गोचरी कर सकते हैं। क्योंकि वहां रात में रहना नहीं है।<sup>३</sup>

१. नि. भा. गा. ११५१-५४ चू.

२. प्रवचनसारोद्धार १२

३. नि. भा. गा. ११५१-५४ चू.

४. मर्यादावली

## १९. लब्धि, प्रतिमा प्रकरण

प्रश्न १. लब्धि किसे कहते हैं?

उत्तर—शुभ अध्यवसाय तथा विशिष्ट तप-संयम के आचरण से तत्तत्कर्म का क्षय एवं क्षयोपशम होने से आत्मा में जो विशेष-शक्ति उत्पन्न होती है, उसका नाम लब्धि है। लब्धि-संपन्न मुनि लब्धिधारी कहलाते हैं। लब्धियां अद्वाईस मानी गई हैं।<sup>१</sup>

प्रश्न २. अद्वाईस लब्धियों को संक्षेप में समझायें।

उत्तर—१. आमषौषधिलब्धि—इस लब्धि वाले मुनियों का स्पर्श औषधि का काम करता है यानि उनके हाथ-पैर आदि का स्पर्श होते ही रोगी नीरोग बन जाता है।

२. विप्रुडौषधिलब्धि—विप्रुड का अर्थ मल-मूत्र है। इस लब्धि वाले मुनि के मल-मूत्र औषधि के समान रोग को शांत करने में समर्थ हो जाते हैं।

३. खेलौषधिलब्धि—इस लब्धिवाले योगी का खेल-श्लेष्म रोग को शांत करता है।

४. जल्लौषधिलब्धि—इस लब्धिवाले साधु से जल्ल अर्थात् कान-मुख-जिह्वा आदि का मैल रोगों का नाश करता है।

५. सर्वौषधिलब्धि—इस लब्धि वाले महात्मा के मल-मूत्र-नख और केश आदि सभी चीजें औषधि का रूप धारण कर लेती हैं एवं स्पर्श मात्र से रोगों को नष्ट करने लगती हैं।

६. संधिन्नश्रोतोलब्धि—इस लब्धि से सम्पन्न योगी शरीर के प्रत्येक अवयव से सुनने लगते हैं अथवा एक इन्द्रिय का काम दूसरी इन्द्रिय से करने लगते हैं (जैसे—कानों से देखना, आंखों से सुनना, नाक से स्वाद लेना आदि-आदि) अथवा बारह योजन में फैली हुई चक्रवर्ती की सेना में

---

१. (क) प्रवचनसारोद्धार २७० द्वार गाथा (ख) स्थानांग वृत्ति प. १५१५  
१४६२ से १५०५

एक साथ बजने वाले शंख-भेरी-काहला-ढक्का-घण्टा आदि वाद्य-विशेषों के शब्द पृथक्-पृथक् रूप से सुनने में समर्थ हो जाते हैं।

७. अवधिज्ञानलब्धि—इस लब्धि से संपन्न मुनि अवधिज्ञानी होते हैं।

८, ९. ऋजुमति-विपुलमतिलब्धि—इन लब्धियों वाले मुनि मनःपर्यवज्ञानी होते हैं। मनःपर्यवज्ञानी दो प्रकार के हैं—ऋजुमति-मनःपर्यवज्ञानी और विपुलमति-मनःपर्यवज्ञानी। ऋजुमति मनःपर्यवज्ञानी मनुष्यलोकवर्ती संज्ञि-पञ्चेन्द्रियों के मानसिक-विचार सामान्य रूप से जानते हैं एवं विपुलमति-मनःपर्यवज्ञानी विशेष रूप से जानते हैं तथा निश्चित रूप से केवलज्ञानी बनते हैं।

१०. चारणलब्धि—इस लब्धिवाले मुनि आकाश में गमन करने की शक्ति से सम्पन्न होते हैं। ये दो प्रकार के होते हैं—जंघाचारण एवं विद्याचारण।<sup>१</sup> जंघाचारणलब्धि विशिष्टचारित्र व निरन्तर अट्टम-अट्टम तप के प्रभाव से प्राप्त होती है और विद्याचारणलब्धि विद्या के कारण उपलब्ध होती है (इसके धारक मुनि विद्याधर होते हैं) इसमें निरन्तर छट्ट-छट्ट तप किया जाता है।

जंघाचारण मुनि जंघा की विशेष-शक्ति से एक ही उड़ान में रुचक (तेरहवें) द्वीप तक जा सकते हैं किन्तु आते समय उन्हें दो उड़ानें भरनी पड़ती हैं। पहली उड़ान से नन्दीश्वर (आठवें) द्वीप पहुंचते हैं एवं दूसरी उड़ान भर कर अपने निवास स्थान पर आते हैं। ऊपर की ओर उड़ान भरते समय वे एक ही उड़ान में मेरुपर्वत के शिखर पर रहे हुए पाण्डुक वन तक चले जाते हैं लेकिन लौटते समय पहली उड़ान से नन्दन वन में आते हैं और फिर दूसरी उड़ान भर कर अपने स्थान पर पहुंच जाते हैं।

विद्याचारण मुनि विद्या की सहायता से नन्दीश्वर द्वीप तक जाते हैं। जाते समय वे दो उड़ाने भरते हैं—पहली उड़ान से मानुषोत्तरपर्वत तक पहुंचते हैं और दूसरी उड़ान से नन्दीश्वरद्वीप प्राप्त करते हैं किन्तु लौटते समय एक ही उड़ान में स्वस्थान पहुंच जाते हैं। ऊपर जाते समय पहली उड़ान में नन्दनवन एवं दूसरी उड़ान में पाण्डुकवन पहुंचते हैं तथा आते समय एक ही उड़ान में अपने स्थान पर आ जाते हैं।

विद्याचारण मुनि की शीघ्र गति उस देवता के समान है, जो तीन चुटकी बजाने जितनी देर में जम्बूद्वीप की तीन प्रदक्षिणा कर आता है किन्तु जंघाचारण मुनि की गति इससे सात गुनी अधिक है।

चारणलब्धि वाले साधुओं के और भी कई भेद हैं। यथा— जलचारण, फलचारण, पुष्पचारण, पत्रचारण, अग्निशिखा-चारण, धूमचारण, मेघचारण, ज्योतिरश्मिचारण, वायुचारण आदि। ये क्रमशः जल-फल-पुष्प-पत्र आदि का आलम्बन लेकर उनके जीवों की विराधना न करते हुए चल सकते हैं। जलचारण आदि मुनि लब्धियों का प्रयोग प्रायः नहीं करते।

११. आशीविषलब्धि—इस लब्धि वालों की आशी अर्थात् दाढ़ा में महान् विष होता है। इनके दो भेद हैं—कर्मआशीविष और जातिआशीविष।<sup>१</sup>

तप अनुष्ठान एवं अन्य गुणों के प्रभाव से जो शाप आदि देकर दूसरों को मार सकते हैं, वे कर्मआशीविष कहलाते हैं। इस लब्धि के धारक पञ्चेन्द्रिय-तिर्यज्व-मनुष्य ही होते हैं। देवता जो शाप आदि देते हैं, वह इस लब्धि से नहीं देते किन्तु देवभव-सम्बन्धी-विशेषशक्ति से देते हैं।

जातिआशीविष के चार भेद हैं—बिच्छु, मेंढक, सांप और मनुष्य। ये उत्तरोत्तर अधिक विषवाले होते हैं। बिच्छु का विष उत्कृष्ट अर्ध-भरत-क्षेत्र, मेंढक का विष सम्पूर्ण-भरतक्षेत्र सांप का विष जम्बूद्वीप एवं मनुष्य का विष ढाई-द्वीप-प्रमाणक्षेत्र (शरीर) को विषयुक्त बना सकता है।

१२. केवलज्ञानलब्धि—इस लब्धिवाले मुनि चार घाती-कर्मों का क्षय करके केवलज्ञानी बनते हैं एवं त्रिकालवर्ती सकल पदार्थों को स्पष्ट रूप से जानने-देखने लगते हैं।

१३. गणधरलब्धि—इस लब्धिवाले मुनि लोकोत्तर ज्ञान-दर्शन-चारित्र्य आदि गुणों के धारक तथा प्रवचन (तीर्थकर की वाणी) को पहले-पहल सूत्ररूप में गूँथने वाले होते हैं एवं गणधर कहलाते हैं। ये तीर्थकरों के प्रधानशिष्य और गणों के नायक होते हैं।

१४. पूर्वधरलब्धि—इस लब्धिवाले योगी जघन्य दसपूर्वधर एवं उत्कृष्ट चौदहपूर्वधर होते हैं। दसपूर्व से कम पढ़े हुए व्यक्ति पूर्वधरलब्धियुक्त नहीं माने जाते।

१५. अर्हल्लब्धि—इस लब्धिवाले अशोकवृक्ष आदि आठ महाप्रतिहायों से सम्पन्न तीर्थकरदेव होते हैं।

१६. चक्रवर्तिलब्धि—इस लब्धिवाले चौदहरत्न-नवनिधान के धारक एवं छहः खंडों के स्वामी चक्रवर्ती होते हैं। इनमें चालीस लाख अष्टापद

जितना बल होता है।

१७. बलदेवलब्धि—इस लब्धिवाले व्यक्ति बलदेव कहलाते हैं। इनमें दस लाख अष्टापद जितना बल होता है।

१८. वासुदेवलब्धि—इस लब्धिवाले बलदेव के विमातृज छोटे भाई होते हैं एवं वासुदेव कहलाते हैं। इनका बल और राज्य चक्रवर्ती से आधा होता है।

चक्रवर्ती, बलदेव, वासुदेव हजारों स्त्रियों के स्वामी होते हैं। इनके पास अनेक रूप बनाने की शक्ति होती है। अतः शयन के समय प्रत्येक स्त्री के पास इनका एक-एक रूप विद्यमान रहता है—ऐसा माना गया है।

१९. क्षीरमधुसर्पिराश्रवलब्धि—इस लब्धि वाले वक्ता के वचन विशिष्ट प्रकार के दूध-मधु एवं घृत के समान श्रोताजनों के तन-मन को आनन्द देने वाले हो जाते हैं अथवा इस लब्धि से सम्पन्न योगी के पात्र में पड़ा हुआ रूखा-सूखा आहार भी दूध-मधु एवं घृतवत् स्वादिष्ट एवं पुष्टिकारक बन जाता है।

२०. कोष्ठकबुद्धिलब्धि—इस लब्धि वाले के मस्तिष्क में डाला हुआ गम्भीरज्ञान विधिपूर्वक कोठे में रखे हुए धान्य की तरह लम्बे समय तक नष्ट नहीं होता यानि उक्त लब्धिवाले स्थिरबुद्धि बन जाते हैं।

२१. पदानुसारिणीलब्धि—इस लब्धि से संपन्न व्यक्ति सूत्र का एक पद सुनकर उससे संबंधित अनेक पदों को अपने-आप जान लेता है।

२२. बीजबुद्धिलब्धि—इस लब्धि के द्वारा बीजरूप-अर्थप्रधान एक ही पद सीखकर बहुत-सा अर्थ स्वयं जान लिया जाता है। यह लब्धि सर्वोत्कृष्ट गणधरों में पाई जाती है। वे भगवान के मुख से उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य-रूप तीनों पदों को सुनकर सम्पूर्ण-द्वादशांगी की रचना कर देते हैं।

२३. तेजोलेश्यालब्धि—इस लब्धिवाले पुरुष मुख से तीव्र तेज (अग्नि) निकाल कर अनेक योजन प्रमाण (उत्कृष्ट सोलह देश) क्षेत्र में अवस्थित वस्तुओं को क्रोधवश जला डालते हैं। गोशालक ने इसी लब्धि द्वारा भगवान के सामने दो मुनियों को भस्म किया था। भगवती श. १६ के अनुसार इस लब्धि की प्राप्ति करने वाले साधक को छह मास तक बेले-बेले पारणा एवं पारणे में मुष्टिप्रमाण उड़द के बाकुले और एक चुल्लू पानी लेकर रहना होता है तथा निरन्तर ऊर्ध्वभुज होकर सूर्य के सामने आतापना लेनी पड़ती है। यह तेजोलेश्या की साधना विधि है अनेक मुनि

अपने विशिष्ट तपोबल से भी यह लब्धि उपलब्ध कर लेते हैं। गौतम स्वामी जैसे महामुनियों को घोर-तपस्या आदि द्वारा यह लब्धि अपने-आप प्राप्त हो जाती है।

२४. आहारकलब्धि—प्राणीदया, तीर्थकर भगवान के दर्शन तथा संशयनिवारण आदि कारणों से अन्य क्षेत्रों में विराजमान तीर्थकरों के पास भेजने के लिए चौदहपूर्वधारी मुनि जो अति-विशुद्ध-स्फटिकरत्न के समान एक हाथ का पुतला निकालते हैं और उसकी सहायता से अपना इष्टकार्य सिद्ध करते हैं। वे मुनि आहारकलब्धिधारी कहलाते हैं। कार्य-सिद्धि के बाद वह पुतला मुनि के शरीर में प्रविष्ट हो जाता है। यह समूची क्रिया अंतर्मुहूर्त में सम्पन्न कर ली जाती है।

२५. शीतलतेजोलेश्यालब्धि—इस लब्धि वाले योगी करुणाभाव से प्रेरित होकर उष्णतेजोलेश्या से जलते हुए अपने अनुग्रहपात्र व्यक्ति को बचाने के लिए शीतलतेज-विशेष को निकालते हैं। भगवान महावीर ने छद्मस्थ-अवस्था में इसी लब्धि द्वारा गोशालक को बचाया था।

२६. वैकुर्विकदेहलब्धि—इस लब्धिवाले व्यक्ति विविध प्रकार के रूप बनाने में समर्थ होते हैं। देवों में यह लब्धि स्वाभाविक होती है और मनुष्य-तिर्यचों का विशेष तपस्या द्वारा प्राप्त हो सकती है।

२७. अक्षीणमहानसलब्धि—इस लब्धिवाले योगी भिक्षा में लाये हुए थोड़े-से आहार से सैकड़ों-हजारों साधुओं को भोजन करा देते हैं फिर भी वह ज्यों का त्यों अक्षीण बना रहता है। लब्धिधारी के भोजन करने पर ही वह समाप्त होता है। (महानस का अर्थ रसोई-भोजन है)।

२८. पुलाकलब्धि—इस लब्धिवाले मुनि संघादि-रक्षा के लिए चक्रवर्ती की सेना को भी नष्ट कर डालते हैं।

**प्रश्न ३. अट्टाईस लब्धियां किन-किन को उपलब्ध होती हैं?**

उत्तर—भव्य पुरुषों में सभी लब्धियां हो सकती हैं। भव्य स्त्रियों में अठारह हो सकती हैं। निम्नलिखित दस नहीं होतीं—१. अर्हल्लब्धि (अच्छेरा गिनती में नहीं) २. चक्रवर्ती ३. वासुदेव ४. बलदेव ५. संभिन्नश्रोत ६. चारण ७. पूर्वधर ८. गणधर ९. आहारक एवं १०. पुलाकलब्धि।<sup>१</sup>

**प्रश्न ४. अट्टाईस लब्धियों के अतिरिक्त क्या और भी लब्धियां हैं?**

उत्तर—अणुत्व-महत्त्व-लघुत्व-गुरुत्व-प्राप्ति-प्राकाम्य-ईशित्व-अप्रतिघातित्व

१. प्रवचनसारोद्धार द्वार २७०



अन्तर्धान, कामरूपित्व आदि और भी कई लब्धियां मानी गई हैं।<sup>१</sup>

**प्रश्न ५. साधु के कितनी प्रतिमाएं होती है ?**

उत्तर—१२ प्रतिमाएं।<sup>२</sup>

**प्रश्न ६. प्रतिमा का अर्थ क्या है? आगमों में कौन-कौनसी प्रतिमाएं उल्लिखित हैं ?**

उत्तर—प्रतिमा का अर्थ प्रतिज्ञा है। शास्त्रों में समाधिप्रतिमा विवेक-प्रतिमा, उपधानप्रतिमा, प्रतिसंलीनताप्रतिमा, एकलविहार-प्रतिमा, चन्द्रप्रतिमा, यवमध्यप्रतिमा, वज्रमध्यप्रतिमा, भद्रप्रतिमा, महाभद्रप्रतिमा, सुभद्रप्रतिमा, सर्वतोभद्र श्रुतप्रतिमा, चारित्रप्रतिमा, वैयावृत्त्यप्रतिमा, सप्तपिण्डैषणा-प्रतिमा, सप्तपानैषणाप्रतिमा, कायोत्सर्गप्रतिमा, आदि-आदि अनेक प्रतिमाओं का उल्लेख है।<sup>३</sup>

**प्रश्न ७. प्रतिमाओं का कालमान कितना निर्धारित है ?**

उत्तर—एक मास से लेकर सात मास तक सात प्रतिमाएं होती हैं। अर्थात् प्रत्येक प्रतिमा एक-एक मास की होती है। आठवीं-नौवीं-दशवीं ये तीनों प्रतिमाएं सात-सात दिन-रात की होती हैं। ग्यारहवीं एक दिन-रात की और बारहवीं केवल एक रात की होती है।<sup>४</sup>

**प्रश्न ८. क्या साध्वियां प्रतिमाएं धार सकती हैं ?**

उत्तर—साध्वियां उपर्युक्त भिक्षु-प्रतिमाएं नहीं धार सकतीं। लकुटासन-उत्कटुकासन-वीरासन आदि आसन नहीं कर सकतीं। गांव के बाहर सूर्य के सामने हाथ ऊंचा कर आतापना नहीं ले सकतीं, उपाश्रय के अन्दर पर्दा लगाकर नीचे हाथ रख कर ले सकती हैं। अचेल एवं अपात्र (जिनकल्प) अवस्था नहीं धार सकतीं।<sup>५</sup>

**प्रश्न ९. प्रतिमाओं का विधि विधान किस प्रकार है ?**

उत्तर—पहली प्रतिमा में एक दत्ति आहार की और एक दत्ति पानी की ली जाती है। यावत् सातवीं प्रतिमा में सात दत्ति आहार की एवं सात दत्ति पानी को ली जा सकती है। प्रतिमाधारी मुनि दूसरे श्रमण-ब्राह्मणादि के भिक्षा ले जाने के बाद गोचरी जाते हैं। दिन के तीन भाग करके किसी एक भाग में जाते हैं। पेटा-अर्धपेटा आदि छह प्रकार की गोचरी में से किसी एक

१. प्रवचनसारोद्धार द्वार २७०

४. दसाओ ७/३

२. दसाओ ७/१

५. बृहत्कल्प ५/१९ से २५

३. भिक्षु आगम शब्द कोश भाग-२

प्रकार की गोचरी करते हैं।

वे अज्ञातकुल से व एक व्यक्ति के लिए बने हुए भोजन में से थोड़ा-सा लेते हैं। वह भी एक पग देहली के अन्दर एवं एक पग देहली के बारह हो, ऐसे दाता के हाथ से लेते हैं।

ठहरने के विषय में यह नियम है कि प्रतिमाधारी मुनि ज्ञात क्षेत्र में एक रात और अज्ञात क्षेत्र में एक या दो रात ठहर सकते हैं। अधिक जितने भी दिन ठहरें उतने ही दिनों का उन्हें छेद या तप आता है।<sup>१</sup>

**प्रश्न १०. विशेष प्रतिमाधारी मुनि कब-कब बोल सकता है ?**

उत्तर—१. याचनी—आहारादि वस्तु मांगते समय। २. पृच्छनी—मार्ग आदि पूछते समय। ३. अनुज्ञापनी—स्थान आदि की आज्ञा लेते समय। ४. पृष्ठव्याकरणी—प्रश्न का उत्तर देते समय।<sup>२</sup>

**प्रश्न ११. प्रतिमाधारी मुनि किस प्रकार के उपाश्रय में ठहर सकते हैं ?**

उत्तर—प्रतिमाधारी मुनि केवल तीन प्रकार के उपाश्रय (स्थान) में ठहर सकते हैं—बाग के मध्यवर्ती स्थान में, केवल ऊपर से छाये हुए स्थान छत्री आदि में तथा वृक्ष के मूल या वृक्ष के नीचे बने हुए किसी युद्ध गृह स्थान में।<sup>३</sup>

**प्रश्न १२. प्रतिमाधारी कितने प्रकार की शय्या काम में ले सकते हैं ?**

उत्तर—वे केवल तीन प्रकार की शय्या ले सकते हैं—पृथ्वी की शिला (पत्थर की शिला), काष्ठ का पट्टा एवं पहले से पड़ा हुआ दर्भ (घास-विशेष) आदि का संथारा।<sup>४</sup>

**प्रश्न १३. प्रतिमाधारी की क्या-क्या विशेषताएं होती हैं ?**

उत्तर—प्रतिमाधारी मुनि जहां ठहरे हों, वहां यदि कोई स्त्री-पुरुष आ जाए तथा कोई आग लगा दे तो भी उन्हें वहां से निकलना नहीं कल्पता। किन्तु यदि कोई भुजा पकड़ कर बाहर निकाल दे तो जा सकते हैं।

विहार करते समय यदि उनके पैरों में कंकर-पत्थर, कांटा-कांच-लकड़ी आदि लग जाए तथा आंखों में मच्छर आदि जीव, बीज या धूली गिर जाए तो उन्हें निकालना नहीं कल्पता। (जीव हिंसा की संभावना हो तो बात अलग है।)

विहार करते समय जहां भी दिन अस्त हो जाए, उन्हें वहीं ठहरना पड़ता है, चाहे जल (सूखा जलाशय या जल का किनारा) हो, स्थल हो,

१. दसाओ ७/६ से २६ तक

३. दसाओ ७/१०

२. दसाओ ७/६

४. दसाओ ७/१३

दुर्गमस्थान हो, नीचा-स्थान हो या विषमस्थान, गड्ढा हो या गुफा। कारणवश शरीर से पृथ्वी आदि सच्चित्त रज लग जाए तो जब तक वे प्रस्वेद आदि से स्वयं विध्वंस्त न हो जाए तब तक उन्हें आहार-पानी के लिए जाना नहीं कल्पता।

उन्हें शीत या उष्ण जल से हाथ-पैर-दांत-आंख-मुख आदि धोना नहीं कल्पता। अशुचि पदार्थ लग जाने पर धो सकते हैं।

चलते समय सामने घोड़ा-हाथी, बैल-सूअर-कुत्ता या व्याघ्र आदि आ जाएं तो डरकर उन्हें एक कदम भी पीछे हटना नहीं कल्पता। लेकिन हिरण आदि भद्र-जीव यदि उनसे डरकर भागते हों तो चार कदम पीछे हट सकते हैं।

उन्हें ठंडे स्थान से गर्म स्थान में एवं गर्म स्थान से ठंडे स्थान में जाना नहीं कल्पता। जहां बैठे हों वहीं सर्दी-गर्मी सहनी होती है।

प्रथम सात प्रतिमाओं में उपर्युक्त सभी नियमों का पालन आवश्यक है। केवल आहार-पानी की एक-एक दत्ति क्रमशः बढ़ती जाती है। (दत्ति का तात्पर्य—एक बार में दिये जाने वाला आहार अथवा पानी)

आठवीं प्रतिमा सात दिन-रात की होती है। उसमें चौविहार एकान्तर तप किया जाता है एवं ग्रामादिक के बाहर उत्तानासन (आकाश की ओर मुंह करके लेटकर) पार्श्वीसन (एक पासे से लेटकर) या निषद्यासन (पैरों को बराबर रखते हुए बैठकर) से कायोत्सर्ग किया जाता है। देव-मनुष्य-तिर्यञ्च संबंधी उपसर्ग होने पर चलित होना नहीं कल्पता। मूल-मूत्र की शंका का निवारण किया जा सकता है। पारणे में आहार-पानी की आठ-आठ दत्तियां ली जा सकती हैं। शेष नियम पूर्ववत् हैं।

नौवीं प्रतिमा में बेले-बेले पारणा एवं दण्डासन, लकुटासन और उत्कटुकासन से कायोत्सर्ग किया जाता है।

दसवीं प्रतिमा में तेले-तेले पारणा एवं गोदोहासन, वीरासन व आम्रकुब्जासन से कायोत्सर्ग होता है। दूसरी विधियां पूर्ववत् है किन्तु आहार-पानी की दत्तियां नौ-नौ एवं दस-दस ली जा सकती हैं। ये दोनों प्रतिमाएं भी सात-सात दिन-रात की होती हैं।

ग्यारहवीं प्रतिमा एक दिन-रात की होती है। इसमें चौविहार बेला करके कायोत्सर्गासन में खड़ा होकर ध्यान किया जाता है। शेष सभी नियम पूर्ववत् हैं।

बारहवीं प्रतिमा एक रात की होती है। इसमें चौविहार तेला करके एक पुद्गल पर दृष्टि टिकाकर, नेत्रों को न हिलाते हुए कायोत्सर्ग आसन से ध्यान किया जाता है। इसकी आराधना करते समय देव-मनुष्य-तिर्यञ्च संबंधी उपसर्ग प्रायः होते ही हैं। उपसर्गों से घबराकर विचलित होने वाले साधु उन्माद को प्राप्त होते हैं (पागल बन जाते हैं) या लम्बे समय के लिए भयंकर रोग से पीड़ित हो जाते हैं अथवा केवलिभाषित धर्म से भ्रष्ट हो जाते हैं। समतापूर्वक इसकी आराधना करने वाले मुनि अवधिज्ञान, मनःपर्यवज्ञान, केवलज्ञान—इन तीनों में से कोई एक ज्ञान अवश्य प्राप्त करते हैं।<sup>१</sup>

## २०. व्यवहार प्रकरण

**प्रश्न १. साधु-साध्वियों की श्रावक क्या सेवा कर सकता है ?**

उत्तर—दर्शन करना, वंदना करना, सुखसाता पूछना, निकट बैठकर सत्संग करना, ज्ञान प्राप्त करना, आहार, पानी, वस्त्र, पात्र आदि बहराना। तथा साधु-साध्वियों के लिए आवश्यक वस्तु, जो स्वयं के पास नहीं है, कि तलाश (गवेषणा) करना, कल्पित (नियमानुसार) वस्तु, आहार, पानी, दवा आदि की भी दलाली करना, साथ में जाना आदि।

**प्रश्न ४. साधु-साध्वी घर पर पधारें तब श्रावक का क्या कर्तव्य है ?**

उत्तर—देखते ही तत्काल वंदना करें, 'मत्थण वंदामि' बोले, पांच सात कदम सामने जाए, यह निवेदन करे—कृपा कराइये। वापस जाते समय विनम्रता पूर्वक कृतज्ञता ज्ञापित करे—आपने बड़ी कृपा की, शुभ दृष्टि की फिर कृपा कराना आदि सम्मान सूचक शब्दों का प्रयोग करे तथा बाहर तक पहुंचाने जाए।

**प्रश्न ५. साधु-साध्वियों को सर्प काटने पर कल्पनीय उपचार कैसे किया जाता है ?**

उत्तर—मंत्रवादी सर्प काटे हुए पुरुष या स्त्री का मंत्रों द्वारा यदि सहज में उपचार कर रहा हो तो स्थविरकल्पिक मुनि जाकर बैठ सकते हैं एवं अपना इलाज करवा सकते हैं, किन्तु जिनकल्पिक नहीं करवा सकते।<sup>१</sup>

**प्रश्न ६. क्या साधु रात्रि के समय कथा कर सकते हैं ?**

उत्तर—पुरुषों में तो विधिपूर्वक कथा की जा सकती है किन्तु यदि अकेली स्त्रियों की सभा हो तो साधुओं को उस समय प्रमाणरहित कथा करने की मनाही है।<sup>२</sup> प्रमाण कथा या काल की अपेक्षा से समझना चाहिए। कथा की अपेक्षा ऐसी कथा नहीं कहनी चाहिए जो स्त्री सभा में शोभास्पद न हो। यदि केवल पुरुषों की सभा हो तो साध्वियों के लिए भी साधुओं की तरह

कथा एवं काल के विषय में ध्यान रखना आवश्यक है।

**प्रश्न ७. क्या साधु गृहस्थों के आसन पर बैठ सकते हैं ?**

उत्तर—पाट, बाजोट, कागज, गत्ते एवं निर्जीव तृण-घास आदि तो विधिपूर्वक गृहस्थों से जाचकर साधु उन पर बैठ या सो सकते हैं।

**प्रश्न ८. भावनाएं क्या है ?**

उत्तर—१. अनित्यभावना—भरतचक्रवर्तिवत्<sup>१</sup> पदार्थों की अनित्यता का चिंतन करना। २. अशरण भावना—अनाथीमुनिवत्<sup>२</sup> संसार में कोई शरणभूत नहीं है, ऐसा सोचना। ३. संसारभावना—मल्लिप्रभुवत्<sup>३</sup> संसार की असारता पर विचार करना। ४. एकत्वभावना—नमिराजर्षिवत्<sup>४</sup> यह चिंतन करना कि मैं अकेला जन्मा हूँ और अकेला ही मरूंगा। ५. अन्यत्व-भावना—सुकोशल मुनिवत्<sup>५</sup> ऐसे सोचना कि ज्ञानादि गुणों के अतिरिक्त मेरा कुछ भी नहीं है। तन-धन-पुत्र-कलत्रादि सब पर वस्तुएं हैं। ६. अशुचि भावना—सनत्कुमार चक्रवर्तिवत्<sup>६</sup> यों विचारना कि यह शरीर मूल-मूत्र आदि अशुचिपदार्थों का भंडार है एवं रोगों की खान है। ७. आस्रवभावना—समुद्रपाल की तरह<sup>७</sup> हिंसा आदि आस्रवों को जन्म-मरण की वृद्धि करनेवाले एवं आत्मा को दुःखी बनानेवाले मानना। ८. संवरभावना—मिथ्यात्वादि आस्रवों को रोकने के लिए संभावित उपायों का अनुशीलन करना एवं गजसुकुमाल-मुनिवत्<sup>८</sup> आत्मा का संवरण करने का प्रयत्न करना। ९. निर्जराभावना—कृतकर्मों की निर्जरा (क्षय) हुए बिना कभी दुःखों से छुटकारा नहीं होता—ऐसे सोचकर अर्जुनमाली-मुनिवत्<sup>९</sup> उपसर्गों को समभाव से सहन करना १०. धर्म-भावना—दान-शील-तप-भावना रूप का ध्यान करना एवं धर्मरक्षा के लिए धर्मरुचिअनगारवत्<sup>१०</sup> हंसते-हंसते देह त्याग देना। ११. लोकभावना—शिवराज-ऋषिवत्<sup>११</sup> लोक के स्वरूप का चिंतन करते हुए वैराग्य को प्राप्त होना। १२. बोधिभावना—सम्यग्दर्शन की दुर्लभता का चिंतन करना एवं श्री ऋषभदेवभगवान् के अट्टानवें पुत्रों की तरह<sup>१२</sup> सम्यक्त्व का महत्त्व समझकर वैराग्यवान् बनना, संयम लेना।

१. उत्तरा. १८

२. उत्तरा. २०

३. ज्ञाता. ८

४. उत्तरा. ६

५. उत्तरा. २१

६. अन्तकृतदशा वर्ग ३, अ. ८

७. अन्तकृतदशा वर्ग ३, अ. ३

८. ज्ञाता. अ. १६

९. भगवती ११/६

१०. सूत्रकृतांग २/१/१

**प्रश्न १२. साधु-साध्वियों को नमस्कार करने के लिए क्या बोलना चाहिए ?**

**उत्तर—**‘मत्थेण वंदामि’—ऐसा बोलना चाहिए, मत्थेण वंदामी का तात्पर्य है। मैं मस्तक झुकाकर वन्दना करता हूँ इसी प्रकार आचार्य युवाचार्य हो तो मत्थेण वंदामी भी बोले साथ में वन्दे गुरुवरम्, वन्दे आचार्यवरम्, वन्दे युवाचार्यवरम्।

**प्रश्न १४. जैन परम्परा में वंदना की विधि क्या है ?**

**उत्तर—**जैन संस्कृति में पंचांग नमाकर वंदन करने की विधि है।<sup>१</sup>

**प्रश्न १५. पंचांग कौन-कौन से हैं ?**

**उत्तर—**दो हाथ, दो पैर और एक सिर—ये शरीर के पांच अंग हैं। वंदन मुद्रा में दोनों हाथ जोड़कर सिर को भूमि का स्पर्श करते हुए वंदन करना चाहिए।

**प्रश्न १६. प्रत्युत्तर में साधु क्या कहते हैं ?**

**उत्तर—**जे भाई। मूल शब्द जिय वर्तमान में उसका अपभ्रंश हो गया जे।

**प्रश्न १७. जे का क्या अर्थ है ?**

**उत्तर—**जेय का मूल शब्द ‘जिय’ है। यह रायपसेणिय सूत्र में आया है। ‘जिय’ शब्द जीत व्यवहार का प्रतीक है। जीत का अर्थ है तुम्हारा कर्तव्य। कालान्तर में जिय से जेय शब्द व्यवहृत हो गया।

**प्रश्न १८. ‘सिंघाड़ा’ शब्द का अर्थ क्या है ?**

**उत्तर—**साधु या साध्वियों के ग्रुप (समूह) को सिंघाड़ा कहते हैं। उसके मुखिया को सिंघाड़पति (अग्रणी) कहते हैं।

**प्रश्न १९. सिंघाड़ा में कम से कम कितने साधु-साध्वियां होने आवश्यक होते हैं ?**

**उत्तर—**कम से कम दो साधु और कम से कम तीन साध्वियां होती हैं। इससे अधिक भी रहते हैं। उनकी सीमा निश्चित नहीं है।

**प्रश्न २०. ठाणा शब्द का क्या अर्थ है ?**

**उत्तर—**ठाणा शब्द साधु साध्वियों का संख्यावाचक शब्द है। साधु साध्वियों के छह ठाणे है इसका अर्थ हुआ—छह साधु अथवा छह साध्वियां हैं।

१. शीघ्र बोध भाग ३ पृष्ठ १८२ के आधार पर

## २१. चिकित्सा प्रकरण

**प्रश्न १. साधु-साध्वियों को औषधि के लिए निवेदन कैसे किया जा सकता है?**

**उत्तर—**अपने घर या दुकान आदि में यदि एलोपैथिक, होमियोपैथिक और आयुर्वेदिक औषधियां सूझती हो तो यह निवेदन किया जा सकता है। हमारे यहां पर औषध उपलब्ध है आप कृपा करवाना।

**प्रश्न २. उपरोक्त औषध के अतिरिक्त क्या सामान्य वस्तुएं दवाई के रूप में काम में ली जा सकती है।**

**उत्तर—**आवश्यकता पड़ने पर सोंठ, पिसी हुई काली मिर्च, काला-नमक, हल्दी, पिसा हुआ धनिया, सिका हुआ जीरा, उकाली का पावडर आदि घरेलू दवाई भी काम में ली जा सकती है।

**प्रश्न ३. यदि अपेक्षित दवाई गृहस्थ के घर में न हो तो क्या करना चाहिए?**

**उत्तर—**उस समय अन्य घरों में अथवा दुकान में तलाश करनी चाहिए। कहीं हों तो साधु-साध्वियों को बताना चाहिए, खरीदकर या लाकर नहीं बहराना चाहिए। विशेष परिस्थिति वश क्रीत-आनीत लेने पर साधु-साध्वियों को प्रायश्चित्त लेना होता है।

**प्रश्न ४. क्या दवाई के रूप में अथवा अन्य किसी कारण वश साधु-साध्वियों को जरूरत की वस्तु ठिकाने (प्रवास-स्थान) लाकर बहरा सकते हैं?**

**उत्तर—**नहीं बहरा सकते। केवल उन्हें बतला सकते हैं, वे स्वयं ही जाकर अपेक्षित वस्तु बहरते हैं।

**प्रश्न ५. क्या पक्का नमक, काला नमक, जीरा आदि भी पांडिहारिय ले सकते हैं?**

**उत्तर—**हां, दवा के रूप में ले सकते हैं।



**प्रश्न ६. क्या साधु डॉक्टरों से दवा ले सकते हैं ?**

उत्तर—लेने योग्य (जिसमें मांस-अंडा आदि अभक्ष्य वस्तु न हो) दवा डॉक्टर, दवा-विक्रेता, वैद्य या हकीम यदि रोटी की तरह धर्मभावना से मुफ्त में दें तो ले सकते हैं लेकिन दवा की कीमत (पैसे) मांगते हो तो नहीं ले सकते। अपवाद वश लेने का काम पड़े तब प्रायश्चित्त लेना पड़ता है।

**प्रश्न ७. क्या साधु औषधालयों से दवा ले सकते हैं ?**

उत्तर—जो औषधालय धर्मार्थ चलाए जाते हैं, उनसे साधु दवा नहीं ले सकते क्योंकि दानार्थ-पुण्यार्थ बनाई हुई वस्तु लेने का निषेध है।<sup>१</sup>

**प्रश्न ८. उत्सर्ग मार्ग एवं अपवाद मार्ग से क्या तात्पर्य है ?**

उत्तर—उत्सर्ग मार्ग अर्थात् सामान्य विधि अपवाद मार्ग अर्थात् विशेष विधि। जैसे—गोचरी के लिए गया हुआ मुनि गृहस्थ के घर में बैठे नहीं यह उत्सर्ग मार्ग है। यह सभी के लिए सामान्य विधि है।

गोयरग्ग-पविट्टो उ, न निसीएज्ज कत्थई।

कहं च न पबंघेज्जा, चिट्ठित्ताण व संजए ॥<sup>२</sup>

जो वृद्ध है बीमार है, तपस्वी है वे गृहस्थ के घर में बैठ भी सकते हैं। यह अपवाद मार्ग है।

तिण्ह मन्नयरगस्स, निसेज्जा जस्स कप्पई।

जराए अभिभूयस्स, वाहियस्स तवस्सिणो ॥<sup>३</sup>

परन्तु दोनों ही मार्ग जिनाज्ञा में हैं।

**प्रश्न ९. क्या साधु चिकित्सा करवा सकता है ?**

उत्तर—यदि चिकित्सा निरवद्य हो तो साधु करवा सकता है लेकिन जहां ऐसी असह्य वेदना हो, जिससे आर्तध्यान होता है उसमें यदि वह सावद्य चिकित्सा करवाता है तो उसका प्रायश्चित्त स्वीकार करना होता है।

१. दसवे. ५/१/४७

२. दसवे. ५/२/८

३. दसवे. ६/५६

## २२. वस्त्र और प्रतिलेखन प्रकरण

प्रश्न १. साधु वस्त्र क्यों पहनते हैं ?

उत्तर—स्थविरकल्पिक साधु तीन कारणों से वस्त्र पहनते हैं—संयम-लज्जा की रक्षा के लिए, लोगों की घृणा से बचने के लिए तथा शीत-उष्ण एवं दंश-मशकादि के परीषह से आत्मरक्षा करने के लिए।<sup>१</sup>

प्रश्न २. साधु कितने प्रकार के वस्त्र ले सकते हैं ?

उत्तर—पांच प्रकार के वस्त्र ले सकते हैं एवं पहन सकते हैं। यथा—१. जांगमिक—त्रस जीवों के रोम आदि से बने हुए कम्बल आदि ऊनी वस्त्र। २. भांगिक—कीड़ों की लार से बने हुए रेशमी वस्त्र। ३. सानिक—सण-अम्बाड़ी आदि से बने हुए वस्त्र। ४. पोतिक—कपास के (सूती) वस्त्र। ५. तिरीड़पट्ट—तिरीड़-वृक्ष की छाल से बने हुए वस्त्र।<sup>२</sup>

प्रश्न ३. क्या साधु रात को वस्त्र जांच सकते हैं ?

उत्तर—गृहस्थ के हाथ से दिन में ही वस्त्र जाचने की विधि है। रात के समय जाचने की मनाही है किन्तु साधुओं के वस्त्र यदि चोर ले जाए एवं रात को वापस देना चाहे तो वह रात को भी लिया जा सकता है।<sup>३</sup>

प्रश्न ४. क्या साधु चातुर्मास में वस्त्र जांच सकते हैं ?

उत्तर—सामान्यतया नहीं जांच सकते। जांचने से प्रायश्चित्त आता है किन्तु चोरी हो जाय, वस्त्र अग्नि में जल जाय या साधु के शरीर में कुष्ठ आदि कोई भयंकर रोग उत्पन्न हो जाय, जिसमें वस्त्र की विशेष आवश्यकता हो, ऐसी परिस्थिति में चातुर्मास के समय वस्त्र जांचने की परम्परा है।

प्रश्न ५. साधु-साध्वी वस्त्र जांचने के लिए कितनी दूर जा सकते हैं ?

उत्तर—दो कोस तक इससे आगे जाएं तो उस दिन वापस नहीं आना चाहिए।<sup>४</sup>

१. स्थानां. ३/३/३४७

२. (क) स्थानां. ५/३/१६०

(ख) बृहत्कल्प २/२८

३. बृहत्कल्प १/४३

४. निशीथ १०/४१

५. आ. श्रु. २ अ. ५ उ. १/४

**प्रश्न ६. साधु मूल्यवान वस्त्र ले सकते हैं या नहीं ?**

उत्तर—बाईस तीर्थंकरों के साधु बहुमूल्य रत्नकंबल आदि लेते थे लेकिन भरत ऐरावत में वर्तमान जैन साधुओं के लिए (मृगचर्म-स्वर्णपटकूल आदि) लेने का आगम में निषेध है।<sup>१</sup> इसी प्रकार रंगीन वस्त्र लेने की भी मनाही है।

**प्रश्न ७. क्या साधु वस्त्र धो सकते हैं ?**

उत्तर—शोभा-विभूषा के निमित्त वस्त्र-पात्र आदि धोने का शास्त्र में निषेध है।<sup>२</sup>

**प्रश्न ८. साधु-साध्वी कितना वस्त्र रख सकते हैं ?**

उत्तर—सामान्यतया साधु तीन एवं साध्वियां चार पछेवड़ी (चद्दें) रख सकती हैं।<sup>३</sup> इसके सिवा पहनने, बिछाने, पात्र बांधने-पोंछने आदि के तथा पर्दा लगाने के वस्त्रों के भी शास्त्रों में नाम मिलते हैं। वृद्ध साधु-साध्वियों को कुछ अधिक वस्त्र रखने की भी आज्ञा है। कभी वस्त्र मर्यादा से अधिक हो जाए तो साधु उसे डेढ़ मास से अधिक अपने पास नहीं रख सकते। अधिक रखने वाले को प्रायश्चित्त आता है। (आचार्यादिक की भक्ति के लिए दूर देश से लाते समय तथा अन्य कारणवश वस्त्र अधिक होने की संभावना रहती है।)

**प्रश्न ९. साधु अधिक से अधिक कितना नया वस्त्र रख सकता है ?**

उत्तर—साधु-साध्वियां अधिक से अधिक ५९ हाथ नया वस्त्र रख सकते हैं।<sup>४</sup>

**प्रश्न ५. स्थविर मुनि (६० वर्ष वय प्राप्त) को कितना वस्त्र रखना कल्पता है ?**

उत्तर—एक सौ बीस हाथ।<sup>५</sup>

**प्रश्न ६. क्या साधु को ५९ हाथ से अतिरिक्त कितना नया वस्त्र रखना कल्पता है ?**

उत्तर—साढ़े अठारह हाथ कपड़ा—रस्तान, लूणा, मंडलिया, गलना, झोली, पल्ला, खेलियां आदि।<sup>६</sup>

**प्रश्न १०. साधु-साध्वियां शेष तथा चातुर्मास काल में पुराना कपड़ा कितना रख सकते हैं ?**

उत्तर—साधु शेष काल में १६ हाथ, चातुर्मास में २० हाथ। साध्वियां शेष काल में २०, चातुर्मास में २५ हाथ।<sup>७</sup>

१. आ. श्रु. २ अ. ५ उ. १/१४, २/१४

४. मर्यादावली चौथा प्रकरण(अ)वस्त्र ६

२. निशीथ १५/१५४

५. मर्यादावली चौथा प्रकरण(अ)वस्त्र ७

३. आ. श्रु. २ अ. ५ उ. १/३

६. मर्यादावली चौथा प्रकरण(अ)वस्त्र ७

प्रश्न ११. साधु अधिक से अधिक कितना वस्त्र एक साथ ओढ़ने के लिए प्रयुक्त कर सकते हैं ?

उत्तर—साधु ४५ हाथ तथा साध्वियां ६० हाथ से अधिक वस्त्र एक साथ ओढ़ने के लिए प्रयुक्त नहीं कर सकते।<sup>१</sup>

प्रश्न १२. साधु के चोलपट्टा व पछेवड़ी की लम्बाई-चौड़ाई कितनी होती है ?

उत्तर—चोलपट्टा लम्बाई पांच हाथ (एक हाथ २७ इंच अर्थात् साढ़े ६७ सेमी. के बराबर होता है) यानी तीन मीटर साढ़े ३७ सेमी. और चौड़ाई डेढ़ हाथ चार अंगुल (एक मीटर आठ सेमी.), पछेवड़ी लम्बाई पांच हाथ चौड़ाई तीन हाथ (दो मीटर ढ़ाई सेमी.) से अधिक न करें।<sup>२</sup>

प्रश्न १३. साधु-साध्वी क्या जोड़े हुए वस्त्र पहन सकते हैं ?

उत्तर—तीन खंड तक जोड़ सकते हैं अधिक नहीं।<sup>३</sup> इसी प्रकार वस्त्र फटने पर कारियां भी तीन से अधिक नहीं लगा सकते। वस्त्र की सिलाई भी साधु स्वयं करते हैं। गृहस्थ के पास सिलाने से प्रायश्चित्त आता है।

१. मर्यादावली चौथा प्रकरण(अ)वस्त्र २

३. मर्यादावली चौथा प्रकरण(अ)वस्त्र ५

२. मर्यादावली चौथा प्रकरण(अ)वस्त्र १

४. निशीथ ५/१२

## २३. पात्र आदि भण्ड उपकरण प्रकरण

**प्रश्न १. साधु कितने प्रकार के पात्र रख सकते हैं ?**

**उत्तर**—तीन प्रकार के पात्र रख सकते हैं—तुम्बा, लकड़ी एवं मिट्टी के।<sup>१</sup> इनके सिवाय प्लास्टिक के बर्तन उपयोग में लेने की परम्परा है। लोहा, तांबा, सीसा, चांदी, सोना, पत्थर एवं रत्न आदि के पात्र लेने का निषेध है।<sup>२</sup>

**प्रश्न २. साधु अपने पास कितने पात्र रख सकते हैं ?**

**उत्तर**—तीन पात्र रख सकते हैं। तीन पात्र रखने का विधान यद्यपि स्पष्टरूप से नहीं मिलता लेकिन व्यवहार २/२८ के वर्णन से तीन पात्र से अधिक न रखने की ध्वनि निकलती है। इसके अलावा प्रश्नव्याकरण १०/७ में पात्र ढंकने के तीन पटल-वस्त्र खंड कहे हैं, उनसे भी तीन पात्र रखने का संकेत मिलता है। (साध्वियां एवं वृद्ध साधु चार पात्र रख सकते हैं।<sup>३</sup>)

**प्रश्न ३. पात्रों के विषय में और क्या-क्या जानने लायक है ?**

**उत्तर**—पात्र के लिए दो कोस से आगे न जाना।<sup>४</sup> अगर जाए तो एक रात्रि रहे बिना वापस नहीं आना, पात्र के तीन से अधिक टुकड़े नहीं जोड़ना एवं तीन से अधिक बंधन न लगाना, साधु के लिए खरीदा पात्र न लेना, उसके परिमाण से अधिक वार्निस-रोगन न लगाना आदि-आदि बातें साधु के लिए विशेष ध्यान देने योग्य हैं।<sup>५</sup>

**प्रश्न ४. क्या साधु गृहस्थों के पात्रों में आहार कर सकते हैं ?**

**उत्तर**—थाली-लोटा-गिलास आदि गृहस्थों के पात्रों में साधु को खाना-पीना नहीं कल्पता।<sup>६</sup> गृहस्थों के बर्तनों में साधु खा-पी तो नहीं सकते लेकिन आवश्यकता होने पर अन्य कार्यों में उनका उपयोग करते हैं। जैसे—कांच की शीशी में दवा लाते हैं, खरल में दवा पीसते हैं, बर्तनों में वार्निस किये

१. आ. श्रु. २ अ. ६ उ. १ सू. १

(ख) आ. श्रु. २, अ. ६, उ. १, सू. ३

२. निशीथ ११/१

५. निशीथ १/४५, १४/१-२३-३४

३. मर्यादावली धर्मोपकरण ब

६. दसवे. ६/५२

४. (क) निशीथ ११/७

हुए पात्र सुखाते हैं। इसी प्रकार कुंडे आदि वस्त्रादि धोने के उपयोग में भी लिए जाते हैं।

**प्रश्न ११. वार्निश क्यों करते हैं ?**

उत्तर—कोरे लकड़ी पात्र में चिकने पदार्थ रखने से चिकनाई काष्ठ में पैठ जाती है, वह साफ नहीं होती। दूसरे दिन बासी होने के कारण साधु उसे काम में नहीं ले सकते, इसलिए उस पर वार्निश आदि लगाना आवश्यक है।

**प्रश्न १३. रजोहरण क्या काम आता है ?**

उत्तर—दिन में साधु देखकर चलते हैं। रात को अंधेरे में सूक्ष्म-जीव दिखाई नहीं देते तब पहले इससे जमीन परिमार्जन कर फिर पैर रखते हैं।

**प्रश्न १५. क्या दिन में अंधेरा हो, वहां भी रजोहरण परिमार्जन करते हैं ?**

उत्तर—हां, दिन हो या रात, जहां दिखाई न दे वहां परिमार्जन कर पैर रखते हैं।

**प्रश्न १६. क्या यह रजोहरण साधुओं के पास होता है ?**

उत्तर—हां, यह प्रत्येक साधु-साध्वी के पास अनिवार्य रूप से होता है। इसके बिना साधु ५ हाथ से अधिक दूर नहीं जा सकता।

**प्रश्न १८. रजोहरण जैसी एक छोटी-सी वस्तु और है, उसका क्या नाम है और वह क्या काम आती है ?**

उत्तर—इसे पूंजनी या प्रमार्जनी कहते हैं। रात में हाथ, पांव पसारते समय यह परिमार्जन के काम में आती है। पहले इससे प्रमार्जन कर फिर हाथ पैर आदि फैलाते हैं और बदलते हैं।

**प्रश्न १९. क्या रजोहरण व प्रमार्जनी का कुछ माप है ?**

उत्तर—रजोहरण की फलियां १०० से कम तथा २०० से अधिक नहीं होनी चाहिये तथा माप में। १२ अंगुल (२२ से. मी.) से अधिक लम्बी नहीं होनी चाहिए। प्रमार्जनी की फलियां ७२ से ज्यादा न हो तथा १२ अंगुल से लम्बी न हो।<sup>१</sup>

**प्रश्न २०. इसके भीतर जो लकड़ी की डंडी है उसका क्या माप है ?**

उत्तर—रजोहरण की डंडी ३२ इंच (८० से. मी.) प्रमार्जनी १५ इंच (३७।। से. मी.)।<sup>२</sup>

**प्रश्न २१. साधु रजोहरण (ओघा) क्यों रखते हैं ?**

उत्तर—रजोहरण वास्तव में जीवदया के लिए है। रात के समय इससे पूंजकर

१. मर्यादावली धर्मोप्रकरण स

३. (क) मर्यादावली धर्मोप्रकरण से

२. निशीथ ५/६८ से ७८

(ख) निशीथ ५/६८-७८

चलना परमावश्यक है। अच्छी तरह नहीं पूंजने वाले साधु के संयम में असमाधि उत्पन्न हो जाती है।<sup>१</sup>

**प्रश्न २२. साधु कितने प्रकार के रजोहरण रख सकते हैं?**

उत्तर—पांच प्रकार के रजोहरण रख सकते हैं—१. ऊन के २. ऊंट के रोम के ३. सण के ४. नरम घास के ५. कूटी हुई मूँज के।<sup>२</sup>

**प्रश्न २३. रजोहरण के विषय में और क्या जानने योग्य है?**

उत्तर—रजोहरण बहुमूल्य नहीं रखना चाहिए। उसकी दशाएं (तारें) अधिक पतली (जिसमें फंसकर जीव मर जाए) नहीं बनानी चाहिए। उसके ऊपर न बैठना चाहिए एवं न उसे सिर के नीचे रखकर सोना चाहिए। (जीव हिंसा की संभावना है)। प्रमाण से अधिक रजोहरण न रखना चाहिए<sup>३</sup> (एक साधु एक रख सकता है) तथा रजोहरण की दंडी पर वस्त्र लपेटकर रखना चाहिए, खुल्ली दंडी का रजोहरण नहीं रखना चाहिए।<sup>४</sup>

**प्रश्न २४. साधुओं के उपकरणों का विवेचन कीजिए?**

उत्तर—शास्त्रों में उपकरणों के नाम इस प्रकार मिलते हैं—प्रतिग्रह—पात्र, पात्रबंध—झोली, पात्रकेसरिक—पात्र पोंछने का वस्त्र, पात्र स्थापन—पात्र रखने का पाटला या मांडलिया, तीनपटल—गोचरी के समय पात्रों पर रखने के तीन वस्त्रखंड, रजस्त्राण—पात्र ढंकने का वस्त्र (रसतान), गोच्छक—पात्रादि साफ करने का वस्त्र<sup>५</sup>, तीनप्रच्छादक—ओढ़ने की तीन चदरें, रजोहरण—ओघा, चोलपट्टक—पहनने की धोती, मुखवस्त्रिका—मुंह पर रखने का वस्त्र (प्रश्नव्याकरण १०/७), गलना—जल छानने का, दण्ड तथा लकड़ी (कल्पसूत्र) सूत की डोरी, रज्जू—सण की रस्सी, चिलमिली—वस्त्र का पर्दा (निशीथ १/१४)। कम्बल, पाद-प्रोच्छन, पीठ-बाजोट, फलक-सोने का पट्टा, शय्या-संधारा (तृण आदि का) दशवै. अ. ४। साध्वियां चार संघाटी (चदरे) रख सकती है।<sup>६</sup>

**प्रश्न २५. क्या स्थविर साधु विशेष उपकरण रख सकते हैं?**

उत्तर—हां, स्थविरों के लिये विशेष उपकरण—१. दंड, २. भण्ड (उच्चारदिनिमित्त पात्र), ३. छत्र (कंबलादिक), ४. मात्रक—लघुशंकानिमित्त पात्र, ५. लष्टिक—

१. (क) समवाओ १०/१

(ख) दसाओ १/३

२. (क) स्थानां ५/३/१९१

(ख) बृहत्कल्प २/२६

३. निशीथ ५/६८ से ७८

४. निशीथ २/१

५. उत्तरा. २६/८

६. ओघ निर्युक्ति ६७५-६७७

पीठ-पीछे रखने का, ६. भिसिक-स्वाध्यायार्थ पाटला, ७. चेल-मस्तक बांधने का वस्त्र। ८. चेलचिलमिली-वस्त्र का पर्दा। ९. चर्म-पांव बांधने के लिये। १०. चर्मकोष-चर्म की कोथली (गुह्य रोगादि के लिये)। ११. चर्मखण्ड।<sup>१</sup>

**प्रश्न २७. पांच समितियां क्या हैं ?**

उत्तर-समिति का अर्थ है-सम्यक् प्रकार से प्रवृत्ति, पाप रहित (निरवद्य) प्रवृत्ति। समितियां पांच हैं-१. ईर्ष्या समिति- शरीर प्रमाण भूमि को देखकर मौनपूर्वक चलना। २. भाषा समिति-विचारपूर्वक बोलना। ३. एषणा समिति- शुद्ध भोजन-पानी का अन्वेषण करना। ४. आदानभण्डमत्त निक्षेप समिति-वस्त्र, पात्र आदि सम्यक् प्रकार से लेना व रखना। ५. उच्चार पासवण खेलजल्लसिंघाणपरिदुवणिया समिति-मलमूत्र आदि विधिपूर्वक विसर्जन करना। अभी ये शौच से निवृत्त होने के लिए जा रहे हैं। यह इनकी पांचवीं समिति है। पांचवीं समिति बोलचाल में पंचमी समिति कही जाती है।<sup>२</sup>

**प्रश्न २८. बिना आज्ञा के किसी स्थान पर पंचमी समिति का कार्य करना क्या चोरी नहीं है ?**

उत्तर-हां, आज्ञा के बिना किसी के स्थान को काम में लेना चोरी है। यदि स्थान का मालिक हो तो उनकी आज्ञा लेते हैं, मालिक ज्ञात न हो तो 'अणुजाणह जस्स उग्गहं' कहकर दिक्पाल (देवता) की आज्ञा लेते हैं।

**प्रश्न २९. क्या साधु वर्षा में भी शौच जा सकता है ?**

उत्तर-हां, वर्षा में साधु शौच जा सकता है।

**प्रश्न ३०. पानी में जीव हैं तो वर्षा में शौच जाना क्या हिंसा नहीं है ?**

उत्तर-शौच जाना आवश्यक है। शरीर का अनिवार्य कार्य है इसलिए उसे रोका नहीं जा सकता। इसीलिए वर्षा में भी शौच जाने का विधान है।

**प्रश्न ३१. मखवस्त्रिका क्यों बांधी जाती हैं ?**

उत्तर-अहिंसा की सूक्ष्म साधना के लिए।<sup>३</sup>

**प्रश्न ३२. इसका अहिंसा से क्या संबंध हैं ?**

उत्तर-जैन धर्म वनस्पति (हरियाली) की तरह वायु को भी सजीव मानता है। खुले मुंह बोलने से बाहर की वायु के जीवों की हिंसा होती है, इसलिए

१. व्यवहार ८/५

३. ओघनियुक्ति ७१२

२. उत्तरा. २४



मुख पर पट्टी रखते हैं। यह एक सभ्यता भी है कि बोलते समय दूसरों पर थूक नहीं उछले।

**प्रश्न ३४. मुंह पर न बांधे तो क्या कोई आपत्ति है ?**

**उत्तर—**नहीं, आपत्ति कोई नहीं है। खुले मुंह नहीं बोलना ऐसा नियम है। बोलते समय मुंह के आगे वस्त्र लगाने से एक हाथ रुक जाता है तथा स्खलना की संभावना भी रहती हैं। बोलने का काम पड़ता ही रहता है, इसलिए सुविधा के लिए मुंहपट्टी में डोरा डालकर बांध लेते हैं।

## २४. प्रतिलेखन प्रकरण

प्रश्न १. प्रतिलेखना से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर—अहिंसा महाव्रत की रक्षा के लिये अपने उपकरणों को विधिपूर्वक देखने का नाम पडिलेहणा (प्रतिलेखना) है।

प्रश्न २. प्रतिलेखना के कितने पर्याय है ?

उत्तर—प्रतिलेखना, आभोग, मार्गणा, गवेषणा, ईहा, अपोह, प्रेक्षण, निरीक्षण, आलोकन, प्रलोकन आदि।<sup>१</sup>

प्रश्न ३. प्रतिलेखन करने वाले मुनि कितने प्रकार के होते हैं ?

उत्तर—१ तपस्वी (उपवास आदि करने वाले) २. आहारार्थी।<sup>२</sup>

प्रश्न ४. प्रतिलेखना का क्रम क्या है ?

उत्तर—दोनों ही मुनि सर्वप्रथम मुखवस्त्र और उससे अपने शरीर का प्रमार्जन करें। तत्पश्चात् तपस्वी मुनि गुरु, अनशनधारी, ग्लान, शैक्ष, आदि के उपकरणों की प्रतिलेखना करते हैं। फिर गुरु की अनुज्ञा प्राप्त कर पात्र, मात्रक तथा अन्य उपधि और अंत में चोलपट्टक की प्रतिलेखना करें।

भक्तार्थी मुनि अपने चोलपट्टक, मात्रक, पात्र आदि की प्रत्युपेक्षा कर गुरु आदि कि उपधि की प्रत्युपेक्षा करते हैं। फिर गुरु से अनुज्ञापित कर शेष संधीय वस्त्र-पात्रों की प्रतिलेखना करते हैं और अंत में पादप्रोज्ज्ण (रजोहरण) की प्रत्युपेक्षा करे।<sup>३</sup>

प्रश्न ५. वस्त्र प्रतिलेखन करने कि विधि क्या है ?

उत्तर—वस्त्र-प्रतिलेखना की विधि इस प्रकार है—

१. उङ्कु—उत्कटुक आसन में बैठकर वस्त्र को तिरछा एवं जमीन से ऊंचा रखते हुए पडिलेहणा करनी चाहिए।

१. ओघनिर्युक्ति ३

३. ओघनिर्युक्ति ६२८-६३०

२. ओघनिर्युक्ति ६२८-६३०

२. थिरं—वस्त्र को मजबूती से स्थिर पकड़ना चाहिये।
३. अतुरियं—धीरे-धीरे तीन दृष्टि डालकर वस्त्र को देखना चाहिये।
४. पडिलेहे—वस्त्र के तीन भाग करके उसे दोनों तरफ से अच्छी तरह देखना चाहिये।
५. पप्फोड़े—देखने के बाद वस्त्र को यतनापूर्वक धीरे-धीरे झड़काना चाहिये।
६. पमज्जिज्जा—झड़काने पर भी यदि वस्त्र पर लगा हुआ जीव न उतरे तो उसे पूंजनी आदि से उतारना चाहिये।<sup>१</sup>

**प्रश्न ६. क्या प्रतिलेखन करना आवश्यक है ?**

**उत्तर—**आवश्यक ही नहीं परम-आवश्यक है। जो साधु जान-बूझकर अपने उपधि (वस्त्र-पात्रादि) को पडिलेहणा किये बिना रखता है उसे प्रायश्चित्त आता है।<sup>२</sup>

**प्रश्न ७. प्रतिलेखन किस समय करनी चाहिए ?**

**उत्तर—**सूर्योदय से करीब बीस मिनट पहले से लेकर सूर्य-उदय के बाद एक मुहूर्त दिन चढ़े तक प्रातः पडिलेहणा का समय है। उस समय गुरु को वन्दना करके उनकी आज्ञा लेकर पात्र, रजोहरण, वस्त्र आदि उपकरणों की प्रतिलेखन करना चाहिए।<sup>३</sup>

सूर्य उगने से पहले ही प्रकाश हो जाने पर अर्थात् हाथों की अंगुलियों के चक्र आदि दिखने पर प्रतिलेखना की जाती है, वह प्राचीन परम्परा है।<sup>४</sup> इसका आधार यह है कि सूर्य उगते ही आहार-पानी लेने की शास्त्र में आज्ञा है एवं पात्रों की पडिलेहणा किए बिना ले नहीं सकते अतः सूर्य उदय से कुछ समय पहले प्रकाश हो जाने पर प्रतिलेखना की जा सकती है।

प्रतिलेखना करने के बाद कम से कम पांच गाथाओं का स्वाध्याय अवश्य करना चाहिये।

तीन प्रहर दिन व्यतीत होने के बाद अर्थात् चौथे पहर में संध्या-पडिलेहणा का समय माना जाता है। उस समय गुरु को वन्दना करके उनकी आज्ञा लेकर प्रथम स्वाध्याय करके फिर मुख-वस्त्रिका, शय्या-बिछाने के वस्त्र आदि की प्रतिलेखना करनी चाहिए।

१. उत्तरा. २७/२४

२. निशीथ २/५६

३. उत्तरा. २६/२१ से २३

४. ओघ निर्युक्ति गा. २७०

**प्रश्न ८. प्रतिलेखना के दोष कौन-कौन से हैं ?**

**उत्तर—**प्रतिलेखना के सात दोष हैं—

१. प्रशिथिल—वस्त्र को ढीला पकड़ना।
२. प्रलम्ब—वस्त्र को विषमता से पकड़ने के कारण कानों को लटकाना।
३. लोल—प्रतिलेख्यमान वस्त्र का हाथ या भूमी से संघर्षण करना।
४. एकामर्श—वस्त्र को बीच में से पकड़कर उनके दोनों पाश्वर्कों का एक बार में ही स्पर्श करना—एक दृष्टि में ही समूचे वस्त्र को देख लेना।
५. अनेक रूप धुनना—प्रतिलेखन करते समय वस्त्र को अनेक बार (तीन बार से अधिक) झटकना अथवा अनेक वस्त्रों को एक साथ झटकना।
६. प्रमाण-प्रमाद—प्रस्फोटन और प्रमार्जन का जो प्रमाण (नौ-नौ बार करना) बतलाया है, उसमें प्रमाद करना।
७. गणनोपगणना—प्रस्फोटन और प्रमार्जन के निर्दिष्ट प्रमाण में शंका होने पर उसकी गिनती करना।<sup>१</sup>

**प्रश्न ९. प्रतिलेखन करते समय किन-किन बातों का ध्यान रखना चाहिए ?**

**उत्तर—**निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए।

१. अनर्तित—वस्त्र या शरीर कि न नचाए।
२. अवलित—वस्त्र या शरीर को न मोड़े।
३. अननुबन्धि—वस्तु की दृष्टि से अलक्षित विभाग न करें।
४. अमोसली—वस्त्र का मूसल की तरह दीवार आदि से स्पर्शन न करें।
५. छह पूर्व—वस्त्र के दोनों ओर तीन-तीन विभाग कर उसे झटकाएं।
६. नव खोटक—प्रत्येक पूर्व में तीन-तीन बार खोटक (प्रमार्जन) करे। भाग में नौ खोटक होते हैं। तत्पश्चात् जो कोई प्राणी हो, उसका हाथ पर नौ बार विशोधन प्रमार्जन करे।<sup>२</sup>

**प्रश्न १०. मुनि को भूमी की प्रतिलेखन कब और कौन कौन सी भूमी की करनी चाहिए ?**

**उत्तर—**मुनि को दिन की अंतिम पौरुषी का चतुर्थ भाग शेष रहने पर तीन भूमियों की प्रतिलेखन करनी चाहिए—१. उच्चारभूमी २. प्रस्रवण भूमी ३. काल (स्वाध्याय) भूमी।<sup>३</sup>

१. उत्तरा. २६/२७, भिक्षु आगम

३. (क) ओघ निर्युक्ति ६३२-६३४

२. उत्तरा. २६/२४, २५ श्रावृ. ५४०-५४१

(ख) भिक्षु आगम शब्द कोश

**प्रश्न ११. प्रतिलेखन में प्रमाद (कथा करना, बात आदि करना) करने से कितने काय की विराधना होती है ?**

**उत्तर—**जो मुनि प्रतिलेखन करते समय काम-कथा करना, जनपद कथा करना, प्रत्याख्यान करवाना, दूसरों को पढ़ना, स्वयं पढ़ना, बात करना आदि करने से वह छह कार्यों का विराधक होता है।<sup>१</sup>

**प्रश्न १२. छद्मस्थ और केवली की द्रव्य व भाव प्रतिलेखना क्या है ?**

**उत्तर—**प्राणियों से संसक्त वस्तु या असंसक्त विषयक होती है। यह छद्मस्थ की द्रव्य (बाह्य) प्रतिलेखना है पूर्व रात्री और अपर रात्रि में मुनि यह चिन्तन करे कि मैंने आज क्या किया है? और क्या करनीय शेष है जो तप आदि में कर सकता हूं क्या मैं उसे नहीं कर रहा हूं यह छद्मस्थ की भाव प्रतिलेखना है। प्राणियों से संसक्त वस्तु विषयक होती है। यह केवली की द्रव्य (बाह्य) प्रतिलेखना है। केवली आयुष्य कर्म को थोड़ा और वेदनीय आदि कर्मों को अधिक जानकर समुद्घात करते है वह केवली की भाव प्रतिलेखना है।<sup>२</sup>

१. (क) उत्तराध्ययन २६/२६-३०  
(ख) भिक्षु आगम शब्द कोश

२. (क) ओघ निर्युक्ति ५६, २५७, २५९, २६२  
(ख) भिक्षु आगम शब्द कोश

## २५. प्रातिहारिक प्रकरण

प्रश्न १. भोजन-पानी, वस्त्र, दवा आदि वस्तुएं साधु गृहस्थ के पास से बहरते हैं। जो बहरते हैं वह सब रख लेते हैं या वापस भी दे सकते हैं?

उत्तर—पाडिहारिय कहकर जो वस्तु लेता है, वह वापस भी दे सकता है।<sup>१</sup>

प्रश्न २. पाडिहारिय किसे कहते हैं?

उत्तर—यह जैन धर्म (संस्कृति) का पारिभाषिक शब्द है। साधु वस्तु लेते समय पाडिहारिय शब्द कहकर लेता है। उसका अर्थ है—जितनी आवश्यकता होगी उतनी लूंगा शेष वापस दे सकता हूं।<sup>२</sup>

प्रश्न ३. साधु कौन-सी वस्तुएं पाडिहारिय रूप में ले सकता है?

उत्तर—खाने-पीने की वस्तुओं को छोड़कर वस्त्र, दवा, घास, कागज, कॉपियां, पेंसिल, मकान आदि सब पाडिहारिय होती हैं। आवश्यकता अनुसार पास में रखता है, आवश्यकता न हो तो वापस दे सकता है।

प्रश्न ४. जिस दिन पाडिहारिय वस्त्र जांचते हैं उसी दिन वह वापस देते हैं या दूसरे दिन भी वापस दे सकते हैं?

उत्तर—जिस दिन वस्त्र जांचते हैं उसे सूर्यास्त से पहले-पहले गृहस्थ को वापस देना होता है। यदि रात भर वह साधु के पास रह जाए तो दूसरे दिन वापस नहीं दे सकता।

प्रश्न ५. पाडिहारिय वस्तु साधु जांचता है वह उसी व्यक्ति को वापस देता है या दूसरे व्यक्ति को संभला (दे) सकता है?

उत्तर—जिसकी वस्तु हो उसी को देना चाहिए। वह यदि कह दे कि आप अन्य किसी को संभला दें तो वह वस्तु दूसरे को भी दी जा सकती है।

प्रश्न ६. क्या साधु छपी हुई पुस्तकें, चश्में, पेंसिल आदि वापस दे सकता है?

१. स्थानांग ५/२/१०२ टि. ६६

२. स्थानांग ५/२/१०२ टि. ६६

उत्तर—हां, दे सकते हैं, क्योंकि ये पाडिहारिय वस्तुएं हैं।

**प्रश्न ७. क्या साधु सूई-कैंचो आदि ले सकते हैं?**

उत्तर—वस्त्र आदि सीने या नख आदि काटने के लिए आवश्यकता होने पर सूई-कैंची नेलकट्टर आदि गृहस्थों के यहां से विधिपूर्वक लाते हैं एवं काम संपन्न कर वापस दे आते हैं। सूई कैंची आदि शस्त्र गृहस्थ के हाथ से लेने-दने की विधि नहीं है।



## मुनि रजनीश कुमार

- जन्म — मृगसर कृष्णा सप्तमी, सं. २०३०,  
बायतू (जिला—बाड़मेर) राजस्थान
- दीक्षा — कार्तिक कृष्णा सप्तमी, सं. २०५१,  
२७ अक्टूबर १९९४, दिल्ली,  
अध्यात्म साधना केन्द्र महरौली
- साझपति — माघ शुक्ला चतुर्दशी सं. २०६५,  
८ फरवरी २००९, बीदासर
- अध्ययन — एम.ए (जैन दर्शन)
- रुचि — स्वाध्याय, तत्त्वज्ञान, आगम पठन, सेवा आदि।
- यात्रा — राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, हरियाणा, पंजाब  
(चण्डीगढ़), दिल्ली, उत्तर प्रदेश, दमन
- प्रकाशित कृति — रहस्य भिक्षु के (हिन्दी-गुजराती) जय प्रश्न निर्झर,  
साधवाचार के सूत्र पारिवारिक दीक्षित—साध्वी धवलप्रभा  
(संसारपक्षीय बहिन)



### जैन विश्व भारती

पोस्ट : लाडनू-३४१३०६ जिला : नागौर (राज.)

फोन नं. : (०१५८१) २२२०८०/२२४६७१

ई-मेल : [jainvishvabharati@yahoo.com](mailto:jainvishvabharati@yahoo.com)

Jain Education International

For Private & Personal Use Only



9 788171 951680

₹ 70/-

[www.jainelibrary.org](http://www.jainelibrary.org)